राष्ट्रीय गीत

वन्दे मातरम्

वन्दे मातरम् ।

सुजलाम् सुफलाम् मलयज शीतलाम्

शस्यश्यामलाम् मातरम् ।।वन्दे.।।

शुभ्र ज्योत्स्ना-पुलकित यामिनीम् ,

फुल्ल कुसुमित-द्रुमदल-शोभिनीम् ,

सुहासिनीम् सुमधुर भाषिणीम् ,

सुखदाम् वरदाम् मातरम् ।।वन्दे.।।





आत्मा से परमात्मा




जी हाँ हम भी






मृत्यु को जीत सकते हैं





卐 रोग का नाश करने के लिए जैसे औषधि का बार-बार सेवन करना पड़ता है, वैसे ही आत्मा के राग-द्वेष आदि अंतरग दोषों का नाश करने के लिए इस मृत्यु शास्त्र का बार-बार स्वाध्याय (मनन) करे। 卐

संकलन एवं सम्पादन — **समरथमल संघवी**, 'अर्हन्त भक्त'

प्रकाशक
समरथमल संघवी
संघवी बुक स्टॉल
230, खजूरी बाजार,
म गां मार्ग, इन्दौर (म प्र)
✆ 431680 / 534051

संस्करण : प्रथम
सन् [illegible]
विक्रम संवत् : 2059
वीर संवत् : 2529

प्रेरक ·
वर्तमान परिस्थितियाँ

मुद्रक ·
अजीत प्रिन्टर्स, इन्दौर

टाइप सेटिंग ·
संघवी प्रिन्ट-ओ-ग्राफिक्स

आशीर्वाद
प.पू. साधु-साध्वी भगवंत

छपाई मे सहयोग
स्नेही स्वजन

प्राप्ति स्थान :
संघवी बुक स्टॉल
230, [illegible], इन्दौर
✆ . 431680 / 534051
* * *
कनकमल संघवी
संघवी प्रकाशन
648, [illegible], इन्दौर
✆ . 450430 / 450617
* * *
संघवी डिस्ट्रीब्यूटर्स
603, [illegible], इन्दौर
✆ 450063 / 451073
* * *
संघवी स्टोर्स :
बदनावर, धार, उज्जैन,
खरगोन, देवास
एवं
आपके शहर का
प्रमुख बुक स्टॉल

अल्प मूल्य : **20/-** (बीस रुपये मात्र)

संकल्प : *इस पुस्तक के निर्माण मे स्नेही-स्वजनो ने परमार्थ की भावना से तन-मन-धन से सहयोग दिया है। अत इस पुस्तक की विक्री से जो भी राशि प्राप्त होगी, वह अभावग्रस्त परिवारो की शिक्षा, चिकित्सा एव वृद्ध तथा विधवाओ की जरूरत मे ही खर्च की जायेगी।*

आधार ग्रन्थों की सूची

पुस्तक का नाम	रचयिता
* मृत्यु-बोध * क्रांतिकारी सूत्र * दु:खो से मुक्ति कैसे?	प पू मु [illegible]
* क्रोध को कैसे जीते? * मै जगाने आया हूँ	" " " " "
* मृत्यु महोत्सव	प पू मु श्री [illegible]
* आनन्दवाणी	प पू आचार्य श्री [illegible]
* धर्म का कल्पवृक्ष जीवन के आंगन मे	प पू अध्यात्मयोगी [illegible] श्री पुष्कर मुनिजी [illegible] [illegible] आचार्य सम्राट श्री [illegible]
* उठो! जागो ○ चिन्तन सुख	जिन शासन [illegible] श्री [illegible]
* बोधिदा, अध्यात्म नवनीत	प पू [illegible]
* प्रवचन-प्रभा	[illegible]
* जैन दिवाकर - ज्योतिपुज भाग १ से ६	प पू [illegible]

卐 अपनों से अपनी बात 卐

मृत्यु के नाम से मानव के रौंगटे खडे हो जाते हैं। **ससार का प्रत्येक प्राणी जीवित रहने की इच्छा रखता है,** मरना कोई नही चाहता। भले ही एक दिन अत्यन्त दु ख के साथ मृत्यु का शिकार होना पडता है। कर्म प्रकृति का अटल नियम है कि जो जन्मा है, वह मरेगा ही। मृत्यु तो जन्म के साथ ही जुड जाती है और परछाई की भॉति साथ-साथ चलती है। दु ख इस बात का है कि मानव इसे स्मरण नही रखता। भय के कारण लोग इसे जानते हुए भी अनजान से बने रहते है।

वैसे तो मृत्यु पर अनेक ज्ञानी, सन्त-महापुरुषो ने कई छोटे-बडे ग्रन्थो की रचना कर ससार पर महान उपकार किया है। बादलो के पानी और सन्तो की वाणी पर प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार होता है। सभी उससे लाभ उठा सकते है। इसी भावना से प्रेरित होकर उन्ही की सामग्री मे से मैने एक-एक, दो-दो मोती चुनकर इस पुस्तक माला मे पिरोने का प्रयास किया है।

मृत्यु को जानना ही जीवन का मर्म पाना है। मृत्यु सुनिश्चित है। जीवन मिला है, तो जीवन मे धन, पद, प्रतिष्ठा मिले, कोई जरूरी नही, किन्तु मृत्यु अवश्य मिलती है। जब मृत्यु निश्चित है, तो उससे डरने की जरूरत नही। **मृत्यु अमृत है,** उससे ही जीवन का प्रादुर्भाव होता है। **मृत्यु एक मदिर है, जिसमे जीवन का देवता विराजित है।**

एक महान चिन्तक ने कहा है – **'मृत्यु जीवन का सबसे बड़ा शास्त्र है।'** इसे पढे बगैर जीवन-मुक्ति सभव नही। मुनि भगवत भी कहते हैं – **'जीवन में एक ही शास्त्र पढने जैसा है और वह है – मृत्युशास्त्र।'** दुनिया के तमाम शास्त्र पढ़ डालो, गीता पढ़ लो, रामायण पढ़ लो, कुरान पढ़ लो, वेद-पुराण पढ़ लो, बाइबिल पढ़ लो, पर जीवन का सत्य समझ मे आ जाये, ऐसा कोई जरूरी नही हैं, किन्तु मृत्यु-शास्त्र पढ़ लेने के बाद जीवन का यथार्थ अपने-आप समझ मे आ जाता है। **मृत्यु का स्वाध्याय जिन्दगी का असली स्वाध्याय है।** मृत्यु का शास्त्र पढ़ लेने के बाद दुनिया के तमाम शास्त्रो के रहस्य स्वत· ही समझ मे आ जाते है। **इसलिए मृत्यु को भुलाकर नहीं, अपितु मृत्यु को स्मृति में रखकर जीएँ। मृत्यु से डरकर नहीं, अपितु लड़कर जीएँ।**

मृत्यु क्या है? इसको समझे, इससे पहले यह समझ ले कि जिन्दगी क्या है? क्योकि दुनिया मे अनेक लोग ऐसे भी हैं, जो जिन्दा हैं, लेकिन उन्हे पता ही नही है कि वे क्यो जी रहे हैं? उनके जीने का क्या उद्देश्य है? हर मानव के जीने का एक पवित्र उद्देश्य होना चाहिए। मानव जीवन परमात्मा द्वारा प्रदत्त एक उपहार है। इस उपहार का उपहास न हो , ऐसा जीवन जीना चाहिए।

मनुष्य जीवन का फूल भाग्य की किसी महान अनुकम्पा से व पुण्य से खिलता है। बडे श्रम और भाग्य से इस फूल की पखुडियाँ खिला करती हैं। हम अपने आसपास यही देखते हैं कि मनुष्य जन्म लेता है, पलता है, बढ़ता है, परिश्रम करता है, सघर्ष करता है, कचन कामिनी प्राप्त करता है, ऐश-आराम, मौज-मस्ती करता है और फिर अपने

बनाये-बसाये ससार को छोडकर एक दिन मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। लोग इसी लीक पर चलते हैं। कोई आराम से गुजर रहा है, तो कोई कठिनाई से।

व्यक्ति क्यों जी रहा है? धन कमाने के लिये! क्या सोच है लोगो की? दुनिया धन कमाती है, तो मुझे भी धन कमाना। दुनिया खाती है, तो मुझे भी खाना। दुनिया भोगो मे लिप्त है, तो मुझे भी भोगो मे रमण करना। जो दुनिया का होगा, सो मेरा भी हो जायेगा। **यह दृष्टि सही नहीं है, मूढ़ दृष्टि है। हमें दुनिया का अन्ध अनुसरण नहीं करना है।**

अब सवाल यह है कि क्या यही शुभ-श्रेष्ठ और सुखपूर्ण जीवन है? यदि ऐसा ही है, तो जानवर और इन्सान मे कोई फर्क नही है। **ज़िन्दगी एक सरिता है**, जो बहती जा रही है। बहते-बहते सागर मे मिल जायेगी। विलीन होने से पूर्व अपने आपको पहचान लो – **मै कौन हूँ? मेरा क्या है? मैं कहाँ से आया हूँ? और मरकर मैं कहाँ जाऊँगा?** शरीर, मन और पाँचो इन्द्रियाँ जीवन की उपलब्धि अवश्य हैं, पर वह मिट्टी के दीये से ज्यादा नही है। उस दीये से ऊपर भी अपनी नजरे उठाये, जहाँ लौ, माटी के दीये को प्रकाश मे भिगो रही है। ज्योति का आकाश की ओर उठना ही चेतना (आत्मा) का ऊर्ध्वारोहण है। **ज्योति की पहचान से बढ़कर जीवन का कोई बेहतरीन मूल्य नहीं है। मर्त्य में अमर्त्य की पहचान ही अमृत स्नान है।**

जब तक मनुष्य बाह्य परिस्थितियो मे उलझा हुआ रहता है, तब तक वह आत्म-चिन्तन नही कर सकता है। बाह्य परिस्थितियो की विसंगतियाँ तो चलती ही रहेगी। अनुकूलता-प्रतिकूलता का चक्र तो जीवन-पर्यन्त चलता ही रहेगा, तो फिर आत्मा के इष्ट अनिष्ट का चिन्तन कब करेगे? **बिना धर्म चिन्तन के व्रत-नियमों की महत्ता कैसे समझ पायेंगे? जिन्दगी में धर्म-ध्यान की किरण तो होनी ही चाहिये।** जिन्दगी मे परम उत्साह होना चाहिए। मैत्री, प्रेम और सद्‌भावना के फूल तथा जीवन के वृक्ष पर परमात्मा और सत्य के फल जरूर होने चाहिये। **फूलों का सार 'इत्र' है और जीवन का सार 'चारित्र' है। जिसने 'इत्र' बटोर लिया, उसने ज्ञान पा लिया और जिसने 'चारित्र' बटोर लिया, उसने भेद-विज्ञान पा लिया।**

जिन्दगी बेशक एक यात्रा है, जिसमें चलना ही चलना है। मनुष्य की जिन्दगी एक अवसर है – स्वयं (आत्मा) को पहचानने का, स्वयं के होने का और स्वयं को पाने का। क्योंकि मनुष्य होकर ही स्वयं को पाया जा सकता है, परमात्मा हुआ जा सकता है। जिन्दगी मे तो अनन्त की सम्भावना है। इसमे अनन्त शक्तियाँ छिपी हैं, असंख्य दिव्यताएँ मौजूद हैं। अपनी इन सम्भावनाओ, शक्तियो और दिव्यताओ को पहचानना और उन्हे साकार करना ही जिन्दगी का असली मकसद है, किन्तु दुर्भाग्य है कि इस देश का आदमी साढ़े तैंतीस करोड देवी-देवताओ (हिन्दू धर्म की मान्यतानुसार) के अस्तित्व पर तो विश्वास कर लेता है, लेकिन अपने मे जो एक जीवित परमात्मा (आत्मा) है, उस पर विश्वास नहीं कर पाता है। 'मैं भी भव्य परमात्मा स्वरुप हूँ, मुझमें भी भव्य परमात्मा मौजूद है' ऐसी श्रद्धा जगा नही पाता और **इसी कारण से वह पुजारी तो बना रहता है, लेकिन पूज्य नहीं बन पाता है।**

मृत्यु क्या है? शरीर से जीव का निकल जाना ही मृत्यु है। पिंजरे से पक्षी के उड़ जाने का नाम ही मृत्यु है। मृत्यु भय की नहीं, शिक्षा की वस्तु है। मृत्यु से भय खाने वाले मनुष्य ने कभी सोचा है, यदि मृत्यु नही होती, तो ससार का क्या हाल होता? नित नई सुबह मे खिलने वाला पुष्प कभी मुरझाता नही, तो उपवन की दशा क्या होती? विभिन्न जल-स्रोतो मे प्रवाहमान जल यदि कभी सूखकर क्षीण नही होता, तो पृथ्वी की क्या स्थिति होती? स्टेशन पर यात्री एकत्र ही होते रहते, कोई वहाँ से जाता नही, तो सोचो! वहाँ तिल रखने की भी जगह मिलती क्या?

जीवन एक यात्रा है, मृत्यु एक पड़ाव! जब तक मजिल नही आ जाती, तब तक जीवन-मृत्यु के चरण निरन्तर पथ की दूरी नापते चले जायेगे।

जीवन एक नाटक है, मृत्यु एक पटाक्षेप! फिर नाटक। फिर पटाक्षेप! जब तक अभिनय समाप्त नही हो जाता, नाटक मे पटाक्षेप का क्रम टूटेगा नही।

मृत्यु, भय और आतंक नहीं है। यह तो सृष्टि की सुरक्षा, सौन्दर्य और सरसता का अन्तरिम कारण है। मानव के लिए मृत्यु सबसे बड़ा उपदेशक है। मृत्यु तो कसौटी है, इस तथ्य को परखने की, कि कौन अपना है और कौन पराया? सुख को बाँटकर भोगा जाता है, मगर दुःख भोगने के लिए तो मनुष्य अकेला है, मात्र अकेला। मौत की डोली अकेले के लिए ही आती है। पर जिसने इस विज्ञान को आत्मसात् कर लिया कि यह जो शरीर है, वह 'मैं' नही हूँ। यह मकान, धन-दौलत, पति-पत्नी, बच्चे सभी नाते-रिश्ते मेरे अपने नही हैं। अज्ञान एव मोहवश मैंने इन्हे अपना मान रखा है। 'मैं' तो विशुद्ध 'आत्मा' हूँ। अजर-अमर हूँ। ज्ञान-दर्शन और चारित्र आदि मेरे गुण हैं। अग्नि मुझे जला नही सकती, पानी मुझे गला नही सकता, पवन मुझे उडा नही सकता, शस्त्र से देह का छेदन हो सकता है, मेरा नही। मैं अविनाशी हूँ। आत्मा की सारी अशुद्धियाँ कर्मजन्य हैं। आत्मा ही कर्म की कर्ता है और आत्मा ही कर्म की भोक्ता है। इसी से इस ससार का क्रम चल रहा है। इसे समझना होगा, तभी मजिल तक पहुँच सकते हैं।

इस पुस्तिका के मेटर को प.पू साधु-सन्तो एव महापुरुषो के ग्रन्थो से चुनने मे अथवा इस मेटर के रचयिता का नाम न दे पाने अथवा मुद्रण आदि मे कोई त्रुटि रह गई हो, कही परिवर्तन आदि किये हो या रचयिता की स्वीकृति प्राप्त करना रह गई हो तो इस भूल के लिए मैं सच्चे मन से विनय पूर्वक क्षमा याचना करता हूँ।

आपके अमूल्य सुझाव सादर आमन्त्रित हैं।

प्रस्तुत पुस्तक के संशोधन-संवर्धन मे मुझ लोहे के साथ प.पू. गीतार्थ भगवत श्री पारस मुनि. म.सा. का पारसमणि जैसा संयोग मिला, जो सदा स्मरणीय रहेगा।

अत मे, मैं अपनी एक हार्दिक इच्छा को प्रगट कर अपनी बात को यही विराम देता हूँ कि इस छोटी-सी पुस्तिका के पढ़ने से पाठको के हृदय, मृत्यु से भय की बजाय शिक्षा ग्रहण करेगे और वे जीने की कला सीखने को आतुर बनेगे। आत्मोत्कर्ष के मार्ग पर अग्रसर होगे, ऐसी भावभरी मगल कामना।

— समरथमल संघवी 'अर्हन्त भक्त'

अनुक्रम : कहाँ क्या है?

विषय	पृष्ठ संख्या
प्रार्थना। पच परमेष्ठि वन्दना	९
मेरी भावना	१०
नीद छोटी मृत्यु और मृत्यु बडी नीद	१२
मृत्यु क्या है और मुझे क्या करना है?	१५
मृत्यु और उसका स्वरूप	१६
ऐसा कोई घर नही जहाँ कभी मृत्यु ने	१९
श्मशान से मृत्यु-बोध	२०
अनमोल वाणी	२३
राम नाम सत्य है। अरिहन्त नाम सत्य.	२४
ईमानदारी की लौ	२५
मृत्यु को जीतने की कला	२६
मृत्यु रोग है, तो जन्म भी रोग है	२८
जीवन निर्माण की संजीवनी बूटी–विनय	२८
सहिष्णुता। समभाव की पूजा	२९
घर मे ही वैरागी.	३२
जीने की कला	३४
गागर मे सागर	३७
जन्म-मृत्यु का मूल कारण - राग-द्वेष.	३९
राग-द्वेष (१) क्रोध	४०
राग-द्वेष - (२) मान	४७
राग-द्वेष (३) माया	५१
राग-द्वेष (४) लोभ	५३
झरोखा	५५
इन्द्रियाँ पाँच.	५७
मन और उसका निग्रह	६६
देह राग और ममत्व	७२
मृत्यु से कैसे बच सकता हूँ?	७३
आचार-विचार	७४
मानवता की पुकार	७६
निहारिका	७९
जीवन का सत्य वासना नही, साधना है.	८०
कर्तव्य-निष्ठा	८१
प्रेम की आभा	८३
जीवन का अमूल्य धन-समय	८५
हमारा शरीर भाड़े का ही घर है	८७
आत्म धन	८७
तमसो माऽज्योतिर्गमय - मृत्योर्मा	८८
परोपकार की महिमा.	८९
संसार का वास्तविक स्वरूप क्या है?	९१
शरीर के प्रति कैसा अभिमान?	९१
सुगन्धित बनो	९२
बिन्दु मे सिन्धु	९३
युवक ने योजना रद्द की	९४
शरीर मरण धर्मा है	९५
जिन्दगी का मूल लक्ष्य जीविका नही	९६
महावीर, बुद्ध, राम अब चौराहे पर	९८
गीता-सार	९९
क्रातिकारी-सूत्र	१००
प्रगाढ़ श्रद्धा-दृढ़ विश्वास	१०२
विवाह करूँ या नही? - एक चिन्तन	१०५
भगवान से क्या माँगू?	१०९
आत्म-चिन्तन - कब, क्या, कैसे?	११०
कमाएँ नीति से, खर्च करे रीति से	११२
नशे से सावधान	११३
ऋषि-मुनियो की इस धरती पर कभी	११४
सादगी की अनूठी मिसाल	११५
घर एक पाठशाला है	११५
ये कितने दूध के धुले हैं?	११६
संन्यासी को चारित्र बोध यूँ हुआ!	११७
सन्तोष, सुख का कारण, असन्तोष	११७
हाय री शराब	११८
वाणी का सौन्दर्य	११९
सुवासित पुष्प	१२०
प्रभु-भजन	१२१
आत्म-भजन	१२२
आत्म-गीत	१२३
ममत्व को तोड़ना है	१२३
आत्म-बोध	१२४
उसी को मिलते हैं - भगवान	१२४
उपसंहार	१२५

प्रार्थना

हे प्रभो आनन्ददाता, ज्ञान हमको दीजिये।
शीघ्र सारे दुर्गुणो को, दूर हमसे कीजिये।। ----------(हे प्रभो)
लीजिये हमको शरण मे, हम सदाचारी बने।
ब्रह्मचारी, धर्मरक्षक, **वीरव्रतधारी** बने।। -------(हे प्रभो)
हिन्द मे पैदा हुए, हिन्द की सन्तान है।
हिन्द के खातिर मरे, वरदान ऐसा दीजिये।। ---------(हे प्रभो)
रहम का दरिया बहे, दिल मे हमारे रात-दिन।
फिर तुम्हे भूले नही, सद्ज्ञान ऐसा दीजिये।। --- (हे प्रभो)

प्रार्थनाः प्रार्थना आत्मा का संगीत है। आत्मा को परमात्मा का प्रकाश देने वाली प्रार्थना है। प्रार्थना का जीवन में वही स्थान है, जो मछली के लिए पानी का। प्रार्थना एक आध्यात्मिक व्यायाम है। प्रार्थना आत्मा का भोजन है। प्रार्थना सन्त जीवन का अमृत है। असत्य से सत्य की ओर जाने का अहंकार रहित होकर प्रयत्न करना ही प्रार्थना है। प्रार्थना अंतःकरण का स्नान है, स्फूर्ति और बल है।''

पंच परमेष्ठि वन्दना

अर्हन्तों को नमस्कार
श्री सिद्धों को नमस्कार
आचार्यों को नमस्कार
उपाध्यायों को नमस्कार

जग में जितने साधुगण हैं, मैं सबको वन्दूँ बार-बार। --- अर्हन्तों को!

ऋषभ-अजित-सम्भव-अभिनन्दन, सुमति-पद्म-सुपार्श्व जिनराय ।
चन्द्र-सुविधि-शीतल-श्रेयांस जिन, वासुपूज्य पूजित सुरराय।
विमल-अनन्त-धर्म जस उज्ज्वल, शांति-कुंथु-अर-मल्लि मनाय ।
मुनिसुव्रत-नमि-नेमि-पार्श्व प्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ।
चौबीसो के चरण कमल मे, मेरा वन्दन बार-बार ।।
जिसने राग द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया ।
सब जीवो को मोक्ष मार्ग का, निःस्पृह हो उपदेश दिया ।
बुद्ध, वीर, जिन, हरि हर ब्रह्मा, या जिनेन्द्र हो या अवतार ।
सबके चरण कमल मे, मेरा वन्दन होय बारम्बार।। - - - - अर्हन्तो को

प्रार्थना – मेरी भावना

(१)

जिसने राग द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया।
सब जीवो को मोक्ष मार्ग का, निःस्पृह हो उपदेश दिया।।
बुद्ध, वीर, जिन, हरिहर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी मे लीन रहो।।

(२)

विषयो की आशा नही जिनके, साम्य-भाव धन रखते है।
निज-पर के हित-साधन मे जो, निश-दिन तत्पर रहते है।।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते है।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं।।

(३)

रहे सदा सत्संग उन्ही का, ध्यान उन्ही का नित्य रहे।
उन्ही जैसी चर्या मे यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे।।
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नही कहा करुँ।
परधन-वनिता* पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करुँ।।

(४)

अहंकार का भाव न रक्खूँ, नही किसी पर क्रोध करुँ।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या-भाव धरुँ।।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल, सत्य व्यवहार करुँ।
बने जहाँ तक इस जीवन मे, औरो का उपकार करुँ।।

(५)

मैत्री-भाव जगत मे मेरा, सव जीवो पर नित्य रहे।
दीन-दुःखी जीवो पर मेरे, उर से करुणा-स्रोत बहे।।
दुर्जन-क्रूर-कुमार्ग रतो पर, क्षोभ नही मुझको आवे।
साम्यभाव रक्खूँ मै उन पर, ऐसी परिणति हो जावे।।

(६)

गुणी जनो को देख हृदय मे, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।।
होऊँ नही कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषो पर जावे।।

* दोहा क्र ३ मे महिलाएँ 'वनिता' के स्थान पर 'पुरुषों' बोलें।

(७)

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखो वर्षो तक जीऊँ, या मृत्यु आज ही आ जावे।।
अथवा कोई कैसा भी भय, या लालच देने आवे।
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा, कभी न पथ डिगने पावे।।

(८)

होकर सुख मे मग्न न फूले, दुःख मे कभी न घबरावे।
पर्वत-नदी-श्मशान-भयानक, अटवी से नही भय खावे।।
रहे अडोल अकम्प निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग मे, सहनशीलता दिखलावे।।

(९)

सुखी रहे सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
वैर पाप अभिमान छोड जग, नित्य नए मंगल गावे।।
घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत-दुष्कर हो जावे।
ज्ञान-चरित्र उन्नत कर अपना, मनुज-जन्म फल सब पावे।।

(१०)

इति भीति व्यापे नही जग मे, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्मनिष्ट होकर शासक भी, न्याय जनता का किया करे।।
रोग, मरी, दुर्भिक्ष न फैले, जनता शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत मे, फैल सर्वहित किया करे।।

(११)

फैले प्रेम परस्पर जग मे, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नही, कोई मुख से कहा करे।।
बन कर सब 'युग वीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करे।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुःख संकट सहा करे।।

卐 गायत्री महामन्त्र 卐

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुवरिण्यं भर्गोदेवस्य।
धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ।।नमः।।

भावार्थ - उस प्राण स्वरूप, दुःख नाशक, सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पाप नाशक, देव स्वरूप परमात्मा को हम अन्तरात्मा मे धारण करे। वह 'परमात्मा' हमारी बुद्धि को सन्मार्ग मे प्रेरित करे।

नींद छोटी मृत्यु और मृत्यु बड़ी नींद

मनुष्य का जीवन कैसा होना चाहिए? उसकी जीवन शैली कैसी होनी चाहिए? इस बावद ज्ञानी संत-मुनि कहते है – **'न्यूनतम लेना, अधिकतम देना और श्रेष्ठतम जीना।'** यही जीवन शैली मृत्यु को मंगल रूप प्रदान करती हैं। मृत्यु के शास्त्र को सुबह-शाम पढ़े, क्योकि **मृत्यु-बोध से ही जीवन सँवरता है। मृत्यु के स्मरण से ही मन, पापों से बचता है। मृत्यु के ख्याल से ही वैराग्य का पौधा पनपता है।**

नीद क्या है? नींद मृत्यु का ही तो एक रूप है। मनुष्य छः-आठ घण्टे की नींद मे बाहर की दुनिया से टूट जाता है, अतः नीद मृत्यु का पूर्वाभ्यास हे और मृत्यु चिरनिद्रा! एक महान चिन्तक के शब्दो मे यो कहिये कि **नींद छोटी मृत्यु है और मृत्यु बड़ी नींद है।** आदमी कितनी खटपट करता है, कितनी उठापटक करता है, कितने उपद्रव। झंझटे खडी करता है, कितना लडता और झगडता है। ये लडाई-झगड़े तभी तक है, जब तक आँख खुली है। **ये घर-मकान, धन-दौलत तभी तक है, जब तक आँख खुली है। आँखें मूंदते ही सब कुछ लुट जाता है। सारे झगड़े नष्ट हो जाते हैं। शत्रु-मित्र, अपने-पराये सभी खो जाते हैं।**

कथानक – 'रात के दस बजे का समय है। माँ अपने बच्चो, पप्पू और पिंकी से कहती है – बेटा! सोने का समय हो रहा है। चलो उठो, कमरे मे जाकर चुपचाप सो जाओ।' माँ के कहने पर बच्चे कमरे मे जाकर बिस्तर पर लेट जाते हैं और लेटने के दो मिनट बाद ही पप्पू और पिंकी मे झगडा शुरू हो जाता है। माँ उनका शोरगुल सुनकर कमरे मे पहुँचती है और पूछती है – 'क्या हुआ? क्यो झगड़ते हो? मैंने सोने को कहा था या झगडने को?' तो पप्पू कहता है – 'मम्मी! यह तकिया मैं लूँगा।' तभी पिंकी कहती है– 'नही मम्मी! यह तकिया मै लूँगी।' तकिया एक है और उसको चाहने वाले दो। पप्पू कहता है कि – 'मै लूँगा। यह तकिया मै किसी भी हालत मे नही दूँगा', तो पिंकी कहती है कि 'मैं इसको लेकर ही रहूँगी।' माँ कहती है – 'झगड़ो मत! मैं एक तकिया और देती हूँ' और माँ एक तकिया लाकर दे देती है। झगड़ा खत्म हो जाता है। लेकिन दो मिनट बाद ही फिर दूसरा झगडा शुरू हो जाता है। माँ फिर आकर पूछती है– 'अब क्यो झगड़ते हो?' तो पप्पू कहता है कि – 'मम्मी! यह चादर मुझे नही देती है। इसे अपनी तरफ खींचती है।' तो पिंकी कहती है कि – 'मम्मी! मम्मी! भैया यह चादर मुझे नहीं ओढ़ने देता है।' माँ कहती है – 'अभी तकिया को लेकर झगडते थे। अब चादर को लेकर झगड़ने लगे। खैर, कोई बात नही। डोन्ट वरी! मै एक चादर और लाकर देती हूँ।'

अब दोनो का अपना-अपना तकिया, अपनी-अपनी चादर और आधा घण्टे के बाद पप्पू को नीद आ जाती है, उधर पिंकी को भी नींद आ जाती है। दोनो सो गये हैं। इसकी टाँग उसके ऊपर, उसकी टाँग इसके ऊपर। इसकी चादर उसके सिर पर और उसकी चादर इसके ऊपर है। इसका तकिया इधर पडा है, उसका तकिया उधर पड़ा है।

माँ जब यह नजारा देखती है, तो हँसती है और सोचती है कि कैसे नादान बच्चे है? तकिया और चादर को लेकर लड-झगड़ रहे थे। अब वही तकिए, चादर उपेक्षित पड़े है और इन्हे उनका ख्याल ही नही है।

माँ हँसती है बच्चों पर और मौत हँसती है हम पर। मौत हमारी मूर्खता पर हँसती है, क्योकि जब हमारी आँखे सदा-सदा के लिए मूँद जाती है, तो हमारे मकान, हवेलियाँ, तिजोरियाँ, जमीन-जायदाद सब ज्यो के त्यो पडे रह जाते है। मकान वही खड़ा है। दुकान वही खड़ी है। तिजोरी भी वही पडी है। ठीक वैसे ही जैसे पप्पू और पिकी के आसपास तकिया और चादर पड़े थे। हाँ तो! माँ हँसती है बच्चो पर और मौत हँसती है हम पर कि कैसा नादान बच्चा था? जिन्दगी भर मिट्टी के ठीकरो और चंद रंग-बिरंगे कागजी टुकड़ो के लिए भागता रहा। ध्यान रहे! अपने मरने के बाद हमे श्मशान तक पहुँचाने के लिए तो हमारे साथ सारी दुनिया हो लेगी, लेकिन श्मशान के आगे साथ जाने वाला पूरे जहाँ मे एक भी नही होगा। **श्मशान से आगे मनुष्य के साथ अच्छे-बुरे कर्म ही जाते हैं। मृत्यु के बाद तो धर्म का फल ही मनुष्य का साथ देता है।**

जिस जमीन पर आज अपना मकान है, वह आज अपने कब्जे मे है, किन्तु सौ-पचास वर्ष पहले वह किसी और के कब्जे मे था। क्या सौ साल बाद भी उस पर अपना कब्जा रहेगा? नही! इसकी कोई ग्यारन्टी नही। सम्भव है, उस पर किसी और का कब्जा हो जायेगा। जमीन तो वही की वही रहती है, लेकिन हम कहते है, धरती हमारी है। धरती हँसती है, क्योकि हमारे बाप-दादा-परदादा भी यही कहते चले गए। धरती कभी किसी की नही हुई है। जरा समझे! अपन ने अपने एक मकान को खडा करने मे कितनी हाड-तोड़ मेहनत की है। दो-तीन वर्षो मे खडा रहकर बनवाया है। इस पर भी अपना कब्जा नही है, क्योकि यह भी मृत्यु के बाद अपने साथ नही जायेगा। साथ जाने की बात तो दूर, उसमे तो अपना अंतिम संस्कार भी नही हो सकता। **इसलिए इन मकान, जमीन और दुकानों के प्रति अत्यधिक आसक्ति व मोह मत रखिये, क्योंकि आँख खुली है, तभी तक अपने हैं। आँख मूँदते ही पराए हो जायेंगे।**

तो जीवन मे झगडे, अपराध, पाप तभी तक है, जब तक आँख खुली है। जीवन मे भागम्-भाग, दौड़म्-दौड, आपा-धापी तभी तक है, जब तक आँख खुली है। आँख मूँदी कि दुनिया खत्म। तो **नींद छोटी मृत्यु है और मृत्यु बड़ी नींद है।**

रोजमर्रा के जीवन में मृत्यु का सतत् स्मरण हमें पापों और वासनाओं से मुक्ति दिलायेगा। हमें सात्विक व धार्मिक जीवन जीने की प्रेरणा देगा, किन्तु अफसोस इस बात का है कि आज आदमी की सदैव यह कोशिश रही है कि मृत्यु को भुलाया जाय, आदमी मृत्यु को नजरअन्दाज करके जीने का प्रयास कर रहा है। इसी कारण दुनिया मे इतने पाप हो रहे है। इस देश मे इतने अपराध, हत्याएँ, लूट-खसोट, चोरी-डकैती, बलात्कार, हिंसा हो रही है, क्योकि आदमी भूल गया है कि कल उसको मर जाना है।

यदि सच में हमे मालूम पड़ जाये कि आज अपनी जिन्दगी का आखरी दिन है, तो उस दिन क्या कोई पाप-क्रिया करेगे? कदापि नहीं। उस दिन तो अपनी यही कोशिश होगी कि अव तक जो पाप हुए है, उनका प्रायश्चित कर लूँ। जिनसे वेर-विरोध है, उनसे क्षमापना कर लूँ। आखिरी दिन परमात्मा का पावन स्मरण कर लूँ। **मृत्यु का स्मरण आते ही धर्म का मूल्य बढ़ जाता है।** अत: क्यो न रात को सोने से पहले सबसे क्षमापना करके सोएँ। प्रभु का सुमिरन करके सोएँ। अपने धर्म मंत्र का जाप करके सोएँ। अपने को अपने आराध्य भगवान के हवाले करके सोएँ तथा यह प्रार्थना करके सोएँ कि – **'हे परमात्मा! यदि तूने कल का सूरज दिखाया, तो मै तुझे नमन करने तेरे दर पर आऊँगा और यदि कल का सूरज नहीं दिखाया, तो मेरा यह अंतिम प्रणाम स्वीकार कर।'** यह छोटी-सी प्रार्थना अपनी जिन्दगी के लिए प्राण है, अंतर्निवेदन है। इसी को गीता मे शरणागति कहा है और भगवान महावीर ने समाधिमरण कहा है।

और अगर सुबह का सूरज देखने को मिलता है, तो उठते ही परमात्मा को धन्यवाद देना, नमन करना और अन्तर्भाव से कहना कि हे परमात्मा! तूने एक सुवह के दर्शन और कराए, अत: **मैं संकल्प करता हूँ कि आज के दिन मैं नेक काम करूँगा, जन कल्याण, दीन-दुखियों की सेवा, परोपकार, धर्म-साधना तथा इंसानियत का फर्ज अदा करूँगा।**

यह छोटा-सा सूत्र अपनी जिन्दगी को आमूल-चूल बदल देने वाला सूत्र होगा। समाधिमरण का मतलव ही इतना है कि मृत्यु से ऑख मिला लेना और जो मृत्यु से ऑख मिला लेता है, वह मोक्ष को अपनी ऑखो से देख लेता है और अपनी ऑखों से मोक्ष को देख लेने का अर्थ है कि – 'मौत पर सदा-सदा के लिए विजय पा लेना।' मौत मोक्ष मे इतना ही अंतर है कि जो बार-बार आए वह मौत है और जो एक वार प्राप्त होवे, वह मोक्ष है। सम्पूर्ण कर्मो से मुक्त हो जाना मोक्ष है।

卐 ज्ञान-अज्ञान और मोह-निर्वेद 卐

सिनेमा हॉल मे फिल्म चल रही है। हॉल मे अंधेरा रहता है और अंधेरे मे ही फिल्म अच्छी लगती है। यदि फिल्म चलते हुए उजाला हो जाता है, तो सारा मजा किरकिरा हो जाता है। उस अंधेरे मे फिल्म मे चलते हुए नाच-गाने मे, रोने-हॅसने आदि मे मन लग जाता है। उन परछाइयो के दु:ख मे दु:खी और सुख मे सुखी होते है। पर सचमुच मे वहां क्या सुख-दु:ख है? उस अंधेरे मे ही सुख-दु:ख का सब अनुभव करते है, उजाला हो जाये, तो न सुख रहेगा न दु:ख।

अज्ञान के अंधेरे मे ही और मोह के नशे मे ही संसार की फिल्म का सुख-दु:ख रहता है। ज्ञान का उजाला होते ही संसार मे रस नही रह जाता है। वहाँ से मन विरत होने लगता है। जीव, अज्ञान-मोह दशा मे ही हिंसा आदि पंचास्रवों मे आनन्द मनाता है, ज्ञान-चारित्र दशा मे नहीं।

मृत्यु क्या है और मुझे क्या करना है?

शरीर से जीव का निकल जाना ही मृत्यु है। पिंजरे से पक्षी के उड़ जाने का नाम ही मृत्यु है। एक महान चिन्तक ने कहा है – 'मृत्यु जीवन का सबसे बड़ा शास्त्र है। जीवन में एक ही शास्त्र पढ़ने जैसा है और वह है – मृत्यु शास्त्र।' इसे पढ़े बिना जीवन मुक्ति सम्भव नहीं। मृत्यु भयावह उनके लिए है, जो जीवन भर पाप और वासना में जीते हैं।

मृत्यु, परमात्मा के घर पर जीवन का हिसाब देने का दिन है। अगर हिसाब मे घोटाला होगा, तो मृत्यु से घबराहट होगी ही। पता है इनकमटेक्स ऑफिसर से वही घबराता है, जिसके बही-खाते गलत होते है। जीवन के बही-खाते सही हो, तो मृत्यु के वक्त घबराहट की कोई गुंजाइश ही नही। जिसने मृत्यु की तैयारी जिन्दगी मे ही कर ली, उसके लिए मृत्यु कभी अशुभ नही हो सकती। दुनिया मे यदि ऐसा मानकर ही जीएँ कि आज का दिन हमारी जिन्दगी का आखरी दिन है। यह न सोचे कि मुझे तो बहुत जीना है, कई बसंत देखने है, अभी मेरी उम्र ही क्या है? पच्चीस-पचास वर्ष का ही तो हूँ – ऐसा सोचकर मन को गलतफहमी मे न रखे, क्योकि मृत्यु कभी भी आ सकती है। किसी दुकान पर ग्राहक कभी भी आ सकता है; ऐसे ही मृत्यु के आने की तिथि निश्चित नही होती है। अतः सदा जागृत रहे।

रोज सुबह जब सोकर उठे, तो यही सोचे कि यह दिन मेरे जीवन का आखिरी दिन है और इस दिन को मै सत्कर्म और धर्म-ध्यान करके सार्थक कर लूँ। **घर से बाहर निकलने से पहले बीमा करवा लें, क्योंकि बाहर तो चारों तरफ मौत ही मौत मँडरा रही है। धर्म-ध्यान करना ही जीवन का असली बीमा करवाना है।** और अगर इस तरह रोज धर्म ध्यान होता रहे, तो रोज-रोज मृत्यु की तैयारी होती रहेगी और अन्त मे मृत्यु महोत्सव सिद्ध हो जायेगी।

किसी की अर्थी देखकर यह नही कहना कि बेचारा चला गया, अपितु उस वक्त मन मे ऐसा विचार लावे कि किसी दिन मेरी अर्थी भी इन्ही रास्तो से यो ही गुजर जायेगी और लोग सडक के दोनो तरफ खडे होकर देखते रह जायेगे। उस **अर्थी को देखकर अपनी मृत्यु का बोध ले लेवें, क्योंकि दूसरे की मृत्यु अपने लिए एक चुनौती है।** दुनिया का हर आदमी मृत्यु की क्यू मे लगा है। यह एक कटु सत्य है।

किसी बूढे आदमी को लकड़ी का सहारा लेकर चलते देख हँसना नही, अपितु यह सोचे कि यह दुर्घटना कल मेरे जीवन मे भी घटने वाली है। किसी गरीब की दीन-हीन अवस्था देखकर हँसना नही, अपितु यह सोचे कि यह घटना कल मेरे जीवन मे भी संभव है। किसी भिखारी को भीख माँगते देखकर दुत्कारना नही, अपितु यह सोचे कि इसने पिछले जीवन मे दान-पुण्य नही किया, इसलिए आज भिखारी बना है। यदि मै भी आज दान-पुण्य नही करूँगा, तो कल मै भी भिखारी बन सकता हूँ। हर मुरझाया फूल हमे मृत्यु का संकेत दे रहा है, अतः सदैव हमे अपनी मृत्यु का स्मरण करते रहना है।

❑ "जीवन एक यात्रा है, जिसकी समाप्ति मृत्यु है।" ❑

मृत्यु और उसका स्वरूप

मृत्यु से सभी परिचित हैं, किन्तु भय के कारण लोग इसे जानते हुए भी अनजान से बने रहते है। **शरीर से जीव का निकल जाना ही मृत्यु है। पिंजरे से पंछी के उड़ जाने का नाम ही मृत्यु है। मृत्यु शाश्वत है। बड़े-बड़े सम्राटों को भी मृत्यु ने नही छोड़ा है। मृत्यु की तारीख को न कोई घटा सकता है, न बढ़ा सकता है।** सिकंदर, हिटलर, स्टालीन, गांधी, नेहरू मे शक्ति होती, तो कुछ समय के लिए मृत्यु को टाल देते। इसी प्रकार शाहजहाँ भी मुमताज को कभी जाने नही देते। मृत्यु का चक्कर अनादिकाल से चल रहा है। जन्म के बाद मृत्यु निश्चित है।

मृत्यु कब, कहाँ और कैसे होगी? इसका किसी को पता नही है। कोई बीमारी से, कोई आग से, कोई ट्रेन से, कोई जहर से, कोई बिल्डिंग से कूदकर, कोई कुएँ व नदी मे गिरकर मृत्यु के मुख मे पहुँच रहे है। कभी-कभी प्राकृतिक आपदाओ से भी हजारो लाखो लोगो की जीवन लीला का अन्त हो जाता है।

मनुष्य अपने कर्मो से सुखी और दुःखी है। मोह-माया, लोभ-लालच, छल-कपट के जाल में फँसता रहता है। फिर जीवन मे सुख और शांति कैसे मिले? यह एक कटु सत्य है कि हम दूसरो का माल हडपना चाहते है, दूसरो को धोखा देकर अपना उल्लू सीधा करना चाहते है। यद्यपि ऐसा करने से हमारी अन्तर आत्मा मना करती है, फिर भी हम ऐसा करने से बाज नही आते है।

हम अपने बेटे-बेटियो, पोते-पोतियो के लिए मकान बनाते है, अनीति से धन कमाते है, **किन्तु कभी ऐसा सोचा कि हम अपने लिए क्या करते हैं?** पिछले शुभ कर्म व पुण्य के बल पर आज जो धन-संपदा मिली है, क्या यह स्थायी है? कभी सोचा है कि आगे की क्या तैयारी है? अगर धर्म आराधना, सत्कर्म, तप-त्याग नही किया, ज्ञान, दर्शन और चारित्र की ओर ध्यान नही दिया, स्वयं को नही जाना, सद्भावना और समता नही रखी, तो निश्चित जानो कि यह धन-दौलत यही पड़ी रह जायेगी और फिर पीछे वाले गुलछर्रे उडावेगे। इसलिए सतर्क होना निहायत जरूरी है। आजकल तो मनुष्य सोते-बैठते, घूमते-फिरते ही चल देता है।

एक धनाढ्य व्यक्ति मृत्यु शय्या पर पड़ा है। डॉक्टरो ने जवाब दे दिया है, कुछ ही समय का मेहमान है, फिर भी वह अपने पुत्र से पूछ रहा है – 'बेटे! उसके उधार के रुपये आए या नही? अमुक वस्तु की अभी तेजी है या मन्दी? तुमने माल बेचा या नही? देख! उसका ब्याज देना मत। अरे देख! फलां की तीन वर्ष की मियाद खत्म होने वाली है, अतः उस पर कोर्ट मे दावा लगा देना। अरे सुन! किसना माली से अपने रुपये के बदले अनाज लाना है' आदि-आदि। धनवान इन्हीं सांसारिक बातो मे ही उलझा हुआ है। प्रभु का स्मरण नही करता है। ऐसे अनेक दृष्टांत देखने को मिलते है।

कितने अफसोस की बात है कि मनुष्य जीवन और मृत्यु के संघर्ष से जूझ रहा है, वह दु:खी है, तनावग्रस्त है; फिर भी वह मरना नही, जीना चाहता है। शरीर मे शक्ति नही है। दॉत, ऑखे, कमर ने जवाब दे दिया है, फिर भी भगवान को याद नही करता, गलती करके भी क्षमा नही मॉगता, धैर्यहीन होकर विवेक की मर्यादा तोडता रहता है। हम अपने स्वार्थ के कारण अशुभ कर्म, पाप कर्म नही छोडते, मृत्यु से डरते नही, मगर मृत्यु किसी भी क्षण उसे उठा लेती है। इसलिए जीवन की दिनचर्या बदले, स्वभाव मे परिवर्तन लावे। समता, धैर्य और विवेक को आत्मसात कर ले। अज्ञानता दूर करे, मोह को त्यागे। सभी की मंगल कामना करे, सभी को सुख पहुँचावे। जीवन मे अमृत बरसने लगेगा। इसके बाद मृत्यु आवे, तो आने दीजिये। **अगर हमारे इरादे पवित्र हैं, तो मृत्यु सुखदायी हो सकती है**। फिर हम मृत्यु से कभी नही डरेगे।

भारतीय तत्वचिन्तको ने मृत्यु से डरने की बजाय मृत्यु का सहर्ष आलिंगन करने की एवं स्मृति मे रखने की बात कही है। उनका कहना है कि **मृत्यु तो इस भव का अन्त है और दूसरे भव का प्रारम्भ है**। इस जीर्ण-शीर्ण जीवन का अन्त करने के लिए और नया जीवन प्राप्त करने के लिए मृत्यु तो एक मित्र बनकर आती है। यदि आपको कोई व्यक्ति आपके पुराने फटे-टूटे कपडे उतारकर, उनके बदले नये कपडे पहिनाने लगे, तो आपको खुशी होगी या नाराजी? अनुभव कहता है कि आपको नये कपडे पहिनने मे कोई नाराजी नही होगी और नये कपडे पहिनाने वाले व्यक्ति को आप न तो शत्रु मानेगे और न उससे डरेगे। इसी प्रकार अगर आपको आपका फटा-पुराना चोला (शरीर) बदलकर कोई नया चोला पहिनाता है, तो आपको नाराजी क्यो होती है? आप उसे शत्रु क्यो मानते है? आप उससे डर के मारे कॉपने क्यो लगते है?

इसी तथ्य को गीता मे कर्मयोगी श्रीकृष्ण कहते है – "मृत्यु आत्मा का नाश नही है, शरीर का बदल जाना है। जीव का शरीर से अलग होकर दूसरे शरीर को धारण करना है।" इसीलिए वे कहते है – "मृत्यु से डरो मत, यह तो तुम्हे नया चोला (शरीर) देने आती है।" जो लोग मृत्यु का रहस्य नही जानते है, **वे अज्ञानता एवं मोह-ममता वश मृत्यु के नाम से भयभीत होकर घबराने लगते हैं, रोने-पीटने लगते हैं**। पर वास्तव मे सिद्ध आत्मा का न तो जन्म होता है और न मरण। किन्तु शरीरधारी जीव का शरीर-परिवर्तन, शरीर का मरण कहा जाता है। वर्तमान शरीर को छोड़कर जीव का दूसरे शरीर मे प्रयाण कर जाना ही मृत्यु कहलाता है।

इस संसार मे मनुष्य जबसे जन्म लेता है, तबसे मृत्यु तक का समय उसकी जिन्दगी का साधना-काल है और मृत्यु का समय परीक्षा-फल है। जैसे जो विद्यार्थी वर्षभर के अध्ययन-काल मे मन लगाकर अध्ययन नही करता, मटर-गश्ती करता फिरता है, वह परीक्षा मे उत्तीर्ण नही हो सकता, इसी प्रकार जो मानव अपने जीवन-काल मे सम्यक् साधना नही करता, अपने मानव-जन्म को सफल बनाने की क्रिया या प्रवृत्ति नही करता, वह मृत्यु के समय उस फेल होने वाले विद्यार्थी की तरह पछताता है।

जो मनुष्य यह सोचता है कि – जब बुढ़ापा आयेगा या जब मृत्यु सिर पर आयेगी, तब मै धर्म-साधना व सत्कर्म कर लूँगा, पर वह मूढ़ अज्ञानी यह नही जानता कि मृत्यु तो कभी भी आ सकती है। मनुष्य को हर समय जागृत, सावधान व तैयार रहना चाहिए, न मालूम कब मौत आ धमके। रेलगाड़ी के स्टेशन पर आने से पहले ही यात्री को टिकिट लेकर और अपना सामान बॉधकर तैयार रहना पड़ता है, ताकि गाड़ी आते ही वह उसमे बैठ सके। **इसी प्रकार जीवन-यात्री को भी मृत्यु के आने से पहले ही अपना धर्म और पुण्य का सामान बाँध रखना चाहिए और सत्कर्मो की छाप लगी हुई सद्गति की टिकिट पहले से ही बनवा कर रख लेनी चाहिए,** ताकि मृत्यु-रूपी परलोक की रेलगाड़ी के आते ही फिर पछताना न पड़े।

मृत्यु का समय पीछे कर देना किसी भी प्राणी के हाथ की बात नही है। जीवन काल मे जो कुछ हो जाय, सत्कर्म या दुष्कर्म, वही आपका है, वही आपके साथ जायेगा। इसलिए मृत्यु के लिए तो हर समय तैयार रहना चाहिए। जो व्यक्ति मृत्यु को अपने सिर पर नंगी तलवार की तरह लटकता हुआ देखता है, वह जीवन मे निष्पाप रहकर मृत्यु-कला सीख सकता है।

गीता मे कर्मयोगी श्रीकृष्ण ने कहा है – अन्त समय मे मनुष्य जिस-जिस भाव का स्मरण करता हुआ, जिस-जिस प्रकार के अच्छे या बुरे विचारो को स्मृति-पटल पर लाता हुआ शरीर छोडता है, वह तदनुसार उन भावो या विचारो से वासित होकर उसी गति को प्राप्त करता है। **मृत्यु तो प्रत्येक मनुष्य की जीवन भर की साधना का माप-दण्ड है, मूल्यांकन है। जिसका मरण सुधरा, उसका जीवन भी सुधरा हुआ समझा जाता और जिसका मरण बिगड़ा, उसका जीवन भी बिगड़ा हुआ समझा जाता है। मृत्यु की कला सीखने के लिए जीने की कला सीखना जरूरी है।**

ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति !! ॐ शान्ति !!!

संकल्प भगवान महावीर से उनके एक शिष्य ने पूछा - "भगवन ! चट्टान से भी अधिक शक्तिशाली क्या होता है? लोहा! वह चट्टान को भी तोड देता है।' महावीर ने उत्तर दिया। शिष्य ने पुनः पूछा- "भगवन ! लोहे से अधिक शक्ति किसमे है?" "अग्नि मे । वह लोहे को भी पिघला देती हैं" भगवान बोले।

"क्या अग्नि से भी अधिक बल किसी मे होता है?" - शिष्य ने पूछा।

"हाँ पानी मे ! वह अग्नि को बुझा देता है।" - उत्तर मिला।

"प्रभु! कृपया बताएं कि पानी से अधिक क्षमता किसमे है ?"

"**संकल्प में !** इससे अधिक शक्ति किसी मे नही है" -भगवान ने कहा।

"बस भगवन। मुझे वही शक्ति प्राप्त करनी है।"

ऐसा कोई घर नहीं, जहाँ कभी मृत्यु ने दस्तक न दी हो

एक दिन एक माता जिसका इकलौता बेटा मर गया था, रोती हुई महात्मा बुद्ध के पास आई। शोक से व्याकुल होकर वह महात्मा के चरणो मे गिर पड़ी और गिड़गिड़ाने लगी – "भगवन्! कैसे भी करके मेरे बेटे को जिन्दा कर दीजिये।" मै इसके बगैर एक पल भी शान्ति से नही रह सकती।

महात्मा ने बच्चे की माता को सान्त्वना दी और बोले – "शोक न करो, समता रखो, धीरज रखो। परमात्मा और पुण्य सब ठीक करेगा। हम तुम्हारे बच्चे को जीवित कर देगे, एक शर्त पर, वह यह कि – इसके लिए तुमको एक मुट्ठी चावल ऐसे घर से लाना होगे, जहाँ कभी किसी की मृत्यु न हुई हो।"

महात्मा की बात सुनकर माता गाँव की ओर चल पड़ी। दिन भर भटकती रही, कई घरो मे घूम ली, किन्तु उसे एक भी ऐसा घर नही मिला, जहाँ कभी किसी की मृत्यु न हुई हो। हताश होकर वह महात्मा के पास लौट आई।

महात्मा ने समझाया – मृत्यु तो जन्म के साथ ही जुडी हुई होती है। इसे टालने की किसी मे भी शक्ति नही। ऐसी विपत्ति एक-न-एक दिन सभी पर आती है। यह कर्म प्रकृति का अटूट नियम है। उसे धैर्यपूर्वक सहन करना पडता है।

इस अटल सत्य को समझकर माता का रोना मिटा, हृदय शान्त हुआ।

सीमित साधनों में जीने वाला व्यक्ति हर हाल में सुखी रह लेता है

लघु कथा – एक संन्यासी अपनी छोटी-सी कुटिया मे साधना मे लीन थे। रात का समय था। भारी वर्षा हो रही थी। इतने मे दरवाजा खटखटाने की आहट हुई। संन्यासी ने दरवाजा खोला। सामने एक पुरुष गीले कपडो मे थर-थर काँपता हुआ खडा है। पुरुष ने संन्यासी से रात-भर के लिए आश्रय देने की प्रार्थना की। संन्यासी ने कहा – "मेरी कुटिया मे एक ही पुरुष के सोने की जगह है, अन्दर आ जाओ। अपन दोनो बैठकर रात बिता देगे।"

थोडी देर बाद फिर किसी ने दरवाजा खटखटाया। संन्यासी ने दरवाजा खोलकर देखा – एक आदमी पानी से तरबतर गीले कपडो मे खडा है। वह भी एक रात के लिए आश्रय देने की याचना करने लगा। संन्यासी ने कहा – "कुटिया तुम सबकी है, अन्दर आ जाओ। अपन तीनो खडे-खडे रात बिता देगे।" सवेरा होते ही – दोनो पुरुष संन्यासी को धन्यवाद देकर और वंदना करके चले गए।

"जीवन एक सपना है और मृत्यु इस सपने का टूट जाना। लेकिन सपने को हम सत्य मानते हैं, इसलिए मृत्यु दुःखदायी मालूम होती है। स्वप्न में देखे हुए सुख का नाश होने पर लोग दुःखी नहीं होते, उसी तरह जाग्रत अवस्था में शरीर, सम्पत्ति आदि का नाश होने पर पण्डित जन शोक नही करते।"

श्मशान से मृत्यु-बोध

श्मशान मृत्यु का प्रतीक है। अपन रोज मंदिर जाते है। वहाँ जाकर भगवान की वेदी की तीन परिक्रमा लगाते है, क्योकि परिक्रमा एक वशीकरण मंत्र है। ज्ञानी कहते हैं कि जिसको भी वश मे करना हो, उसकी परिक्रमा लगाना शुरू कर दो। लेकिन इसके साथ ही एक काम और करना है। **दिन में एक बार मरघट की परिक्रमा जरूर लगाना।** मरघट की परिक्रमा जीवन मे वह क्रांति पैदा करेगी, जो अब तक मंदिरो की हजारो परिक्रमाएँ भी नही कर पाई। **वैराग्य के लिए मरघट से बढ़कर कोई उत्तम स्थान नहीं है।** महात्मा बुद्ध के पास कोई संन्यास लेने आता था, तो वे उससे कहते थे कि पहले कुछ दिन मरघट मे रहकर आओ, फिर संन्यास दूँगा। जैन श्रावको मे सेठ सुदर्शन, श्रेणिक पुत्र अभय कुमार, जय कुमार आदि के वावद जैन ग्रन्थो मे उल्लेख मिलता है कि वे अष्टमी, चतुर्दशी आदि पर्व के दिनो मे श्मशान जाकर सामायिक व कायोत्सर्ग ध्यान साधना किया करते थे।

श्मशान में वैराग्य और शक्ति का वास है। जिस शरीर के लिए आदमी जिन्दगी में न जाने कितने पाप करता है, उस शरीर की हैसियत एक मुट्ठी भर राख से ज्यादा नहीं है, इसका बोध श्मशान में ही मिलता है। इसलिए यह सत्य श्मशान में ही समझ में आता है। देह तो प्रतिक्षण मौत की ओर अग्रसर है।

मुनि भगवन्त कहते है कि – जब तुम श्मशान मे जलती हुई लाशो को, अधजले मुर्दो को देखोगे, तो तुम्हे यह बोध मिलेगा कि – पागल! कहाँ भागता है? एक दिन तेरी भी यही गत होने वाली है। श्मशान गाँव के बाहर नही, अपितु शहर के बीच चौराहे पर होना चाहिए, ताकि जो भी उस चौराहे से गुजरे, तो वहाँ मृत्यु का मुख्यालय देखकर उसे अपनी मृत्यु का ख्याल बना रहे। ''**दुनिया में अगर पापों से बचना है, तो मृत्यु को** ध्यान **में रखकर जीना होगा।** दुनिया से अपने पाप छिपा सकते हैं, लेकिन आत्मा से छिपा पाना सम्भव नही। **खुद और खुदा से कुछ भी गोपनीय नहीं है।**''

कथानक – एक सज्जन जिन्होने दो करोड रुपये खर्च कर एक बढिया एयर कंडीशनर बंगला बनवाया था। वे मुनि भगवंत श्री तरुणसागरजी के पास आए। उन्होंने मुनिश्री से कहा – 'आप मेरे बंगले का कोई नामकरण कर दे, कोई सुन्दर-सा नाम दे दें।' मुनिश्री ने कहा – 'मै बहुत उल्टी खोपडी का संत हूँ। मुझसे नाम मत माँगो, क्योकि मैं जो नाम दूँगा, वह तुम्हे रास नही आयेगा, यद्यपि नाम बड़ा प्यारा और सार्थक होगा, लेकिन वह तुम्हे पसंद नहीं आयेगा।' वे बोले – 'आप तो हमारे गुरु हैं, आप उल्टी खोपड़ी के कैसे हो सकते है?' मुनिश्री बोले – ''संत हमेशा उल्टी खोपड़ी के होते है, क्योंकि उनके जीने की शैली संसारियो से एकदम उल्टी, विपरीत होती है। जिस रात मे तुम गहरी नींद मे सोते हो, उस रात मे संत जागते है। तुम भोग मे जीते हो, संत त्याग मे जीते है।

तुम केशो को सॅवारते हो और संत केशो को उखाडते है। तुम रंग-बिरंगे वस्त्र पहनते हो और संत (दिगम्बर मुनि) वस्त्र पहनते ही नही है, इसलिए संत उल्टी खोपडी के होते है, क्योकि तुम्हारी और उनकी जीने की दिशाएँ अलग-अलग होती है। इसलिए कहता हूँ मुझसे नाम मत मॉगो।'' वे बोले – 'नही। आपको नाम देना पडेगा।' मुनिश्री ने कहा – 'तो ठीक है, फिर जो दूँगा रखना पड़ेगा।' वे बोले – 'रखूँगा।' मुनिश्री ने फिर पूछा – 'रखोगे?' वे बोले – 'हॉ। रखूँगा।' तब मुनिश्री ने कहा – ''ठीक है। अपने बंगले का नाम 'मरघट' रख लो।'' वे सज्जन बडे नाराज हुए, बड़े क्रोधित हो गए। बोले – 'आप इतने बडे विद्वान होकर भी ऐसी बात करते है।' मुनिश्री बोले – 'पुण्यवान! क्या हुआ? मैने पहले ही कहा था कि आपको मेरा दिया नाम पसन्द नही आयेगा।' वे बोले– 'यह भी कोई नाम है?' मुनिश्री ने कहा – 'यह नाम नही तो क्या बादाम है? क्या बाजार मे बिकने वाला लंगडा आम है।' उन्होने कहा – मरघट ....। आपको पता है, मरघट किसे कहते है? मुनिश्री बोले – 'बता दीजिये किसे कहते है?' वे बोले – 'जहॉ मुर्दे को दफनाते है, उसे मरघट कहते है।' मुनिश्री ने कहा – 'मान्यवर। उसे मरघट नही श्मशान कहते है। एक श्मशान होता है, और दूसरा मरघट होता है। जहॉ मुर्दे को जलाया जाता है, वह श्मशान है तथा जिस घाट पर सब मर रहे है, जहॉ हर पल प्राण घट रहे है, वह मरघट है। तुम्हारे प्राण इन्ही महलो, बंगलो, कोठियो मे तो घट रहे है। इन बंगलो और कोठियो मे सभी तो मरने को तैयार बैठे है, इसीलिये तो महल, मरघट से ज्यादा कुछ नही है। तुम्हारे बाप-दादा-परदादा सभी यही तो मरे है और तुम भी यही मरोगे। यह मरघट नही तो क्या हुआ?'

वे बोले – 'आप कहते तो ठीक है, लेकिन आप और कोई दूसरा नाम दे, तो बडी अनुकंपा होगी।' 'मुनिश्री ने कहा – ठीक है! आप इसका नाम रखिये – भूत बंगला।' वे बोले – 'भूत बंगला? जहॉ जिन्दा लोग रहते है, उसका नाम भूत बंगला कैसे हो सकता है?' मुनिश्री बोले – 'तुम्हारे पिता क्या है?' वे बोले - 'भूतपूर्व विधायक।' 'और तुम्हारे दादा?' वे बोले – 'भूतपूर्व सांसद।' 'और तुम?' उत्तर मिला – 'भूतपूर्व प्राचार्य।' मुनिश्री बोले – 'तुम भूत, तुम्हारे बाप भूत, तुम्हारे दादा भूत, इसी प्रकार तुम्हारा बंगला भूत! इसीलिए मैने कहा – भूत बंगला।' इन मकानो मे भूत-प्रेतो की परछाइयॉ मॅडराती रहती है। ये महल-बंगले मरघट और भूत बंगला से ज्यादा कुछ नही है। इस मान्यता से इन महलो-बंगलो को देखकर मन मे अहंकार नही पनप पायेगा। और फिर यही घर और मकान तुम्हारे लिए 'आश्रम' और दुकान 'तपोवन' सिद्ध हो जायेगी। फिर किसी हिमालय और गुफा, वन की तरफ जाने की जरूरत नही पडेगी। फिर मृत्यु से भी भय जाता रहेगा। **क्योंकि जिसने जीवन में ध्यान और समाधि की साधना की है, उसके लिए मृत्यु महज वस्त्र परिवर्तन से ज्यादा कुछ नहीं है।**

आचार्यश्री पुष्पदंत सागरजी की ये सारगर्भित पंक्तियाँ इसी ओर इंगित करती है-
''श्वासों की तूली से, मुक्ति गान लिख जाओ, मृत्यु तो निश्चित है, उससे न भय खाओ। रूप का गर्व न करो, रूप स्वयं नश्वर है, भीतर एक दृष्टा है, वह ही अनिश्वर है। भौतिक सुख छोड़ सभी, उसके ही गुण गाओ, श्वासों की तूली से, मुक्ति गान लिख जाओ।। कामना की शय्या पर, जीवन ही बीत गया, श्वासों का सागर था, पल भर में रीत गया। भोगों का मरुस्थल देखकर न ललचाओ, श्वासों की तूली से, मुक्तिगान लिख जाओ।। बादलों की ओट में छुपा हुआ दिनकर है, देह तो निलय है, भीतर बैठा परमेश्वर है। प्रज्ञा की दृष्टि से, दर्शन करते जाओ, श्वासों की तूली से, मुक्तिगान लिख जाओ।।''

'मृत्यु तो निश्चित है, उससे भय न खाओ।' आखिर मृत्यु के भय से भागकर जाएँगे भी कहाँ? क्योकि मृत्यु की पहुँच सब जगह है। काल का पहरा सब तरफ है। और फिर देह तो मिट्टी का एक खिलौना है, इसका टूटना तो तय है। **शरीर तो रोगों और बीमारियों का घर है।** तन के पिंजरे से प्राण-पखेरू कब उड जाएँ, क्या पता? अतः **जीवन में जो करने जैसा है, उसे अविलम्ब कर लेवें।** जो शुभ है, धर्म है, उसे करने मे बहाना नही खोजे। धर्म और पुण्य मे प्रमाद करना, एक भयंकर भूल होगी। उसे कल पर न छोड़े।

एक कथानक – धर्मराज युधिष्ठिर राजसिहासन पर बैठे हुए थे। राज दरबार लगा हुआ था। महत्वपूर्ण विषयो पर चर्चा चल रही थी। चर्चा पूर्ण हो चुकी थी। उसी समय एक याचक महाराज युधिष्ठिर की सेवा मे उपस्थित हुआ। उसने विनयपूर्वक अपनी मजबूरी सामने रखते हुए मदद की याचना की। धर्मराज ने उसे कल आने के लिए कहा और यह आश्वासन भी दिया कि आपकी अभिलाषा जरूर पूर्ण होवेगी।

आगन्तुक याचक तो चला गया, किन्तु पास मे ही बैठे हुए भीम वहाँ से उठते है और राज्यसभा के बाहर रखी हुई दुन्दुभि बजाने लगते है। उन्होने राज सेवको को भी मंगल वाद्य बजाने का हुक्म दे दिया। असमय मे दुन्दुभि एवं मंगल वाद्य सुनकर धर्मराज ने पूछा। आज असमय पर मंगल वाद्य क्यो बज रहे है? सेवको से पता लगा कि भीम ने आज्ञा दी है और स्वयं उन्होने ही दुन्दुभि बजायी है।

युधिष्ठिर ने भीम को बुलाकर पूछा – 'आज असमय पर दुन्दुभि कैसे बजाई गई। कहाँ विजय हुई है। किस पर विजय हुई है।' भीम बोले - 'महाराज ने काल पर विजय पा ली है। इससे बड़ा मंगल का और आनन्द का समय और क्या होगा?' 'मैंने काल जीत लिया? कैसे!' युधिष्ठिर आश्चर्य चकित थे।

भीम बात को स्पष्ट करते हुए कहने लगे – 'अभी-अभी आपने एक आगन्तुक याचक को इच्छित वस्तु की पूर्ति कल करने का कहा है। अतः कम से कम कल तक तो काल पर आपका अधिकार अवश्य रहेगा ही। युधिष्ठिर को अब अपनी भूल का बोध हो गया। भूल सुधारने के लिए महाराज ने याचक को बुलवाने का आदेश दिया और तुरन्त उसकी इच्छा पूर्ति की गई।' **शुभ कार्य में कभी विलम्ब न करें।**

अनमोल वाणी

मृत्यु की इच्छा करना कायरता है, मृत्यु से डरना निर्बलता है।
मृत्यु का स्वागत करना, वीरता है। – **वीर बनिये।।**

तीव्र वेदना मे समाधि लाने के लिए एक सुन्दर उपाय है –
अपने से अधिक वेदनाग्रस्त जीवों की पीड़ाओं का विचार करें।

जहाँ संयोग है, वियोग उसके पीछे ही खड़ा है। मोह और अज्ञानता के कारण हम संयोग को स्वीकार कर खुश होते है, किन्तु उसके वियोग पर दुःखी होते है।

हमारा दुर्लभ मानव शरीर सोने के पात्र के समान है, इसमे विलासिता की मदिरा भरने की बजाय, सद्‌विचार का, सेवा का, सदाचार का अमृत भर दो।

सच्चा धर्मात्मा वही है –
जिसका मस्तिष्क बर्फ से भी ठण्डा है और हृदय मक्खन से भी कोमल हो।

जगत मे आत्मा ही परम ज्ञान है, परम ध्यान है, परम ब्रह्म स्वरूप एवं परम ज्योति स्वरूप है। आत्म स्वरूप के चिन्तन के समान अन्य कोई योग नहीं है। वे मनुष्य धन्य है, जो अपने आत्म स्वरूप मे रमण करते है। अपने आत्म स्वरूप को नही जानने वाले मनुष्य संसार रूपी कूप मे पडे हुए है। **जगत का यथार्थ स्वरूप जानकर ममता जाल को दूर करके आत्महित अंगीकार करना चाहिए।**

धन बिना निर्धन दुःखी, तृष्णावश धनवान।
सुखी न देख्यो कोई जगत मे, सब जग लियो छान।।

卐 गन्दा जल / श्रेष्ठ संगत 卐

सडक के गन्दे जल का छीटा लग जाने पर बहुत से शुचि, धार्मिक और स्वच्छता प्रेमी छि. छि. करते हुए नाक-भौह सिकोड़ते, स्नान करते और कपडे बदलते है'।

वही गन्दा जल नाले से बहता-बहता जब गंगा-जल मे मिल गया, तो अब वे ही धार्मिक, स्वच्छता प्रेमी उस जल को अञ्जलि मे भरकर सिर पर चढ़ाते हुए देवताओ को अर्घ्य देते है। यह चमत्कार किसका है? – संगति का ! गन्दा जल गंगा जल बन सकता है, पापी धर्मात्मा बन सकता है – **संगति श्रेष्ठ चाहिये।**

राम नाम सत्य है! अरिहन्त नाम सत्य है!

शवयात्रा मे प्रायः लोग बोलते है – 'राम नाम सत्य है! अरिहन्त नाम सत्य है, सत्य बोल्या गत्त है।' आइये हम समझें – इस सत्य की महिमा क्या है?

* सत्य वचन शुभ है, शुद्ध है, पवित्र है और कल्याणकारक होता है।
* सत्य, संयमशील उत्तम मनुष्यो द्वारा बोला जाता है। सत्य एक बल है।
* सत्य, एक ऐसा सुदृढ़ कवच है, जिसे धारण करने पर दुर्गुण चाहे जितना प्रहार करे, किन्तु सत्यवादी पर उनका कोई असर नही होगा।
* सत्य एक श्रेष्ठ धर्म है, धर्म की जड़ सत्य पर आधारित है।
* सत्य, मनुष्य के निर्मल चरित्र का जागरूक प्रहरी है, वह जब तक सजग रहता है, तब तक बुराइयाँ उसके पास फटकने नही पाती।
* सत्य, एक ऐसी महान शक्ति है, जो जीवन को विराट और व्यापक बनाती है।
* सत्य, सूर्य की तरह जन-जन के अन्तर्मानस को अलौकिक करने वाला व्रत है। सत्य के द्वारा ही मानव मे तेजस्विता प्राप्त होती है।
* असत्य का सेवन करने वाले के हृदय मे शांति नही रहती, उसे अपना झूठ प्रगट होने का भय बना रहता है। झूठे व्यक्ति का कोई विश्वास नही करता।
* झूठे व्यक्ति की प्रतिष्ठा नही रहती। वह यहाँ भी दुःखी रहता है और परभव मे भी दुःखी होता है। उसकी दुर्गति सुनिश्चित है, उसे अच्छी गति नही मिलेगी।
* विश्व के सभी महापुरुषो ने असत्य बोलने को निन्दनीय बतलाया है।
* सत्यवादी निर्भय होता है, उसका वचन अभिनन्दनीय व आदरणीय होता है।
* सत्य, मोक्ष का पहला द्वार है। सभी धर्मो के साधु-भगवन्तो ने सत्य को भगवान के समान मानकर उसकी स्तुति की है।
* सत्य का आश्रय लेने वाले का यह लोक भी सुधरता है और परलोक भी सुधरता है। वह अनेक प्रकार के संताप और विपत्तियो से बचा रहता है। सत्यवादी ही परम पद को प्राप्त कर सकता है। अतः सत्य का ही अनुसरण करना चाहिए।

एक कवि की निम्न मार्मिक पंक्तियाँ इसी सत्य को इंगित कर रही है –

आगे-आगे अपनी ही अर्थी के, मैं गाता चलूँ, राम नाम सत्य है, अरिहन्त नाम सत्य है।
पीछे-पीछे दूर तक, दिख रही जो भीड़ है, पंछी शाखा से उड़ा, खाली पड़ा नीड़ है।
सृष्टि सारी देख ले, पर्याय ही अनित्य है, राम नाम सत्य है, अरिहन्त नाम सत्य है।।
जिनको मेरे सुख-दुःखों से, कुछ नहीं था वास्ता, उनके ही कंधों पर मेरा, कट रहा है रास्ता।
आँख जब मुँदी तो, कोई शत्रु है न मित्र है, राम नाम सत्य है, अरिहन्त नाम सत्य है।।
डोरियों से मैं नहीं बँधा, मेरा संस्कार था, एक कफन पर ही मेरा, रह गया अधिकार था।
तुम उसे उतारते जा रहे, यह सत्य है, राम नाम सत्य है, अरिहन्त नाम सत्य है।।

आपके अनुराग को, आज ये क्या हो गया, जिस क्षण चिता पर चढ़ा, महान कैसे हो गया।
जो अनित्य वो ही नित्य, नित्य ही अनित्य है, राम नाम सत्य है, अरिहन्त नाम सत्य है।।
मै अरूपी गन्ध, दूर उड़ गई थी फूल से, लहर थी चली गई, थी दूर मृत्यु कूल से ...।
सत्य देख हँस रहा, कि जल रहा असत्य है, राम नाम सत्य है, अरिहन्त नाम सत्य है।।
मैं तुम्हारे वंश से, भटका हुआ देवता, आत्म तत्त्व छोड़कर, मै जगत को देखता।
ये अनादि काल की, भूल का ही कृत्य है, राम नाम सत्य है, अरिहन्त नाम सत्य है।।

यह कविता कवि की मात्र कल्पना ही नही है, अपितु जीवन के कायाकल्प का मंत्र है। काश! आदमी जीते जी इस सच्चाई को स्वीकार कर ले, तो मनुष्य का जीवन तीर्थ बन जाये, गीता बन जाये, गंगा बन जाये। जो इस सच्चाई को मान लेता है, निश्चित ही वह जीते जी मृत्यु को महोत्सव का रूप देना शुरू कर देता है। **मृत्यु को सुधारने से मृत्यु कभी नहीं सुधरेगी। हाँ! जीवन को सुधारने से मृत्यु सुधर जाती है।**

ईमानदारी की लौ

सभी धर्म शास्त्रो मे मनुष्य के चारित्रिक जीवन की बुनियाद ईमानदारी को बताया है। ईमानदारी मानव-जीवन की रक्षक है। हृदय की सरलता ईमानदार को ही मिलती है। वह प्रत्येक व्यक्ति का विश्वासपात्र बन जाता है। ईमानदारी का मतलब है – अपनी विश्वसनीयता न खोना। अपनी आत्मा के प्रति, भगवान के प्रति और समाज के प्रति पूरी वफादारी रखना। **'जिसके जीवन में है ईमान, उसका रक्षक है भगवान।'**

व्यावहारिक जीवन किसी मजदूर को पैसे कम देकर श्रम अधिक कराना, नाप-तौल मे चोरी करना, माल मे मिलावट करना, अच्छी वस्तु दिखाने के बाद घटिया वस्तु देना, नकली माल को असली बताकर बेचना, टेक्स कम देने के लोभ मे बहीखातो मे गड़बडी करना या डुप्लीकेट बहीखाते बनाना, किसी की अमानत रखी रकम को हजम कर लेना, किसी कमजोर व्यक्ति का धन डकार जाना, रिश्वतखोरी करना, सामान्य से अधिक ब्याज लेना, ब्लेक मार्केटिग करना, झूठे प्रमाण-पत्र देना, झूठे दस्तावेज बनाना, काम कम करके वेतन पूरा लेना आदि सभी वाते बेईमानी और अप्रामाणिकता की श्रेणी मे आती है। भले ही लोग इसे चतुराई समझे, जबकि ईमानदारी सर्वश्रेष्ठ नीति है।

लोभ और ईमानदारी मे वैर है। जहॉ लोभ होगा, वहॉ ईमानदारी टिक नही सकती। यथार्थता और ईमानदारी दोनो सगी बहने है। व्यवसाय के पीछे जब ईमानदारी नही रहती, तो सेवा भावना नष्ट हो जाती है। लूटने, खसोटने और धन बटोरने की नीयत बढ़ जाती है। फलत. मनुष्य अपने दीन और ईमान को खोकर पाप की गठड़ी ही परलोक मे ले जाता है। अतः **मित्रो! हर क्षेत्र में ईमानदारी की लौ जगाइये।**

मृत्यु को जीतने की कला

भारतीय संस्कृति मे मृत्यु के सम्बन्ध मे जो विचार प्रगट किए गए है, वे बडे मधुर है। **मृत्यु ! जीवन-वृक्ष का फल है, महायात्रा है, महानिद्रा है, जो नई ताजगी और नया उत्साह प्रदान करती है। यदि मृत्यु नहीं होती, तो संसार कुरूप हो जाता।** आज संसार मे जो सुन्दरता के दर्शन हो रहे है, वे मृत्यु के कारण ही है। मृत्यु मानव को पाप से बचाती है और जीवन मे सत्कर्म करने के लिए उत्प्रेरित करती है। एक कवि ने बड़ी मार्मिक बात कही है – **'मौत जब तक नजर नहीं आती, जिन्दगी राह पर नहीं आती।'**

व्यापारी दिन भर व्यापार करता है और संध्या को यह देखता है कि दिनभर के श्रम का उसे कितना लाभ हुआ है या हानि हुई है। मृत्यु भी जीवन के कार्यो की जॉच करने की संध्या है। इस संध्या मे यह देखना है कि जीवन मे क्या पाया है, क्या खोया है?

शरीरधारी सभी प्राणियो को एक-न-एक दिन मरना तो है ही, परन्तु एक धीरतापूर्वक, सदाचार, सत्य, संयम और धर्मपालन करते हुए हॅसते-हॅसते मरता है, उसे जैन शास्त्रो मे समाधि मरण कहा गया है। दूसरा अज्ञानपूर्वक बिना सत्कर्म किए, बिना धर्मपालन किए, रोते-बिलखते हुए मरता है, उसे बाल-मरण कहा है।

धर्म के लिए, अपने आदर्श के लिए और सत्य के लिए मर मिटने वालो की संख्या दुनिया के इतिहास मे भले ही कम हो, मगर वे प्रकाश किरण की तरह प्रेरणा देने वाली है। इनमे करुणा के सागर ईसामसीह, सत्यवीर सुकरात, आजादी का दीवाना सुभाषचंद्र बोस, देशभक्त सरदार भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद और सत्य व अहिंसा के महात्मा गॉधी प्रथम पंक्ति मे आते है। इसी प्रकार जैन शास्त्रो मे अनेक उदाहरण धर्मवीरो के मिलेगे, जिन्होने धर्म और आदर्श पर शान्ति और समभाव से अपने प्राण कर दिये। ऐसे धर्मवीरो मे स्कन्दमुनि, गजसुकुमाल आदि प्रथम पंक्ति मे आते धर्म के लिए मर मिटने वालो मे सिक्ख सम्प्रदाय के दो नरवीर – फतहसिंह और जोरावरसिंह भारतीय इतिहास में अमर है।

ईसा मसीह अपने आदर्श के लिए बलिदान हो गए। सत्यवीर सुकरात सत्य के लिए मर-मिटने मे जरा भी नही हिचकिचाए। सुभाषचंद्र बोस, सरदार भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद आदि नरवीर स्वदेशभक्ति से प्रेरित होकर आजादी के लिए मर-मिटे। सत्य व अहिंसा के पुजारी महात्मा गॉधी जब गोलियो के शिकार हुए, तो बापू जरा भी घबराए नही और न उन्होने नाथूराम गोडसे को कुछ बुरा-भला कहा। क्रोध न करते हुए शांत भाव से अंतिम समय मे उन्होंने अपने मुख से 'हे राम!' का ही उच्चारण किया। बिहार के चम्पारन जिले मे गांधीजी ने जब सत्याग्रह किया, उस समय एक अंग्रेज ने प्रतिज्ञा की कि "यदि गांधीजी मुझे एकांत में मिल जाए, तो मै उन्हे गोली से उड़ा दूँगा।"

बापू के कानो मे यह बात पड़ी। वे मृत्यु से कब डरने वाले थे? दूसरे दिन सुबह ही वे उस अंग्रेज के घर पर पहुँच गए और कहा – "तुमने कल गांधी को मारने की प्रतिज्ञा की थी न? लो, अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण कर लो। मै स्वयं तुम्हारे सामने खडा हूँ।" अब वह अंग्रेज क्या बोलता? वह पानी-पानी हो गया और गाँधीजी से क्षमा माँगने लगा।

हाँ, तो कहने का तात्पर्य यह है कि मृत्यु भी एक कला है, **जिसके लिए जीवन भर साधना करनी पड़ती है,** जीने की कला सीखनी पडती है, विचारो को साफ करना पडता है, आत्मा पर आए हुए विकारो को, मोह के जालो को हटाना पडता है, तभी मनुष्य जीने की कला मे प्रवीण होता है। **जो जीने की कला सीख लेता है, वह पुरुष इस दुनिया में अपने कर्तव्य के लिए जीता है और कर्तव्य के लिए ही मर मिटता है। उसे मृत्यु का भय नहीं रहता, बल्कि मृत्यु उससे डरती रहती है** और समय से पहले उसके पास आने से डरती है। मृत्यु को सफल बनाना सीखिये। मृत्यु को एक महोत्सव मानकर उसकी खुशियाँ मनाइये, **सबसे क्षमायाचना और मैत्रीभावना के साथ विदा होइये। विकारों और वासनाओं की धूल यहीं झाड़कर अपनी आत्मा को शुद्ध, पवित्र और निर्मल बनाइये; यही मृत्युञ्जय मंत्र है, यही मृत्युकला का रहस्य है।**

卐 सत्य वचन 卐

जीवन, इस शरीर रूपी पिंजडे मे बंद पक्षी के पंखो की फडफडाहट मात्र है,
जीवन और मृत्यु, साँस भीतर लेने और बाहर निकालने के समान है।
जो यह नही जानते कि आत्मा अजर-अमर है, वे ही मृत्यु से काँपा करते है।।

अज्ञानी व मोही के लिए, मृत्यु अभिशाप रूप है। जबकि,
ज्ञानी व निर्मोही साधक के लिए, मृत्यु वरदान स्वरूप है।

मृत्यु अर्थात् परमात्मा को बीते हुए जीवन का हिसाब देने का पवित्र दिन।
सफल मृत्यु उसी की होती है, जो जीने की कला को समझ लेता है।।

जीवन भर किसी अच्छे विचार पर अमल करना,
और उसी के लिए मरना, यही शहादत है।

मृत्यु रोग है, तो जन्म भी रोग है

ज्ञानी कहते है – **जन्म और मृत्यु दुनिया के दो महारोग है,** जिससे प्रत्येक प्राणी पीड़ित है। डॉक्टर रोग का उपचार कर सकते है, लेकिन मृत्यु का नही। **मृत्यु का तो एक ही उपचार है और वह है – मोक्ष। मृत्यु रोग है, तो जन्म भी रोग है।**

जन्म रोग है, इसलिए जन्मदिवस पर बहुत ज्यादा हर्षित होना उचित नही, बल्कि जन्म दिवस को एक 'चेतावनी दिवस' के रूप में लेवें। दरअसल हर जन्मदिवस एक चेतावनी है कि जीवन के इतने बसंत मुट्ठी की पकड से फिसल चुके है। अब जो कुछ थोड़ा समय शेष है, उसे धर्मसाधना के जरिये 'उत्तम' बना ले, वर्ना जीवन के अन्त मे पछताना पडेगा। जन्म दिवस की चेतावनी को समझे और अर्थी उठने से पहले जीवन के अर्थ को समझ ले।

"राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार, मरना सबको एक दिन अपनी-अपनी बार।"

आदमी कहता तो यह है कि – 'भाई! सबको ही आज या कल मर जाना है, लेकिन उसकी क्रिया कलाप को देखकर तो लगता है कि वह कभी नही मरेगा।' यह कैसा विरोधाभास है? कैसी विडम्बना है?

कथानक – एक दिन दो महिलाएँ मिली। फिर उनमे कुछ बात चली। एक महिला ने कहा – बहिन! आजकल की औरतो मे कितनी खराब आदत है। जब देखो तब अपने पतियो की निन्दा ही करती रहती है। उन्हे भला-बुरा कहती रहती है। निन्दा करना, वह भी अपने पति की, बहुत बुरी आदत है। औरतो को ऐसा कतई नही करना चाहिए। अब ही देखो, मेरा पति कितना निकम्मा है, आलसी है, मूर्ख है, लेकिन मैंने कभी किसी को भी नही कहा है कि मेरा पति ऐसा है, वैसा है। यही घटना आज हर व्यक्ति के जीवन चरितार्थ हो रही है। **ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति !! ॐ शान्ति !!!**

जीवन निर्माण की संजीवनी बूटी - 'विनय'

जीवन के एक विशिष्ट गुण को प्रमुख माना है, उसे जीवन-निर्माण की नींव बताया है, वह गुण है – **विनय।** जीवन मे उन्नति की पहली सीढी विनय है। विनय मोक्ष का द्वार है। विनय को ही धर्म का मूल कहा है अर्थात् विनय ही धर्म का प्राण है। ज्ञान प्राप्ति के लिए विनय आवश्यक है। विनय मे अद्भुत शक्ति होती है। विनयशील व्यक्ति सर्वत्र सम्मान पाता है। परमात्मा के चरणो मे स्थान पाने का एकमात्र अधिकारी विनयशील व्यक्ति होता है। विनय एक तप है। विनय वह लौह चुम्बक है, जो सभी सद्गुणो को अपनी ओर आकर्षित करता है। विनय की प्रबलधारा बड़े मे बड़े कठोर हृदय को कोमलता मे बदल देती है। विनय सच्चा प्रकाश है, सच्चा विकास है, गुणो का पुंज है। जिसने विनय को अपना लिया, उसने समस्त गुणो को अपना लिया।

सहिष्णुता / समभाव की पूजा

कथानक – करोडो की लागत का एक विशाल, कलापूर्ण, अनुपम, आकर्षक, दर्शनीय मंदिर था। उसमे प्रतिष्ठापित एक प्रतिमा दिव्य तेज से चमक रही थी। श्रद्धालु नर-नारियो का समूह उमड रहा था। घी के दीपक जल रहे थे। पूजा-आरती हो रही थी। भक्ति भरे गीतो की अद्भुत मस्ती थी। पूरा वायुमंडल श्रद्धा और भक्ति से परिपूर्ण था।

चिन्तक के हृदय मे एक प्रश्न उपस्थित हुआ – 'प्रतिभा ने कौन-सी विशिष्ट साधना की? जो इतनी पूजा हुई।'

मौन स्वर मे प्रतिभा का उत्तर था – 'साधना की नही, समभाव की साधना हुई। किसी मे स्वतत्र कर्तृत्व नही। व्यक्ति का महत्व नही। महत्व है – समभाव का।'

सिद्धहस्त मूर्तिकार के कुशल हाथो से मेरा सृजन हुआ। उसके नुकीले उपकरणो द्वारा पूरा शरीर टॉचा गया, खुरचा गया और छेदा गया। ऑख और कान जैसे कोमल अंग भी अछूते नही रहे। तिस पर भी मैने न आहे भरी, न ऑसू बहाये। फरियाद तो दूर रही, मगर कष्ट भी नही माना और न खंडित हुई।

मन शांत हो चुका था। उसी का परिणाम है – यह पूजा। पूजा मेरी नही, समभाव की है, सहनशीलता की है। समभाव पर भला कौन नही झुकता? सारी दुनिया फिदा है। **दृष्टभाव की साधना से मन शांत बनता है, तभी समभाव सधता है। जय समभाव।**

◇◇

कथानक – चिन्तक के हृदय मे एक प्रश्न उपस्थित हुआ – चमडे के जूते-चप्पल मंदिर के बाहर और ढोल-नगाडे चमडे के होकर भी मंदिर के अन्दर। यह भेदभाव क्यो?

संध्या का समय हुआ और मंदिर मे लोगो की भीड उमड़ने लगी। थोडी ही देर बाद पुजारी ने आरती प्रारम्भ की। मंदिर मे जोरो से घंटे बजने लगे और उसके साथ ही ढोल व नगाडे भी बजने लगे। चिन्तक ने देखा कि एक भाई हाथ मे लंबी दंडियो को लेकर उस ढोल को जोर-जोर से पीट रहा है। जैसे ही उसने यह दृश्य देखा, उसे प्रश्न का जवाब मिल गया। .... **जय सहिष्णुता! जय समभाव!!**

◇◇

❑ '**बॉसुरी** के स्वर मे मधुरता होती है, परन्तु उसकी देह की ओर नजर डाले तो उसमे अनेक छेद मिलेगे। बॉसुरी ने छेद की पीड़ा सहन की, समभाव रखा, इसी कारण उसके स्वर मे मिठास है।

❑ **दही-बड़ा** भी समभाव की ही कहानी कह रहा है। मूँग को सर्वप्रथम पानी मे डूबना पडा, फिर उसके शरीर से चमडी (छिलके) उखाडी गई, फिर मिक्सर मशीन मे पीसी गई। घायल शरीर पर नमक-मिर्च छिड़का गया, फिर उवलते तेल मे तला गया। समताभाव से इतना सब कष्ट सहा, तब कहलाया – **बड़ा!'**

भगवान महावीर ने अपने साधना काल मे खूब उपसर्ग झेले, परिषह सहे।

कथानक – एक वार जव वे छम्माणि गॉव मे ध्यानस्थ थे, एक ग्वाला अपने बेल लेकर वहाँ आया तथा उनको कहा कि 'आप इनका ध्यान रखना'। महावीर उस समय पूर्ण मौन कायोत्सर्ग ध्यान साधना मे थे। उन्होने कोई उत्तर नही दिया।

थोड़ी देर वाद जव वह वापस आया, तो उसके बैल, उसको वहाँ नही मिले। उसने महावीर से बैलो के वारे मे पूछा। महावीर ने कोई उत्तर नही, क्योकि वे तो तब भी मौन ध्यान साधना ही मे थे। क्रोधित होकर उसने महावीर के कानो मे कीले ठोक दी। उन्हे असह्य वेदना हुई पर उन्होने उफ तक नही की। समभाव रखा और सहन कर गए।

* इसी प्रकार महावीर की साधना डिगाने देवलोक से संगम नामक देव आया। उसने महावीर को माता-पिता, भाई-वहन का करुण विलाप सुनाकर उन्हे संयम से डिगाने की कोशिश की, मगर वे डिगे नही। संगम ने अप्सराओ को भेजा, आंधी चलाई, विषैली चींटियो, मच्छरो एवं बिच्छुओ के दल से उनकी देह के रोम-रोम पर आक्रमण कराए, पर महावीर विचलित नही हुए। संगम ने ग्वाले का रूप बनाया। ध्यानस्थ महावीर के पॉवो से सटाकर लकड़ियाँ जलाई और उन पर खीर पकाने लगा। महावीर की त्वचा जलने लगी, मांस जलने लगा, हड्डियाँ जलने लगी, परन्तु देहातीत से महावीर का एक रोम तक विचलित नही हुआ। आखिरकार हार मानकर संगम उनके चरणो मे गिर गया और क्षमा मॉगने लगा। यह थी महावीर की सहिष्णुता, पवित्र समभाव।

जैन शास्त्रो मे एक रोमांचक कथा का वर्णन आता है, जो इस प्रकार है -

कथानक – देवकीनंदन गजसुकुमाल मुनि नगर के वाहर श्मशान भूमि मे कायोत्सर्ग ध्यान मे खड़े है। इसी समय इनके श्वसुर सौमिल ब्राह्मण का वहाँ आगमन हुआ। मुनि को देखकर उसकी क्रोधाग्नि भड़क उठी। उसने सोचा इसके मुनि बन जाने से मेरी पुत्री की जिन्दगी विगड़ गई है। बस! वैर का बदला लेने की भावना उठी। पास ही मे एक शव जल रहा था। उसने पास मे से थोड़ी गीली मिट्टी उठाई और मुनि के मस्तक पर चारो ओर मिट्टी की पाल वनाकर उसमे जलते हुए अंगारे भरकर वहाँ से चल दिया।

अंगारे मुनि के मस्तक को जला रहे है, फिर भी मुनि स्थिर चित्त खड़े है, श्वसुर के प्रति रोष-भाव नही वल्कि यह सोच रहे है कि – 'जो जल रहा है वह मै नही हूँ, देह जल रहा है।' वे आत्मा के वास्तविक स्वरूप को जान चुके थे। उनके मन मे आत्मा मूल्यवान वस्तु थी और देह तुच्छ। वे तो अडिग खडे सोच रहे है कि यदि एक भी अंगारा नीचे गिर गया, तो छोटे-छोटे निरपराधी जीव वेमौत मारे जाएँगे, अत. मस्तक को लेश मात्र भी नही हिलाते है।

दु:ख मे आर्त्तध्यान करने से पुनः नये कर्मो का वंध होता है, इससे आत्मा का संसार चक्र चलता ही रहता है। जवकि दु:ख तो पूर्वकृत कर्म के उदय के कारण आता है और भोगना ही पडता है। दु:ख मे समता धारण करने से पुन. नये कर्म का वंध नही होता है।

एक नवदीक्षित मुनि थे। बाल्यकाल मे दीक्षा ले ली थी। समर्थमुनि के नाम से जाने जाते थे। इनको भूख सहन नही होती थी। अष्टमी-चौदस को भी उपवास का तप नही कर पाते थे, किन्तु राग-द्वेष को जीतने का सदा प्रयत्न करते रहते थे। एक दिन संवत्सरी पर्व आया। इस दिन छोटे-बडे सभी उपवास का तप रखते है। सभी साथी मुनियो के उपवास का तप था, किन्तु समर्थ मुनि उपवास नही कर सके। भिक्षाचर्या से जो आहार मिला, उसे आचार के नाते गुरु भाई को आहार दिखाकर आज्ञा माँगी। इनके इस अतप से गुरु भाई क्रोधित हो गए एवं आहार पात्र मे थूक दिया। समर्थ मुनि धैर्य धारण किये हुए थे, वे शान्त रहे तथा गुरु भाई से क्षमा-याचना की और कहा कि – "मै आपके लिये थूक पात्र नही ला सका, इसलिए मेरा अपराध क्षमा करे।" अब समर्थ मुनि अपने आपको धिक्कारने लगे कि मै कैसा हूँ? जो भूख व आहार पर नियंत्रण नही कर पा रहा हूँ। मेरे गुरु भाई और दूसरे मुनि वृन्द कितनी तपस्या कर रहे है। भावो की तन्मयता से अपने आपको धिक्कारते हुए प्रायश्चित करते-करते समर्थ मुनि को 'केवल ज्ञान' हो गया।

◇◇

❑ **महाराष्ट्र के एक महान साधक सन्त एकनाथ** गोदावरी नदी मे स्नान कर आते और घर आते समय मार्ग मे एक पुरुष उन पर थूक देता। सन्त पुनः नदी पर जाते, स्नान करते और घर की ओर प्रस्थान करते। पर वह पुरुष फिर उन पर थूक देता। वे पुनः स्नान कर आते। स्नान करने और थूकने का क्रम चलता रहा। उन्हे इक्कीस बार स्नान करना पड़ा। अन्त मे वह पुरुष हार गया और जब सन्त इक्कीसवी बार स्नान कर आ रहे थे, तब वह पैरो मे लुढककर क्षमा-याचना करने लगा। सन्त ने उसे उठाकर छाती से लगाते हुआ कहा – 'भाई! तुम मेरे परम सखा हो। मै माँ गोदावरी की गोद मे प्रतिदिन एक बार जा पाता था, आज तुम्हारे योग से माँ की गोद मे इक्कीस बार जाने का सुअवसर मिला। धन्य हो गया। तुम मेरे उपकारी हो।' ऐसे अनेक दृष्टान्त जैन ग्रन्थो मे भी विद्यमान है।

◇◇

❑ एक बार भगवान महावीर एक टीले पर ध्यान मग्न थे। कुछ उद्दण्ड लडके वहाँ आकर उन्हे हिलाने-डुलाने लगे। जब महावीर कुछ न बोले, तो उन्होने धक्का देकर महावीर को टीले से नीचे गिरा दिया। महावीर लुढकते हुए टीले से नीचे पहुँच गए, मगर वहाँ पर भी वैसे ही पडे रहे, जब तक कि उनका ध्यान पूरा नही हुआ। ध्यान पूरा होने पर वे उठे और बगैर किसी से कुछ कहे शान्त-भाव से आगे बढ़ गये।

◇◇

❑ स्वामी रामदासजी एक बड़े भारी सन्त हुए है। उनका एक शिष्य एक बार किसी गृहस्थ के यहाँ भिक्षा लेने गया। गृहस्थ ने आहार तो नही दिया, किन्तु बदले मे बहुत सी गालियाँ दी। शिष्य ने गालियाँ शांति से सुन ली और एक कपड़े मे कई गाँठे लगाकर उसे झोली मे डाल लिया। अपने स्थान पर जब वह लौटा, तो भिक्षा गुरु को दिखानी चाही। गुरुजी ने चकित होकर पूछा – यह क्या है? शिष्य ने बताया कि – गुरुदेव! आज गालियो की ही भिक्षा मिली है। गुरुजी अपने शिष्य की समता पर बहुत प्रसन्न हुए और कहा कि – **सहनशीलता कड़वी होती है, लेकिन उसका फल मीठा होता है।**

घर में ही वैरागी

संसार क्या है? पति-पत्नी, बच्चे, घर-मकान ही संसार नही है, अपितु इनके प्रति जो आसक्ति है, मूर्च्छा है, वह संसार है। 'आसक्ति' और 'मूर्च्छा' का मिट जाना ही संन्यास है। मन मे जो संसार है, उसे निकाल फेकने की जरूरत है और यदि भीतर से संसार निकल जाए, तो फिर ये घर, मकान ही 'साधना-स्थल बन सकते है, आश्रम बन सकते है। उसे बाहर जाने की जरूरत नही।'

जनक सेठ सुदर्शन जैसे- सद्गृहस्थ, गृहस्थवास मे रहते हुए भी विरक्त और धर्मनिष्ठ थे। जैन आगमो मे उल्लेख मिलता है कि चक्रवर्ती भरत घर मे ही वैरागी थे। कीचड़ मे कमल की तरह अलिप्त थे। सम्यग् दृष्टि थे, परमात्मा के परम भक्त थे। प्रतिदिन देव पूजा, गुरु उपासना, स्वाध्याय, संयम, तप और दान सभी का पालन करते थे।

कथानक – चक्रवर्ती भरत के जीवन की एक घटना है कि एक दिन विप्रदेव ने उनसे पूछा – 'महाराज। आप वैरागी है, तो फिर महल मे क्यो रहते है? और चूँकि आप महल मे रहते है, तो वैरागी कैसे? माया मध्य आप किस तरह वैरागी है? क्या आपके मन मे कोई पाप, विकार और वासना के भाव नही आते?' चक्रवर्ती भरत ने कहा – 'विप्रदेव! तुम्हे इसका समाधान मिलेगा, किन्तु पहले तुम्हे एक कार्य करना होगा।' जिज्ञासु ने कहा – 'कहिये महाराज। आज्ञा दीजिये। हम तो आपके सेवक है ओर आपकी आज्ञा का पालन करना हमारा कर्तव्य है।'

भरत ने कहा – 'यह पकडो तेल से लबालब भरा कटोरा। इसे लेकर तुम्हे मेरे अन्त:पुर मे जाना है, जहाँ मेरी अनेक रानियाँ जो सज-धजकर तैयार मिलेगी, उन्हे देखकर आओ और बताओ कि मेरी सबसे सुन्दर रानी कौन-सी है?' भरत की इस बात सुनकर जिज्ञासु बोला – 'महाराज। आपकी आज्ञा का पालन अभी करता हूँ। अभी और अभी आया।' तब भरत बोले – 'भाई! इतनी जल्दी न करो। पहले पूरी बात सुन लो – तुम्हे अन्त·पुर मे जाना है – पहली बात। सबसे अच्छी रानी का पता लगाना है – दूसरी बात। लबालब तेल भरा कटोरा हाथ मे ही रखना – तीसरी बात तथा तुम्हारे पीछे दो सैनिक नंगी तलवारे लेकर चलेगे और यदि रास्ते मे तेल की एक बूंद भी गिर गई, तो उसी क्षण ये सैनिक तुम्हारी गर्दन धड से अलग कर देगे – चौथी बात।'

वह व्यक्ति चला। हाथ मे कटोरा है और पूरा ध्यान कटोरे पर। एक-एक कदम फूँक-फूँक कर रख रहा है। अन्त:पुर मे प्रवेश करता है। दोनो तरफ रूपसी रानियाँ खड़ी है। पूरे महल मे मानो सौन्दर्य छिटका हुआ है। कही संगीत, तो कही नृत्य चल रहा है लेकिन उसका मन कटोरे पर अचल है। चलता गया, बढता गया और देखते ही देखते पूरे अन्त:पुर की परिक्रमा लगाकर चक्रवर्ती भरत के पास वापिस आ पहुँचा। पसीने मे तर-बतर था। बडी तेजी मे हाँफ रहा था। चक्रवर्ती भरत ने पूछा – 'बताओ मेरी सबसे सुन्दर रानी कौनसी है?' जिज्ञासु बोला – 'महाराज आप रानी की बात पूछ रहे है।

कैसी रानी? कहॉ की रानी? किसकी रानी? मुझे कोई रानी-वानी नही दिख रही थी। मुझे तो कटोरे मे अपनी मौत दिख रही थी। सैनिको की चमचमाती नंगी तलवारे दिख रही थी।'

'वत्स। बस यही तुम्हारी जिज्ञासा का समाधान है, तुम्हारे सवाल का जवाब है।'

जैसे तुम्हे अपनी मौत दिख रही थी, रानियॉ नही, रानियो का रूप-रंग सौन्दर्य नही और इस बीच रूपसी रानियो को देखकर तुम्हारे मन मे कोई पाप, विकार नही उठा, वैसे ही **मैं भी हर पल अपनी मृत्यु को देखता हूँ। मुझे हर पल मृत्यु की पदचाप सुनाई देती है और इसलिए मैं इस संसार की वासनाओं के कीचड़ से ऊपर उठकर कमल की तरह खिला रहता हूॅ। राग-रंग में भी वैराग की चादर ओढ़े रहता हूॅ। इसी कारण माया मुझे प्रभावित नहीं कर पाती।**

जीवन की चादर को साफ, स्वच्छ और ज्यों की त्यों रखनी है, तो इस जीवन क्रांति के लिए एक ही सूत्र है और वह है – मृत्यु बोध। उस मृत्यु का कोई मुहूर्त नही होता है। ख्याल रखे – न तो जन्म का कोई मुहूर्त होता है और न ही मृत्यु का। गृह-प्रवेश का तो मुहूर्त होता है, किन्तु गृह-त्याग का नही। सांसारिक मोह-माया की नश्वरता का बोध होते ही ज्ञानी पुरूष संसार को छोड़कर वन की तरफ चल देता है क्योकि जीवन तो वन मे ही बनता है। भवनो मे तो जीवन सदा उजडता रहा है। 'वन', बनने की प्रयोगशाला है। राम वन गए तो बन गए, महावीर वन गए तो बन गए।

कथानक – एक सेवानिवृत्त जज थे। बडे विद्वान और विचारक थे। वे हर रोज सायंकाल घूमने के लिए जाया करते थे। एक दिन जब वे लौट रहे थे, तो कुछ अंधेरा हो चला था। सडक के दोनो ओर झुग्गी-झोपडी वाले रहते थे। झुग्गी-झोपडी का एक पुरुष काम करके झोपडी मे लौटा ही था कि उसने घर मे अंधेरा देखकर अपनी बेटी को आवाज दी और कहा – 'बेटी। **संध्या हो गई है और तूने अभी तक दीया नहीं जलाया।'** जैसे ही ये शब्द रिटायर्ड जज के कानो मे पडे, तो उनके कदम यकायक ठिठक गए। वे विचारो मे खो गए। उन्होने सोचा – 'मेरे जीवन मे भी संध्या हुए कितनी देर हो गई और मैने अभी तक अपने जीवन का कोई दीया नही जलाया।' ज्ञान का, ध्यान का, धर्म साधना का दीया जलाने का समय बीता जा रहा है और मै अभी तक बेखबर ही हूॅ। ऐसा सोचते-सोचते उनके विचारो ने एकदम से मोड खाया और इस घटना से उनका पूरा जीवन बदल गया तथा दूसरे ही दिन घर की पूरी जिम्मेदारी अपने बच्चो को सौपकर संन्यासी बन, वन की ओर चल दिये।

बन्धुओ! चिन्तन करे – अपनी जिन्दगी भी बहुत वीत चुकी है और वची हुई जिन्दगी भी नदी की धार की तरह तेज भागती जा रही है। अव भी ऑख नही खोलेगे, तो फिर कब खोलेगे? अपनी ऑखे हमेशा-हमेशा के लिए बंद हो जाये,
अपनी इन ऑखो मे धर्म ध्यान का काजल आंज **लेवे। ऑखो** मे
आंजने की कला सीख लेवे। जो अपने आत्म- ले ले
बनेगा। आत्मा की अमरता पर विश्वास रखे।

जीने की कला

मनुष्य खाता है, पीता है, चलता-फिरता है, कमाकर अपना या कुटुम्बियो का पेट भर लेता है, वच्चे पैदा कर लेता है, एकाध मकान खडा कर लेता है। क्या इतने से ही हम उसे मानव-जीवन कह देगे? क्या मानव-जीवन का मूल्यांकन हम इसी आधार पर करेगे? यदि ऐसा ही है, तो कुत्ता, बिल्ली, पशु-पक्षी और मानव मे क्या फर्क रहेगा। पशु-पक्षी भी इधर-उधर भटककर अपना पेट भर लेते है। तव प्रश्न उठता है – मानव-जीवन क्या है?

मानव जीवन परमात्मा द्वारा प्रदत्त एक उपहार है। इस उपहार का उपहास न हो, ऐसा जीवन जीना चाहिये। 'जो जीवन दोषो से, विकारो से रहित होकर जिया जाता है, वही वास्तविक मानव-जीवन है। उस व्यक्ति का जीवन सच्चा जीवन है, जो विकारो से जूझता हुआ जीता है, शेर की तरह निर्भयतापूर्वक गरजता हुआ, अन्याय, अत्याचार, अनाचार और भ्रष्टाचार से संघर्ष करता हुआ चलता है, जो गजराज की तरह मस्ती मे झूमता हुआ दु:ख, असन्तोष, कलह, राग-द्वेष आदि पापो को परास्त करता हुआ, निश्चिन्ततापूर्वक जीता है।' जिन्दगी जीने का अर्थ हुआ – 'विकारो से, वासनाओ से जूझना, दीपक की तरह प्रकाश करते हुए जीना और सत्कर्म करते हुए जीना।'

जीवन क्या है? इस सम्वन्ध मे एक जिज्ञासु के प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा टॉल्सटॉय ने एक घटना सुनाई – "एक वार एक यात्री जंगल से गुजर रहा था। अचानक एक जंगली हाथी उसकी ओर झपटा। बचाव का अन्य कोई उपाय न सूझने पर वह पास ही के एक कुएँ मे कूद पडा। कुएँ के बीच मे ही एक वरगद का पेड था। यात्री उसी की पतली डाल पकड़कर लटक गया। कुछ देर बाद उसकी दृष्टि कुएँ मे नीचे की ओर गई। नीचे एक विकराल मगरमच्छ अपना मुँह फाडे उसके नीचे गिरने की प्रतीक्षा कर रहा था। डर के मारे उसने अपनी निगाह ऊपर कर ली। ऊपर उसने देखा कि उसी पेड पर शहद के एक छत्ते से बूँद-बूँद शहद टपक रहा था। शहद के मीठे स्वाद के सामने वह भय को भूल गया। उसने टपकते हुए शहद की ओर बढ़कर अपना मुँह खोल दिया और तल्लीन होकर बूँद-बूँद शहद पीने लगा। किन्तु यह क्या? उसने आश्चर्यचकित होकर देखा कि वह जिस डाली के मूल को पकड़कर लटका हुआ है, उसे एक सफेद और एक काला, ये दो चूहे कुतर रहे थे।"

जिज्ञासु की प्रश्न-सूचक मुद्रा देखकर महात्मा टॉल्सटॉय ने रहस्य से पर्दा उठाते हुए कहा – 'वह हाथी काल था, मगरमच्छ मृत्यु था, शहद जीवन रस था और काला तथा सफेद चूहा रात-दिन। इन सवके बीच रहते हुए, इन सवके साथ सावधानीपूर्वक संघर्ष करते हुए जीवन विताना ही मानव-जीवन है।'

धर्म-आराधना जीने की कला है। जिसे जीने की कला नही आती है, वह जीता नही, जीवन ढोता है। जीने और ढोने मे बड़ा फर्क है। जीने का अर्थ है – ऐसा जीवन जिसमे उत्साह है, उल्लास है, उमंग है, आनन्द है, रस है और ढोने का अर्थ है –

ऐसा जीवन, जिसमे पीड़ा है, विषाद है, खेद है, उदासीनता है। दुनिया मे बहुत से आदमी तो जीवन को ढो रहे है।

नियंत्रित, संयमित और मर्यादित जीवन जीना ही कला है। कला का उद्देश्य मानव-जीवन को विकृत बनाना नही, अपितु सुसंस्कृत बनाना है। भारतीय मुनि-मनीषियो ने कला को सत्य की अभिव्यक्ति के लिए माना है। जहाँ कला का उपयोग स्वार्थ-साधना के लिए, विलासिता के लिए या धन के लिए किया जाता है, वहाँ सत्य मर जाता है। कला का आविर्भाव जब आत्मा से या अन्तर से होता है, तो उसका उपयोग सत्य के लिए, ध्येय के लिए या आत्म-कल्याण के लिए होना चाहिए।

जीने की कला बस यही है कि जो अपने पास है, उसी में जिएँ। जो अपने पड़ौसी के पास है, उस पर दृष्टि न रखे। आवश्यकता मे जिएँ, आकांक्षाओ (इच्छाओ) के पीछे न भागे। जीवन मे धर्म और अध्यात्म का भी स्थान हो। जीवन मे मृत्यु को सदा स्मरण रखे, दृष्टि मे रखे। सम्राट भरत चक्रवर्ती की तरह घर मे रहकर वैरागी बनकर और महाराजा जनक की तरह देह मे रहकर विदेही बनकर जिएँ। कितने साल जिएँ – यह महत्वपूर्ण नही, अपितु कितने सानंद जिएँ, किस शैली से जिएँ, यह महत्वपूर्ण है। **ढंग से जीना ही जीवन है। ढोंग से जीना तो केवल उम्र को ढोना है। जीना नही, सिर्फ जीने का अभिनय करना है।**

जीवन क्षणभंगुर है। तन के पिंजरे से कब प्राण-पखेरू उड जाये, क्या भरोसा? इसलिए जीवन मे जो करने जैसा है, उसे अविलम्ब कर लेना चाहिए। जो शुभ है, पुण्य है, हितकर है, उसके करने मे प्रमाद करना भयंकर भूल है। रात को सोने से पहले दिन-भर के जीवन का हिसाब लगाकर और अगले दिन की पूरी तैयारी करके सोएँ।

मानव जीवन मे जब सत्यं, शिवं और सुन्दरम् को लेकर कला आती है, तब वह मानव को पशुत्व से ऊपर उठाकर क्रमशः मानवत्व, देवत्व और अन्त मे भगवत्व की कोटि मे ले जाती है। कला का जो रूप सत्य के लिए, सेवा के लिए, किसी सिद्धांत या ध्येय के लिए हमारे सम्मुख मंगलमय बनकर आता है, वही कला जीवन मे आनन्ददायिनी है, वास्तविक सुन्दरता से ओत-प्रोत है।

जो जीने की कला जान लेता है, वह व्यक्ति अपने जीवन की प्रत्येक छोटी से छोटी प्रवृत्ति करते समय सावधानी रखता है, वह अपनी प्रत्येक प्रवृत्ति, क्रिया या हलचल सत्य के लिए, जगत के हित के लिए, सेवा के लिए और मंगल के लिए करता है। वह दूसरो के जीवन का ध्यान रखते हुए, दूसरो को जिलाते हुए जीता है, वह ऐसा कोई भी कार्य नही करता, जिससे दूसरो का अहित होता हो, दूसरे दुःख मे पड़ते हो।

एक आदमी जीने के लिए खाता है, तो दूसरा खाने के लिए ही जिन्दा रहता है। एक सर्दी-गर्मी से बचने और लज्जा निवारण के लिए कपडे पहनता है, दूसरा मौज-शौक और फैशन के लिए कपडे पहनता है। एक व्यक्ति पैसे कमाने, प्रतिष्ठा बढाने और

स्वार्थसिद्धि करने के लिए अच्छा बोलता है या लिखता है, किन्तु दूसरा व्यक्ति जगत के, समाज के व अपने आत्महित के लिए निःस्वार्थ भाव से बोलता है या लिखता है। **जीने की कला जानने वाला व्यक्ति प्रत्येक क्रिया को विवेकपूर्वक, शुभ भाव से, भली-भाँति विचार करने, कम से कम खर्च में, कम से कम समय में करेगा।**

जीने की कला से अनभिज्ञ मनुष्य के जीवन मे भोग होता है, योग नही। स्वार्थ होता है, संयम नही। उसका जीवन नीरस होता है, सरस नही। उसके जीवन मे मोज-मस्ती की वृत्ति होती है, सच्चा आनन्द नही। जहाँ जीने की कला होती है, वहाँ भोग पर नियंत्रण लग जाता है। संयम और विवेक के पवित्र तटो के बीच मे से होकर जीवन-सरिता बहने लगती है। वहाँ नियमितता, व्यवस्थितता और उपयोगिता की त्रिवेणी मे स्नान करने से जीवन पवित्र, आनन्दमय और स्फूर्तिमय बन जाता है। जो जीने की कला सीख लेता है, वह अपने समय, शक्ति और साधनो का दुरुपयोग जरा भी बर्दाश्त नही करेगा। वह जिस क्षण इस सत्य को समझ जायेगा, उसी क्षण से अपने जीवन को नया मोड दे देगा।

भारत दुनिया के तमाम धर्मो की पाठशाला है। हमारे देश के संविधान मे जन-जन के कल्याण की भावना निहित है। राष्ट्र की मूलधारा से जुडकर हम एक आदर्श नागरिक बन सके, ऐसा प्रयास प्रत्येक नागरिक का होना चाहिए। हम ऐसा कोई भी कार्य न करे, जो धर्म, समाज व राष्ट्र के कानून के विरुद्ध हो। यदि हम एक रुपये के टेक्स की चोरी करते है या रिश्वत लेते है, तो हमे पता होना चाहिए कि हम सिर्फ एक रुपये की ही चोरी नही कर रहे है, अपितु हम देश के नब्बे करोड लोगो की भी चोरी का अपराध कर रहे है। यदि हम राष्ट्र की किसी भी सम्पत्ति को क्षति पहुँचाते है, तो याद रखे, हम अपने ही अस्तित्व को क्षति पहुंचा रहे है, क्योकि राष्ट्र के अस्तित्व से हमारा अस्तित्व भी जुडा है। **राष्ट्र सर्वोपरि है। राष्ट्र प्रथम है, धर्म द्वितीय है और व्यक्ति तृतीय है।**

तो मित्रो! आप यह चिन्ता मत कीजिये कि – आपका पिछला जीवन कैसा बीता है? आप भविष्य के निर्माण की सोचिए, वर्तमान को सफल और कलामय बनाने की ओर ध्यान दीजिये। **अगर आप गृहस्थ हैं, तो गृहस्थ के कर्तव्यों का सुन्दर ढंग से पालन कीजिये। परिवार, समाज, राष्ट्र और मानव-जाति के प्रति उत्तरदायित्व को निभाइये और जो मन लगे, हितकारी लगे; उसे ही करते जाइये। इसे ही मृत्यु को जीतना कहते है।**

"यदि आप कुछ लेना चाहते हैं, तो कुछ देना भी सीखो।
जो व्यवहार आपको पसन्द नही, वैसा दूसरो के साथ आपके द्वारा कदापि न हो॥"

"दुष्ट आचरण की गन्दी गली मे मत भटकिये, पाँव रख भी दिया हो, तो लौट आइये।
वैर, ऋण और चिन्ता, जिन्दगी के दुश्मन है, इनसे सदा बचिये॥"

गागर में सागर

"झाड़ू लगाना, अहंकार को झाड़ू लगाना है। झाड़ू लगाने से दो फायदे है, एक तो इससे अहंकार टूटता है; दूसरा, कोई भी कर्म तुच्छ नही है, इस सिद्धांत को बल मिलता है। घर-ऑगन मे झाड़ू लगाना भी पुण्य हो सकता है, बशर्ते इस दरम्यान कीडे-मकोड़ो मे परमात्मा की छवि दिख जाए। आप धनपति है, आपके घर कई नौकर-चाकर है, तब भी आप अपने हाथो घर-ऑगन झाडू लगाते रहिए, ताकि **अहंकार आपके पास फटकने न पाए।**"

◇◇

"तुम्हारा मकान छोटा है, तुम्हे इस बात का दुःख नही है। पडौसी का बड़ा क्यो है? इस बात का दु.ख है। तुम दुःखी हो, अपने दुःख के कारण नही, अपितु दूसरो के सुख के कारण। तुम्हारा दुःख केवल यही तो है कि तुम्हारा पडौसी सुखी क्यो है?"

"स्वयं में जिएँ, स्वयं के लिए जिएँ।"

◇◇

"जिस देश का सन्त और सिपाही जागरूक और ईमानदार होगा, वह देश कभी भी गुलाम नही हो सकता। जागरूक सन्त और ईमानदार सिपाही ही देश के अमन-चैन मे कारण होते है। यदि सन्त सो जाये और सिपाही बेईमान हो जाये, तो राष्ट्रीय शान्ति का भंग होना अवश्यंभावी है। अत. **सन्त को सोने और सिपाही को बेईमान मत होने दो।**"

◇◇

"भारतीय संस्कृति कीचड मे कमल की तरह जीने की संस्कृति है। जो कीचड मे कीडे की तरह जीता है, वह अज्ञानी है और जो कीचड मे कमल की तरह जीता है, वह ज्ञानी है। संसार कीचड है, कीचड मे पैदा होना दुर्भाग्य नही है। **कीचड़ में कीड़े की तरह जीना और मर जाना दुर्भाग्य है। कमल बनकर जिएँ, कनक बनकर जिएँ।।**"

◇◇

"धर्म और धंधा अलग-अलग नही हो सकता है। **धंधे में धर्म का समावेश जरूरी है।** आज हमने धंधे मे से धर्म को निकाल दिया है। यही कारण है कि धर्म-प्राण देश मे भी मिलावट, तस्करी और रिश्वतखोरी जोरो पर है। हॉ! **धर्म में धंधा नहीं होना चाहिए,** लेकिन दुर्भाग्य से आज यह भी हो रहा है। यह विसंगति ही राष्ट्रीय-भ्रष्टाचार का कारण है।"

◇◇

"वृद्ध चेहरे पर पडी हुई झुर्रियो मे वेद व पुराण छिपे है। **किसी बूढ़े आदमी को लकड़ी का सहारा लेकर चलता देखकर हँसना मत,** क्योकि यह दुर्घटना कल अपने साथ भी घटने वाली है। बूढ़ा आदमी दुनिया का सबसे बडा शिक्षालय है, **क्योंकि उसे देखकर उगते सूरज की डूबती कहानी का बोध होता है।**"

"मनुष्य जाति एक है। महावीर ने कहा – व्यक्ति कर्म से ऊँचा बनता है। जिसके कर्म उच्च है, वह उच्च गौत्री है। जिसके कर्म नीच है, वह नीच गौत्री है। धर्म का सम्वन्ध जाति से नही, अपितु जीवन से है, आचरण से है। **जाति का आधार जन्म नहीं, कर्म होता है। हमारी आस्था जातिगत भेदभाव से मुक्त होनी चाहिये।"**

◇◇◇

"धार्मिक होने के लिए अंतिम दिन की प्रतीक्षा न करे जव शरीर मे सामर्थ्य हो, इन्द्रियॉ परिपूर्ण हो, और मन ऊर्जा से भरा हो, तव धर्म को साधे **क्योंकि धर्म उनकी सम्पदा है, जो चित्त से युवा हैं।।"**

◇◇◇

"भारतीय संस्कृति मे जो महत्व गंगा का है, वही महत्त्व जीवन मे अहिसा का है। अहिंसा की गंगा भारत की अस्मिता व प्रतिष्ठा है। अहिसा है तो गंगा है, और गंगा है तो भारत चंगा है। जिस दिन देश से अहिंसा खत्म हो जाएगी, समझ लेना गंगा भारत से लुप्त हो जाएगी और **गंगा लुप्त हुई, तो भारत नंगा और भिखमंगा हो जायेगा।"**

◇◇◇

"पुलिस की वर्दी किसी संन्यासी के भगवा वस्त्रो से कम महत्वपूर्ण नही है। वर्दीधारी यदि दुराचार और भ्रष्टाचार को प्रश्रय देता है, तो वह वर्दी की अस्मिता को खंडित करता है। वर्दी विश्वास की प्रतीक है। विश्वास की इस परम्परा को बरकरार रखना प्रत्येक वर्दीधारी का कर्तव्य है। **कर्तव्य निभाएँ, क्योंकि कर्तव्य ही धर्म है।"**

◇◇◇

"दुनिया मे अमीरी-गरीवी जैसा कुछ नही है। जव तुम अपने से छोटो को देखते हो, तो तुम्हे सव गरीव नजर आते है और जव तुम अपने से ज्यादा सम्पन्न लोगों को देखते हो, तो तुम्हे अपनी गरीवी दिखने लगती है। **यदि अमीरी की जिन्दगी जीना है, तो अपने से छोटों को देखकर जिओ। वस यही तो सुखी जीवन का राज है।"**

◇◇◇

"भोजन यह सोचकर करो कि मै नही खा रहा हूँ, अपितु मेरे भीतर जो परमात्मा विराजमान है, उसे मैं अर्घ्य चढा रहा हूँ। जव तुम यह सोचकर भोजन करोगे, तो फिर कभी तुम मांस, शराव, जर्दा आदि न खा सकोगे। क्या तुम कभी परमात्मा को इनका भोग लगाते हो? नही! तो फिर इन्हे अपने पेट मे डालकर अपने भीतर बैठे परमात्मा को क्यो भ्रष्ट करते हो?"

◇◇◇

जन्म-मृत्यु का मूलभूत कारण - राग-द्वेष

एक बार भगवान महावीर से गौतम स्वामी ने पूछा – 'भगवन्! प्राणी को मरना क्यो पडता है?' प्रभु ने कहा – 'हे गौतम! क्योकि उसने जन्म धारण किया है।'

'हे भगवन्! प्राणी जन्म धारण क्यो करता है?' प्रभु ने कहा – 'हे गौतम! कर्म के कारण आत्मा को जन्म धारण करना पडता है।' 'हे भगवन्! आत्मा को कर्मबन्धन क्यो है?' 'हे गौतम! राग-द्वेष की परिणति के कारण ही आत्मा, कर्म का बन्ध करती है।'

प्रस्तुत वार्तालाप से स्पष्ट है कि – राग-द्वेष (क्रोध, मान, माया, लोभ) से कर्मबन्ध होता है। राग-द्वेष का भावार्थ है – अनुकूल को मित्र मानना राग है अर्थात् अनुकूलता मिलने पर प्रसन्न होना राग है तथा प्रतिकूल को शत्रु मानना द्वेष है अर्थात् प्रतिकूलता मिलने पर नाराज होना द्वेष है।

कर्मबन्ध से आत्मा देह धारण करती है और देह धारण करने वाले की मृत्यु होती ही है। अर्थात् जन्म-मृत्यु का मूलभूत कारण तो राग-द्वेष ही है। जो आत्मा राग-द्वेष से मुक्त बन गई, वह आत्मा कर्मबन्धन से मुक्त हो गई। कर्मबन्धन से मुक्त आत्मा को जन्म धारण करना नही पडता है। भगवान महावीर ने मृत्यु को नही, जन्म को भयंकर कहा है।

इसलिए इस मनुष्य जीवन मे सारा प्रयत्न और पुरुषार्थ अजन्मा बनने की साधना के लिए ही होना चाहिए और इस साधना के लिए हमे राग-द्वेष की परिणति को मन्द करना होगा, क्षीण करना होगा। अनुकूलता व सुख मे राग नही तथा प्रतिकूलता व दुःख मे द्वेष नही करे। ज्यो-ज्यो जीवन-व्यवहार मे राग-द्वेष की तीव्रता कम होती जायेगी, त्यो-त्यो हमे आत्मिक आनन्द की अनुभूति होती जायेगी। और उस आनन्द की प्राप्ति के बाद मृत्यु का हमे कोई भय नही रहेगा, बल्कि मृत्यु का हम स्वागत कर सकेगे। वह मृत्यु हमारे लिए अमंगल की निशानी नही, अपितु महोत्सव का कारण बनेगी।

जिनका जीवन समता-साधना व समाधिमय हो, वे ही आत्माएँ मृत्यु की अंतिम वेला मे समाधिमरण प्राप्त कर अपनी 'मृत्यु' को 'मृत्यु-महोत्सव' मे बदल सकती है। अरे! महोत्सवमय जीवन तो अनेक का होता है, परन्तु मृत्यु को महोत्सव बनाने वाले तो ऐसे ही सहजयोगी होते है। वे अपनी मृत्यु के द्वारा भी मृत्यु का ही अन्त लाते है। उनके लिए मृत्यु कभी अमंगल रूप नही होती।

卐 संसार की अस्थिरता की एक झलक 卐

* कल जो 'करोडपति' था, आज वह 'रोडपति' (गरीब) हो गया।
* कल जो अत्यन्त रूपवान और हृष्ट-पुष्ट था, आज वह केंसर से ग्रस्त हो गया।
* कल जो सत्ता मे था, हजारों व्यक्ति जिसके पीछे भागते थे, आज वह सत्ताहीन होकर सडक पर घूम रहा है, कोई उसका नाम भी नही लेता है।
* कल जो भव्य महल बनाया था, आज भूकम्प के कारण मलबे का ढेर बन गया।

राग-द्वेष : (१) क्रोध

राग-द्वेष मे क्रोध को सर्वप्रथम स्थान दिया गया है, जो सबसे पहला पाप है और अच्छे-भले इन्सान को भी यह शैतान बना देता है। क्रोध एक विषधर सर्प है, जिसके डसने से आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को भूल जाती है। क्रोध एक बड़ा पागलपन है। क्रोध एक अग्नि की भट्टी है। क्रोध एक रोग है, भद्दा है, अंधा है, भयावह है।

नरक का द्वार क्रोध है, दुःख का भंडार क्रोध है, अनर्थो का घर क्रोध है। जब क्रोध आता है, तब मनुष्य कितना शक्तिशाली दिखाई देता है, हृदय की धडकन बढ़ जाती है, चेहरा लाल हो जाता है, तमतमा जाता है, आँखे घृणा व द्वेष की चिनगारियाँ बरसाती है। आँखे ऐसी प्रतीत होती है, जैसे उनसे अंगारे बरस रहे हो, भुजा व टांगों में कंपन आ जाता है, दाँत बंद हो जाते है, सारा शरीर काँपने लगता है। परंतु यह शक्ति शराबी की तरह होती है, जो नशा उतर जाने के बाद क्षीण हो जाती है।

क्रोध मनुष्य को अंधा बना देता है, व्यक्ति को पागल बना देता है। क्रोध पहला प्रहार विवेक पर करता है। क्रोध समझदारी को बाहर निकालकर बुद्धि के दरवाजे की चिटकनी लगा देता है, मनुष्य को विचार-शून्य बना देता है, और विवेक शून्य कर देता है, फिर वह जो बोलता है एवं क्रिया करता है, वह शैतानियत से भरी होती है।

कथानक – एक व्यक्ति शाम को दुकान से घर आया। पाँच हजार रुपये पत्नी को दिये। पत्नी भोजन बना रही थी। रुपयो को वही चूल्हे के पास रख दिया। सर्दी के दिन थे, पास मे उसका दो वर्ष का पप्पू बैठा था। माँ काम से बाहर गई, इतने मे पप्पू उठा और रुपयो की गड्डी उठाकर जलते चूल्हे मे डाल दी। अग्नि तेज जलने लगी। पप्पू खुश हो रहा था कि आग की लपटे कितनी तेज उठ रही है। इतने मे माँ आ गई। उसने जब यह सब नजारा देखा, तो उसे समझने मे देर न लगी। क्रोध ने उसे अंधा बना दिया। उसके मन-मस्तिष्क पर क्रोध का भूत सवार हो गया, वह अपना होश-हवास खो बैठी। फिर क्या था, आव देखा, न ताव अपने सुकुमार बच्चे को उठाया और जलते हुए चूल्हे मे झौंक दिया, बेटा जलकर राख हो गया।

इकलौता बेटा था, जिसे क्रोध खा गया। बुढ़ापे का सहारा था, जिसे क्रोध ने छीन लिया। क्षण भर के क्रोध ने जीवन भर का दुःख पैदा कर दिया। एक पल का क्रोध भी व्यक्ति का भविष्य बिगाड़ सकता है। क्रोध से मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है। क्रोध से हृदय-गति तक रुक जाती है। क्रोध से मन में राक्षसी भाव पैदा होता है। क्रोधी को ब्लड प्रेशर की बीमारी लग जाती है। क्रोध मैत्री भाव नष्ट करता है। आत्महत्या का प्रमुख कारण क्रोध है।

क्रोध की एक चिंगारी ही सुख के ढेर को राख बना देती है।

इस दर्दनाक घटना को जब पति ने देखा, तो वह आग-बबूला हो गया। पत्नी के प्रति उसका मन घृणा व क्रोध से भर गया। वह पत्नी को माफ न कर सका, वह भी क्रोधाविष्ट हो अपना मानसिक संतुलन खो बैठा। फिर क्या था, एक धारदार हथियार से पत्नी की गर्दन काटकर निर्मम हत्या कर दी। क्रोध हत्यारा है, क्रोध हिंसक है, क्रोध क्रूर है, क्रोध कठोर है। क्रोधी मे करुणा नही होती, दया नही होती। तो उस क्रोधी ने पत्नी की हत्या कर दी। सूचना पाकर पुलिस आ गई, हथकड़ियाँ डालकर पीटते हुए ले गई, केस चला, मजिस्ट्रेट ने हत्या के जुर्म मे उसे आजीवन कारावास की सजा सुनाई।

मित्रो! एक हरा-भरा गुलशन क्रोध की आग से वीरान हो गया, एक हँसता-मुस्कराता परिवार उजड गया। **क्रोध सृजन नहीं , विध्वंस करता है। करुणा में विकास है, क्रोध में विनाश है। दया में प्यार है, क्रोध में मार है। क्षमा में उद्धार है, क्रोध में नरकद्वार है। क्षमा में प्रगति है, क्रोध में अवनति है। घृणा और क्रोध में पशुता है।** एक कवि हृदय मुनिश्री की चार पंक्तियाँ –

卐 ''क्रोध करना छोड़ दो, क्रोध दुर्गुणों की खान है।
पतन का मार्ग है – क्रोध ! फिर होता नहीं उत्थान है।
भस्म होती है इसी में, मनुष्य की सद्भावना।
उचित और अनुचित का, फिर हो न सकता ज्ञान है।।'' 卐

अत. क्रोध को ही दु·खो का प्रधान कारण बताया गया है। मनुष्य क्रोध का उत्तर क्रोध से ही देता है, उसे सहन नही करता है। क्रोधी मनुष्य नौकरी से अलग कर दिया जाता है या वह स्वयं नौकरी छोड घर बैठ जाता है। क्रोधी व्यक्ति से सभी लोग डरते है।

क्रोधी मनुष्य जहरीला होता है। जब मनुष्य क्रुद्ध होता है, तब उसके शरीर मे जहर फैल जाता है। अमेरिका के वैज्ञानिको ने एक प्रयोग किया। एक अत्यंत क्रुद्ध मनुष्य के शरीर का खून लेकर उसे इंजेक्शन द्वारा खरगोश के शरीर मे पहुँचाया और यह जानना चाहा कि क्रोधी मनुष्य के खून का एक खरगोश पर क्या असर होता है, क्या प्रतिक्रिया होती है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि जब वह खून खरगोश के शरीर मे पहुँचा, तो बाईस मिनिट के बाद अच्छा-खासा शान्त बैठा खरगोश उछलने-कूदने लगा, दाँत किटकिटाने लगा। पैतीस मिनिट होते-होते वह अपने आपको काटने लगा, जोर-जोर से चिल्लाने लगा और एक घण्टे के अंदर-अंदर वह पैर पटक-पटक कर मर गया।

मनोवैज्ञानिक चिकित्सकों का कहना है कि क्रोध के क्षणों में क्रोध करते समय खून में जहर फैल जाता है। उन्होंने महिलाओं को सुझाव दिया है कि वे क्रोध की अवस्था में अपने बच्चों को स्तनपान न कराएँ। यदि पागल कुत्ता किसी आदमी को काट लेवे, तो चिन्ता की कोई बात नही, चौदह इंजेक्शन लगेगे। यदि काला नाग काट ले, तो फिर भी बचने की पूरी उम्मीद रहती है, किन्तु यदि भयानक **क्रोधी आदमी किसी आदमी को काट लेवे तो बचने की संभावना बहुत कम रहती है।**

दर्पण मे फूँक मारो तो वह धुँधला हो जाता है, फिर उसमे आप अपना प्रतिबिम्ब नही देख सकते। यही स्थिति क्रोध के सम्बन्ध मे है। मन के दर्पण मे क्रोध की फूँक से आत्म-दर्शन सम्भव नही है। क्रोध से आत्मा का पतन होता है।

क्रोध आता क्यों है? क्रोध इसलिए आता है कि वह हमारे मन में भरा है हमारे मन में गाली है, घृणा की गंदगी है और जो मन के कुएँ मे होगा, विचारो की बाल्टी, शब्दो की बाल्टी उसे ही तो बाहर लाएगी।

क्रोध का दूसरा कारण है – **'अपेक्षा की उपेक्षा।'** जिनसे हम सम्मान की अपेक्षा रखते है, वे ही जब हमारा अपमान करने लगते है, तब क्रोध आता है। जिनसे प्रेम था, प्रेम मिलने की पूरी उम्मीद थी, वे ही जब घृणा करने लगते है, तो मन क्रोध से भर जाता है, क्योकि अपेक्षा की उपेक्षा हो गई।

अधिकार की बात जहाँ होगी, वहाँ क्रोध होगा। बेटे ने आज्ञा न मानी, बाप को क्रोध आ गया। पत्नी ने आज्ञा का पालन नही किया, तो पति को क्रोध आ गया। क्योंकि बाप बेटे को, पति पत्नी को अपना दास समझता है, गुलाम समझता है। बाप समझता है कि बेटे को आज्ञा माननी ही चाहिए। पति मानता है कि पत्नी को उसकी आज्ञा माननी ही चाहिए और जब क्रिया इससे उल्टी होती है, तो क्रोध स्वाभाविक है। किसी को जीतना है, तो अधिकार और ताकत से नही, अपितु प्यार व मधुर व्यवहार से जीतो।

अहंकार भी क्रोध का कारण है। जब हमारे अहम् को चोट पहुँचती है, अहंकार को सम्मान नही मिलता है, तो क्रोध आता है। **क्रोध और अहंकार सगे भाई है।** क्रोध आता है, तो अहंकार अपने आप आ जाता है। बाप उत्तेजित हो गया, गुस्से मे आ गया और बेटे से बोला – 'अबे गधे के बच्चे! छोटे मुँह और बडी बात करता है।' बाप अपने बेटे को गधे का बच्चा कह रहा है, तो स्वयं क्या हुआ? गधा! बेटे ने फिर ताना उत्तर दिया। बाप भड़क गया। बोला – 'सूअर की औलाद, नालायक, बाप से मुँह लड़ाता है। मित्रो! क्रोध मे बोलना नही, बकना होता है। बोलना गलत नही है, बकना गलत है।

कथानक – क्रोध के बाबद एक और घटना है जो इस प्रकार है – एक पति-पत्नी जोडा सिनेमा देखने गए। साथ मे उनका दो वर्ष का पप्पू भी था। फिल्म मे एक ऐसा डरावना दृश्य आया, जिसे देखकर छोटा बच्चा डर गया और जोर-जोर मे रोने लगा, पीछे से आवाज आई – 'अरे भाई! किसका बच्चा रो रहा है, उसे चुप कराओ।' पति ने पत्नी से कहा – 'देखो! लोग चिल्ला रहे है, इसे चुप करा लो।' पत्नी बोली – 'मैने चुप कराने के सारे प्रयास कर लिए, यह चुप होता ही नही।' इतने मे पुनः आवाज आई– 'अरे भाई! क्या इस बच्चे के कोई माई-बाप नही है?' पति पुनः पत्नी से बोला – 'शायद भूखा है, जरा उसे दूध पिला दो।' पत्नी झुंझलाते हुए बोली – 'दूध भी तो नही पीता' पति गुस्से मे बोला – पीयेगा, जरूर पीयेगा, यह क्या इसके बाप को भी पीना पड़ेगा

मित्रो क्रोध के दुष्परिणाम भयानक होते है। **क्रोध अनंत है। क्रोध असीम है। क्रोध प्रायः अपने से छोटे पर उतरता है, बड़ों की ओर नहीं बहता है। क्रोध और पानी हमेशा नीचे की ओर बहता है। क्रोध निम्नगामी है।** जिन्हे क्रोध करना ही है, जिनका स्वभाव ही क्रोध करना बन गया है, वे क्रोध का कुछ भी बहाना खोज लेगे और क्रोध का कचरा दूसरो पर अकारण ही बरसा देगे।

पति ऑफिस से घर आता है और पति का इंतजार कर रही पत्नी पर अकारण ही बरस पडता है, क्योकि ऑफिस मे उसके साहब ने डॉटा है, फटकारा है। वह अपने ऑफिसर को तो जवाब दे नही सकता, उस पर क्रोध निकाल नही सकता, तो घर मे आते ही पत्नी पर उबल पडता है। पत्नी जिसको कल रात ही उसने कहा था कि तू बहुत सुन्दर है, आज ऐसा मालूम पड़ेगा कि यह शूर्पणखा कहॉ से आ गई? क्रोध भद्दा है। वह सौन्दर्य को नही देख सकता। भोजन करने बैठोगे, तो रोटी जली हुई मालूम पडेगी, सब्जी मे नमक कम मालूम पड़ेगा, कुछ भी बहाना कर पत्नी की पिटाई कर देगा, क्रोध जो भरा है, वह कुछ भी बहाना खोजकर निकल जायेगा।

अब पत्नी को क्रोध तो तीव्र आ रहा है, पर वह मजबूर है, लाचार है। पत्नी, पति को कुछ बोल नही सकती, क्योकि पति परमेश्वर है, उसे यह पाठ बचपन से सिखाया गया है। **हर मॉ अपनी बेटी को सिखाती है कि पति परमेश्वर होता है, कभी उसे पलटकर जवाब नहीं देना चाहिए। लेकिन एक भी बाप अपने बेटे को नहीं सिखाता है कि पत्नी देवी का साक्षात् रूप है, कभी उसका अपमान नहीं करना चाहिए।** बेचारी पत्नियॉ व्यर्थ ही पीटी जाती है। जिनकी पूजा होनी चाहिए, उनकी पिटाई हो रही है, यह नारी जाति का शोषण है, यह नारी की अस्मिता का हनन है।

अब पत्नी क्या करे? किस पर क्रोध निकाले? किस पर बरसे? इतने मे पप्पू उछलता-कूदता स्कूल से आया, मॉ के करीब आया। मॉ ने पकडा और पिटाई कर दी। कम्बख्त, ऐसा ऊधम करता हुआ स्कूल से आता है। एक ही दिन मे कपडे कितने गंदे कर लिए, बस्ता वहॉ ऐसे पटक कर रखा जाता है क्या? कितनी बार समझाया, लेकिन समझता ही नही। फिर पकडा और वापस दो-चार चॉटे रसीद कर दिये। बेचारे पप्पू को पता ही नही कि मामला क्या है? वह मॉ की तरफ देखता है, तो समझ नही पा रहा कि यह मेरी मॉ है या कोई चुडैल है। अब पप्पू किस पर क्रोध निकाले, मम्मी से कुछ बोलना तो खतरे से खाली नही। अब वह भी कोई न कोई पात्र ढूँढेगा। कोई न मिलेगा, तो अपनी गुडिया की टांग ही तोड देगा, किताब फाड देगा, स्लेट फोड देगा और बचा-खुचा गुस्सा नौकरानी पर उतार देगा। अब नौकरानी पप्पू को तो मार सकती नही, डॉट भी नही सकती है, तो वह बर्तन रगड़-रगड़ कर मांजेगी, कपड़े धोएगी, तो खूब कूट-कूट कर धोएगी फिर बचा-खुचा गुस्सा अपने घर जाकर बच्चो पर निकालेगी।

दबा हुआ क्रोध किसी भी रास्ते से निकलता ही है, किसी भी निमित्त से प्रकट हो जाता है। **क्रोध बहुत बुरी चीज है। इससे बचो वरना जीवन का सुख नष्ट हो जाएगा**

क्षमा– मनुष्य की शोभा रूप से है, रूप की शोभा गुण से है, गुण की शोभा ज्ञान से है और ज्ञान की शोभा क्षमा से है। **क्षमा सज्जन सन्त आत्मा का स्वभाव है। जिस प्रकार जल का स्वभाव शीतलता है, उसी प्रकार आत्मा का स्वभाव क्षमा है। किसी व्यक्ति द्वारा मन, वचन और काया से बिना कारण ही पीड़ा पहुँचाने पर व गाली देने पर अथवा अभद्र व्यवहार करने पर उसके लिए प्रतिकार करने की शक्ति होने पर भी अत्यन्त शांति एवं समतापूर्वक उस कष्ट को सह लेना और किसी भी प्रकार का प्रतिकार नहीं करना – 'क्षमा' है। क्षमा वीरों का आभूषण है। क्षमा निर्मल जल के समान है,** जो कि विरोधी की क्षमा रूपी अग्नि को शान्त कर देती है। क्षमा एक ऐसी अद्‌भुत वस्तु है, जिसे देने वाला और लेने वाला दोनों सुखी हो जाते है। क्षमाधारी व्यक्ति ही संसार मे संकटो पर विजय प्राप्त कर प्रतिष्ठा, यश और कीर्ति प्राप्त कर सकता है।

क्रोध शमन का एकमात्र उपाय 'क्षमाभाव' है। क्रोध का प्रतिकार क्रोध से नही, क्षमा से होता है। वैर से वैर कभी शांत नही होते, यह अटल सत्य है। क्षमा से पूर्वकृत पाप भी दूर हो जाते है। क्षमा से सद्‌गति ही मिलती है। क्रोध का सामना क्रोध से करने जायेंगे, तो पछताना पड़ेगा। घृणा का मुकाबला घृणा से करेगे, तो कुछ भी हाथ नही लगेगा, क्योंकि क्रोध से क्रोध बढता है। अग्नि मे ईधन डालेगे, तो अग्नि और बढेगी ही। क्रोध अग्नि है। उसमे घृणा का ईधन नही डाले। क्रोध की अग्नि को क्षमा और सहिष्णुता के जल से बुझायें। क्रोध का सामना क्षमा से करेगे, तो क्रोध चूर-चूर हो जायेगा।

क्रोध को कैसे जीतें?

मनोवैंज्ञानिको का मत है कि क्रोध पर नियंत्रण करने के लिए **धीरे बोलना, धीमे बातचीत करना** न केवल आवश्यक है, अपितु अनिवार्य भी है। बातचीत के दरम्यान मतभेद की स्थिति निर्मित होने पर हम उच्च-स्वर मे बोलना शुरू कर देते है। तब यह उच्च-स्वर इस बात का परिचायक होता है कि हम पर क्रोध का भूत सवार हो गया है। उस समय व्यक्ति को सम्हल जाना चाहिए, **हो सके तो मौन ले लेना चाहिए।** क्रोध का गाली से प्रगाढ़ रिश्ता है, अत: अपशब्दो का प्रयोग न करे।

(१) क्रोध शमन का पहला सूत्र है – **सतर्क रहना।** क्रोध मे अगर व्यक्ति को इतना ख्याल आ जाए कि उसे क्रोध आ रहा है, तो वह सम्हल सकता है। अगर इतना होश सध जाए कि 'क्रोध आ रहा है' तो फिर क्रोध पर नियंत्रण करना आसान हो जाएगा।

(२) **विलम्ब करना** – क्रोध आवे तो प्रतिक्रिया देने मे थोड़ा विलम्ब करो। महावीर स्वामी कहते है कि शुभ करना है, तो तत्काल करो और अगर अशुभ करना है, तो विलम्ब करो। कल पर छोड़ दो।

लेकिन अगर हमे कोई गाली देता है, तो क्या हम सोचेगे कि इस गाली का जवाब कल दूँगा। हम तुरंत गाली का जवाब गाली से देते है, ईट का जवाब पत्थर से देते है, मगर ईट का जवाब पत्थर से देने वाला सज्जन नही हो सकता। भौकने का जवाब भौककर कुत्ता ही देता है। लात का जवाब लात से गधा ही देता है। हम इन्सान है, गाली का जवाब गाली से नही, सहिष्णुता से दे। ईट का जवाब पत्थर से नही, प्यार से दे। फिर भी याद रखे कि अगर कभी भी जिस पर क्रोध आए, उससे इतना कह देवे कि इसका जवाब मै तुम्हे कल (चौबीस घण्टे बाद) दूँगा। इतना कहकर उससे विदा ले लेना। फिर चौबीस घण्टे मे विचार कर लेना, क्रोध के औचित्य और अनौचित्य पर, क्रोध के कारणो पर तथा परिणामो पर फिर अगर जरूरी समझे, तो सोच-समझकर शान्ति से जवाब देना।

(३) स्थान छोड़ देना – यदि आपको क्रोध आ रहा है, तो जिस स्थान पर आप खड़े है या बैठे है तत्काल अन्यत्र चले जाएँ, वहाँ से हट जाएँ, उस स्थान को छोड दे, तो निश्चित मानें इससे ५०% राहत अवश्य मिलेगी। क्रोध का निमित्त या कारण मिलने पर समतापूर्वक सहन कर ले।

(४) चिन्तन साधना – किसी ने अपने को गधा कह दिया, तो हम भी तत्काल दुलत्ती मारने लगते है, पागल कह दिया, तो तुरन्त हम पर भी पागलपन सवार हो जाता है, कुत्ता कह दिया, तो हम भी भौकना शुरू कर देते है, काटने लगते है। ऐसा होता है, कुछ स्वाभाविक भी है, क्योकि हम जन्म से मृत्यु तक मात्र शब्दो की ही यात्रा करते है। शब्द ही कभी अहंकार का कारण बन जाते है और कभी क्रोध के। किसी ने अच्छे शब्द कह दिये, तो हम मुस्करा उठते है और बुरे कह दिये, तो अपने को अपमानित महसूस करने लगते है। शब्दो ने ही अहंकार को बनाया और शब्दो ने ही क्रोध को। देखा नही! आदमी शब्दो के माया-जाल के पीछे कितना पडा है। सुबह से शाम तक वह शब्दो के दायरे मे फलता-फिसलता रहता है। आखिर दूसरो के शब्दो से हमे मिलेगा क्या? सम्मान मिल जायेगा, प्रशस्तियाँ मिल जाएँगी, प्रशंसा मिल जाएँगी। मात्र शब्द व्यवस्था को व्यक्ति ने अपना सम्मान और स्वाभिमान मान लिया है। यह प्रशंसा या अपमान नही, मात्र छलावा है। अपने आपको मात्र शब्दो से भरना – अभिमान है, मोह है, पाप है। इससे आत्मा का पतन होता है।

सज्जन पुरुष, चिन्तनशील मानव कड़वे शब्दो मे से भी सार्थक, सजीव व प्यारा-सा अर्थ निकाल लेते है, जैसे- गधा मे 'ग' का मतलब गलत और 'धा' का मतलव धारणा। अब गधा के मायने हुआ – जिसकी गलत धारणा है, वह गधा है। यदि आप भी गलत धारणा मे जी रहे हैं, तो आप भी -------गधे है।

यदि आप भी अपने वालो के प्रति गलत धारणा रखते है, तो आप निश्चित पूँछ के दो पॉव के गधे है। गलत धारणा व गलतफहमी से बचे। गलतफहमी गर्त में ले जाती है। भ्रान्त धारणा इन्सान को भ्रमित कर देती है। शब्द अपने गहन-गूढ़ अर्थ स्वयं खोलते है, लेकिन हमारे पास वह चिन्तन नही, जो शब्दो के सत्य को खोज सके।

इसके अलावा क्रोध से हटने-बचने के निम्न उपाय भी प्रयोग में ला सकते है -

* क्रोध आते ही मौन धारण कर ले (मौन एक तप है)।
* जिस प्रसंग के कारण क्रोध उत्पन्न हुआ है, उस प्रसंग को अब याद न करे।
* क्रोध आते ही अपने-अपने धर्म के प्रमुख मंत्र का स्मरण करे।
* उल्टी गिनती गिनना प्रारंभ करे जैसे कि सौ, निन्यानु, इठ्यानु, सित्यानु।
* अपनी गलती को भी खोजने का प्रयास करे।
* जिसके प्रति क्रोध आया हो, उसके अच्छे गुणो को ध्यान मे लावे।
* क्रोध अवस्था मे एक बार अपना चेहरा दर्पण मे देख ले।
* क्रोध आते ही मुँह मे पानी भर ले और क्रोध रहे, तब तक मुँह मे ही रखें।
* क्रोध मे सामने वाला व्यक्ति अग्नि समान होता है, अतः आप पानी बन जाएँ। अग्नि आहुति से नही, ठंडे जल से बुझाई जाती है। वह जल है – 'क्षमा'। धैर्य रखकर क्रोध को क्षमा भाव से दबाएँ।

क्रोध के कारण ही माँ-वेटा मे, सास-बहू मे, बाप-बेटा मे, मालिक-नौकर मे, पति-पत्नी मे, आदमी-आदमी मे झगडा हो जाता है, मारपीट हो जाती है, गोली चल जाती है, खंजर भोक देते है, जान से मार डालते है या मनुष्य स्वयं आत्महत्या कर लेता है। क्रोध के प्रारंभ मे मूर्खता और क्रोध शान्त हो जाने पर पश्चात्ताप होता है। क्रोध माचिस की तीली है, जो पहले स्वयं जलती है, वाद मे दूसरे को जलाती है। एक पल का क्रोध व्यक्ति का भविष्य बिगाड सकता है। क्रोध पश्चात्ताप से नही, प्रायश्चित और से जाता है।

अतः क्रोध का जरा-सा भी निमित्त या कारण मिले, तो शान्ति से उसका सामना कर ले, समतापूर्वक सहन कर ले, फिर जो आत्मिक शान्ति मिलेगी, वह अपूर्व होगी। ॐ शान्ति!

卐 क्रोध करना मना है 卐

"वडे-वड़े कारखानो, फेक्ट्रियो, ट्रेनों व बसो आदि मे यह लिखा रहता है कि – 'यहाँ धूम्रपान करना मना है।' इसी तरह प्रत्येक मानव को चाहिए कि वह अपने घर, दुकान, ऑफिस आदि मे ऐसा बोर्ड लगा दे कि – 'यहाँ क्रोध करना मना है।' इस बोर्ड पर हर आने जाने वाले की वार-वार नजर पडेगी। अन्तत मन मे क्रोध न करने का विचार अंकित हो

राग-द्वेष : (२)

卐 मान 卐

मान याने अहंकार। अहंकार ही दुःख का बडा कारण है। जीवन की मूलभूत समस्या अहंकार है। "I am something" मै भी कुछ हूँ – यह जो भाव है, यही संसार है। अहंकार का जोर इतना जबरदस्त रहता है कि वह धर्म को भी अधर्म बना देता है। पुण्य को पाप मे बदल देता है। अहंकारी को सत्य समझाना अत्यन्त कठिन कार्य है।

अहंकार अंधा है। अहंकारियों की स्थिति अंधों जैसी होती है। उनके पास ऑखे होती है, लेकिन फिर भी उन्हे दिखाई नही देता। रावण की पूरी लंका तबाह हो रही थी, लेकिन रावण को लंका व अपने खानदान का तबाह होना कहॉ दिख रहा था? कंस के ऑखे थी, लेकिन वह श्रीकृष्ण की शक्ति व सामर्थ्य को कहॉ देख सका? दुर्योधन ऑखो वाला होकर भी क्या अंधा (अहंकारी) नही था? **अहंकार विवेक का नाश कर देता है।** अहंकार से ही क्रोध आता है।

अहंकार बड़ा खतरनाक है। अहंकार मीठा जहर है। अहंकार ठग है, जो मानव को हर पल ठग रहा है। मानव मे जो 'मै' और 'मेरापन' है – यही अहंकार की जड है। मै ही परिवार का संरक्षक हूॅ। मै ही समाज का कर्णधार हूॅ। मै ही पत्नी और वच्चो का भरण-पोषण कर रहा हूॅ। मै ही परिवार, समाज व राष्ट्र को चला रहा हूॅ। यह जो निरपेक्ष कर्तापन का अहंकार है, यही अहंकार मानव को दुःखी बनाए हुए है। मेरे बिना दुनिया अस्त-व्यस्त हो जाएगी – ऐसा झूठा अहंकार ही मानव को दुःखी बना रहा है।

आज हमारे दाम्पत्य जीवन मे, पारिवारिक व सामाजिक जीवन मे जो संघर्ष, मनमुटाव, मनोमालिन्य दिख रहा है, उसका मूल-कारण अहंकार है। यदि पत्नी पति के प्रति और पति पत्नी के प्रति, बाप बेटा के प्रति और बेटा बाप के प्रति, शिष्य गुरु के प्रति और गुरु शिष्य के प्रति समर्पण व सहयोग का रुख अपनाये, तो जीवन मे व्याप्त सारी विसंगितयॉ समाप्त हो जाऍ। **अहंकार का समाधान 'समर्पण' है, मृदुता है।**

जो सुख समर्पण व मृदुता में है, वह अकड़ने में नहीं है। जो अकडता है, यमराज उसे जल्दी पकड़ता है। जो मृदु होगा, उसे मौत कभी नही मिटायेगी। वह देर-सबेर मरेगा, तो वह मर कर भी अमर हो जायेगा। राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, क्राइस्ट– ये ऐसे महापुरुष है, जो हमेशा समर्पण मे जिये है और अहंकार की बू इनके किसी व्यवहार मे कभी नही आई। इनके पास सब कुछ था, लेकिन उन्हे इस जड उपलब्धि पर कोई अहंकार नही था। लेकिन हमारे पास है क्या? जो हम इतना अकडते है। हमारी तो चक्रवर्ती के चपरासी जैसी हैसियत भी नही है फिर भी हमारा अहंकार तो चक्रवर्ती से भी बड़ा है। इस दुनिया मे एक से बढ़कर एक टाटा-बिड़ला-डालमिया पड़े है। हम किस खेत की मूली है। **मान करे तो विनय नहीं और विनय विना विद्या नहीं आती है।**

अहंकार शून्य की ओर ले जाता है और समर्पण पूर्ण की ओर। कुतर्क नर्क है। समर्पण स्वर्ग है। अहंकार मृत्यु और समर्पण मुक्ति है।

मान बड़ा धोखेबाज है। बड़ा शैतान है। वैसे तो मान मनुष्य के लिए अहितकर है ही, किन्तु मान के विषय मे आज के आदमी की मान्यता कुछ अलग है। वह मान सम्मान जीवन के लिए अनिवार्य समझता है। अगर कोई उसका अपमान कर दे, तो वह उससे माफी मँगवाता है, लड़ाई-झगड़े, दंगे-फसाद तक करने पर उतारु हो जाता है और कोर्ट मे मान-हानि का दावा पेश कर देता है। मान-पत्र के लिए सब कुछ करने को तैयार हो जाता है। बड़ा से बड़ा त्याग करता है और ऊँची से ऊँची दान राशि भी दे देता है बशर्ते उसके नाम का शिलापट बड़े-बडे अक्षरो मे मुख्य स्थान पर लगाया जावे। और उसी पुरुष का नाम जब किसी हत्या या दुर्घटना के किसी केस मे पुलिस की डायरी मे आ जाता है, तब पुलिस वालो को हजारो रुपये इसलिए दे देता है कि डायरी मे से उसका नाम काट दिया जावे। ऐसा क्यो? आखिर इसका कारण क्या है? कारण स्पष्ट है कि एक तरफ अयोग्य मान की आकांक्षा और दूसरी तरफ मान-हानि का भय।

आज तक का इतिहास उठाकर देख ले। एक भी उदाहरण ऐसा नही मिलेगा कि किसी को क्रोध-पत्र दिया गया हो, माया-पत्र दिया गया हो अथवा लोभ-पत्र दिया गया हो। लेकिन मान-पत्र देने की परम्परा सतयुग से लेकर कलियुग तक अक्षुण्ण रूप मे बरकरार है। किसी को क्रोध-पत्र दो, तो वह झगडा कर बैठेगा, किन्तु मान-पत्र हजारों की उपस्थिति मे तालियो की गड़गडाहट के साथ लेने मे हर व्यक्ति गौरव व आनन्द का अनुभव करता है। ऐसा क्यो? क्योकि प्रायः व्यक्ति मान का भूखा है और जो स्वयं मान का भूखा है, वह दूसरो का सम्मान कैसे कर सकता है? दूसरो को आदर-सम्मान वही दे सकता है, जो अहम् से रहित हो, विनय और समर्पण भाव से परिपूर्ण हो। जो झुकने के सुखद अंजाम को समझता हो, क्योकि जो सुख झुकने मे है, वह अकड़ने मे कहाँ । जो आनन्द विनम्र व मृदु बनने मे है, वह कठोरता मे कहाँ है? कठोरता तो सदा ही अल्पजीवी हुआ करती हैं और मृदुता को दीर्घ जीवन का वरदान मिला हुआ है।

आदमी के शरीर मे जिह्वा जन्म से ही आती है और मृत्यु तक रहती है, किन्तु दाँत जन्म के बाद आते हैं और मरने से पूर्व टूट जाते है, चूँकि दाँत कठोर होते है। कठोरता अल्पजीवी होती है, जबकि मृदुता दीर्घ जीवी होती है। हम भी मृदु बने, विनम्र बने। बड़ों और गुरुजनों के सामने नम्रता से पेश आवे। दूसरो का सदा सम्मान करे। इसीलिए कहा गया है कि **'विनय ही मोक्ष का द्वार है।' विनय ही उन्नति की पहली सीढ़ी है। विनय ही जीवन का धर्म है।** परमात्मा की सम्पदा का एकमात्र अधिकारी विनयशील व्यक्ति है। विनयशील व्यक्ति सबसे प्रशंसा ही पाता है। **भगवान बनना है, तो अहंकार से बचें। अहंकार ही आत्मा और परमात्मा के बीच में दीवार का काम करता है।**

एक रूपक – मिट्टी के घड़े मे और उसके सिर पर रखी कटोरी मे एक दिन झगडा हो गया। कटोरी ने घडे पर पक्षपाती का आरोप लगाते हुए कहा – 'भैया तुम्हारा व्यवहार समतापूर्ण नही है। तुम्हारे यहाँ भी भाई-भतीजावाद चलता है।' घडे ने कहा – 'अरी बहिन! क्या कह रही हो? आखिर इतना बडा आरोप तुम किस आधार पर लगा रही हो? क्या सबूत है तुम्हारे पास कि मै पक्षपाती हूँ?' कटोरी ने तनिक तुनक कर कहा– 'सबूत माँगते हो? मै स्वयं इसकी सबूत हूँ। तुम सारी दुनिया के लोगो की तो प्यास बुझाया करते हो, लेकिन मै सदा तुम्हारे निकट मे रहने वाली तुम्हारी छोटी बहिन सदा खाली की खाली हूँ।' घडे ने मुस्कराते हुए मन्द स्वर मे कहा – 'अरी बावली बहिन! **किसी से कुछ पाना है, तो उसके सिर पर नहीं, चरणों में नीचे आना पड़ता है।** और तुम तो सदा से ही मेरे सिर पर अकड़कर बैठी हो। अब भला तुम ही बताओ कि गलती किसकी है? मै पक्षपात करता हूँ या तुम्हे अयोग्य माने?' कटोरी को अपनी भूल का अहसास हुआ। वह ज्यो ही नीचे आई, घड़े ने उसे ठण्डे-ठण्डे जल से परिपूर्ण कर दिया। लबालब भर दिया। यह है अहंकार की रोचक कहानी।

हमारे अधिकतर तीर्थ गंगा और नदियो के किनारे है। क्यो? क्योकि नदियाँ सागर की तरफ जा रही है, मिटने की तरफ जा रही है। तीर्थ तो वही है, जहाँ हमे मिटने का बोध मिले। तीर्थ कहते है, यहाँ आकर अपने अहंकार को मिटा डालो। अहंकार के नारियल को फोड़ दो। मंदिर-मस्जिद के नाम पर लडो मत।

किसी ज्ञानी पुरुष, सद्गुरु के पास कभी **'ज्ञानचंद'** बनकर न जावे। वहाँ तो बच्चो जैसा भोलापन लेकर जावे। संत से कुछ सीखना है, तो उनके चरणो मे मस्तक झुकाना जरूरी है। सद्गुरु के चरण परम पूज्य है। उन चरणो मे उत्तम आचरण की सुगन्ध है। उन चरणो मे चारित्र का इत्र है। वे मुक्ति-पथ की ओर गतिशील है।

स्टेशन पर ट्रेन तभी प्रवेश करती है, जब सिगनल डाउन होता है। सिगनल अहंकार का प्रतीक है। अपना यह मस्तक भी सिगनल ही है। जब तक यह डाउन नही होगा, तब तक परमात्मा की ट्रेन अपने हृदय मे प्रवेश नही करेगी। परमात्मा और हमारे बीच एकमात्र 'अहंकार' बाधा है। अगर अहंकार की दीवार ढह जाये, तो हमारे लिए प्रभु के द्वार खुल जायेगे।

किसी की सेवा करते है, चरण-वंदन करते है, चरण दबाते है, तो इससे हमारा अहंकार टूटता है। बहू सासु के पैर दबाती है, यह भी एक पुण्य कार्य है, सेवा है, धर्म है, पूजा है।

सासुओ से भी एक नम्र निवेदन है कि यदि आपकी बहू आपके पैर दबाने आए, तो उससे दो-चार मिनिट से ज्यादा पैर न दबवाना। दो-चार मिनिट पैर दबवाने के बाद अपनी लाडली बहू को प्यार से मना कर देना। इससे फायदा यह होगा कि बहू दूसरे दिन भी फिर पैर दबाने आयेगी। बहू सोचेगी, दो-चार मिनिट की **ही तो** बात है।

सासुजी ज्यादा सेवा तो करवाती नही है। चलो, रोज पैर दबा दिया करूंगी। और
आजकल की सासुएँ वड़ी स्वार्थी है, अगर बहू कभी भूल से पैर दबाने बैठ जाए, तो
सासु मना ही नही करती। सासु सोचती है, बहू आज पहली बार तो आई है, कल
आयेगी इसकी क्या ग्यारंटी है? इसलिए आज ही कसर पूरी कर लूं। उधर बहू भी पैर
दवाते-दबाते सोचती है कि कितनी देर हो गई, अम्मा तो मना करने का नाम ही नही
ले रही है। ठीक है, आज आई तो आई, अब कभी नही आऊंगी। इसीलिए सासुओ से
निवेदन है कि अगर आपकी वहू सेवा करने आए, तो ज्यादा देर सेवा न कराना।

आज दुनिया मे धर्म के नाम पर विकृत सम्प्रदायो की बाढ-सी आई है। क्या
है? सिर्फ मनुष्य के अहंकार की देन है। अंहकार ही आदमी-आदमी के बीच मे भेद की
रेखा खीचकर उसे विभक्त कर देता है। अहंकार तोडने का काम करता है जबकि धर्म
जोडने का काम करता है। हमारी सारी लडाइयॉ, सारे तनाव, संघर्ष इसी अहंकार की
वजह से है। पति और पत्नी, वाप और बेटा, सासु और बहू, देवरानी और जेठानी,
पड़ौसी-पड़ौसी के बीच मनमुटाव इसी अहंकार की देन है। दो समुदायो के बीच मे जो
संघर्ष है, दो जातियो के बीच मे जो खीचतान है, उसका मूल कारण मनुष्य का अहंकार
है। भला हिन्दू और मुसलमान आपस मे क्यो लडने लगे? दोनो अपने-अपने हिसाब से
जीवन-यापन करते है। दोनो अपना कमाते है, अपना खाते हं, फिर क्यो लडे? पर
दोनो के अहंकार परस्पर टकराते है, तभी लडते है।

अब यह निर्णय स्वयं आपको करना है कि आपको क्या होना है – अहंकारी या
विनयशील? याद रखिये – धन का, रूप का, सत्ता का, वल का, पद का, जाति का
मान तो वुरा है ही, लेकिन गुण का, ज्ञान का, उपकार का मद भी अच्छा नही होता है।
बडे देश अपने वल के अहंकार मे कैसे-कैसे विनाशक अस्त्र-शस्त्रो का उत्पादन कर रहे
। हिसक पापी वल का अहंकार करने वाले को यह वात ध्यान मे रखनी चाहिए कि
हिटलर जैसे आदमी की कब्र भी दिखाई नही देती, तो फिर हम किस खेत की मूली है।

अत. याद रखे, अपने जीवन के द्वार, अहंकार के लिए सदा बन्द रखे।

卐 स्वाभिमान और अभिमान 卐

स्वाभिमान और अभिमान मे उतना ही अन्तर है, जितना मानव की सामान्य
गर्मी (नार्मल टेम्प्रेचर) मे और वुखार की गर्मी मे। शरीर की सामान्य गर्मी साढे
इठ्यानु डिग्री– 'स्वाभिमान' है, किन्तु टेम्प्रेचर साढे इठ्यानु से ऊपर जाता है,
तो चिन्ता वढ जाती है। इसी प्रकार अभिमान (अहंकार) का भी बढना चिन्ता का
विषय हो जाता है।

राग-द्वेष : (३)



माया

राग-द्वेष का तीसरा भेद **माया** है। **माया अथवा छल-कपट।** माया भी अनेक दुःखो की जननी है। ज्ञानियो ने माया को **नागिन** की उपमा दी है। नाग काटे तो आदमी जीवित रह सकता है, परन्तु नागिन काट ले, तो फिर उसका कोई उपचार नही होता। इतनी जबरदस्त है यह-माया। मायावी, घर मे कुटुम्बीजनो को, दुकान मे ग्राहको को, स्कूल मे अध्यापको को और उपाश्रय मे धर्म-गुरुओ को भी छलता रहता है।

जो जीव सरल होता है, वह अपने आस-पास झगड़े की जड़ को आने भी नही देता, परन्तु मायावी तो झगडे की जड को सदा हरी-भरी ही रखना चाहता है। विदेशी शासको ने हमारे देश मे अधर्म, साम्प्रदायिकता का मिथ्या झगड़ा हरा-भरा ही रखा है। वे यहाँ से चले गए, तब भी उसकी विषैली जडे यही छोड़ गए है।

एक रूपक – एक राजा ने नदी के किनारे सुन्दर महल बनाने का विचार किया। इंजीनियर को बुलाया और उसे शानदार महल बनाने का हुक्म दिया। जो भी सामान लगता, राजा बढिया से बढ़िया मँगा कर देता था। उसे तो सर्वश्रेष्ठ महल जो बनवाना था। अतः किसी भी वस्तु की वह कमी नही रहने देता था। लेकिन इंजीनियर के मन मे कपट छा गया। वह बढिया माल छुपाकर उसकी जगह घटिया माल का उपयोग करने लगा।

अच्छे माल के नाम से हल्के माल का उपयोग करना आजकल बहुत बढ गया है। असली को असली कहने वाला आज मूर्ख माना जाता है। जो नकली को असली बता कर बेचता है, उसे ही होशियार माना जाता है। खराब मिश्रित घी को शुद्ध असली घी कहकर बेचने मे होशियारी मानी जाती है। आज तो यह धारणा ही बन गई है कि अनीति किए बिना रुपया नही मिलता। **जैसे – आप खराब माल अपने घर में नहीं लाना चाहते, वैसे ही आपको खराब रुपया (अनीति से कमाया हुआ धन) भी अपने घर में नहीं लाना चाहिए। क्योंकि अनीति का धन या खराब तरीके से कमाया हुआ रुपया भी बहुत दुःख- प्रद होता है। दूसरों को रुला-रुला कर एकत्र किया गया रुपया स्वयं को भी रुला कर ही जाता है। या तो चोर-डाकू उड़ा ले जाते है या सरकार छापा डालकर ले जाती है अथवा बीमारी के इलाज में, अथवा निकम्मी संतान के कारण उसका धन निकल जाता है।**

ऐसे एक नही अनेक उदाहरण आपको देखने को मिलेगे। अनीति का फल बहुत बुरा होता है, फिर भी वह आज सरल माना जा रहा है और नीति का काम जो कि सरल है, कठिन माना जा रहा है। अधिकांश लोग अनीति पर चल रहे है।

उस इंजीनियर ने राजा के महल मे सब नकली वस्तुओ का ही उपयोग किया, बस उसकी सुन्दरता मे कमी नही आने दी। आप जानते है कि नकली हीरे मे भी चमक कम नही होती है, तभी तो लोग उसे असली समझने की भूल कर बैठते है। महल सुन्दर तो दिखाई देने लगा, पर मजबूती जैसी चाहिए, वैसी नही थी।

कपट एक नकली सिक्के की तरह है, जो कभी चलाने वाले को ही फंसा देता है।
यथा समय महल की उद्घाटन विधि का समय आया। हजारो की संख्या मे लोग जमा हुए थे। राजा ने खड़े होकर कहा – 'मेरे इंजीनियर ने कई ऐतिहासिक इमारतो का निर्माण किया है। सचमुच इनकी कला प्रशंसनीय है। जब तक ये इमारते रहेगी, तब तक इनका नाम भी दुनिया मे अमर रहेगा। मै इन्हे इनाम देने की बहुत दिनो से सोच रहा था। आज यह मौका आ गया है, अतः मै ऐलान करता हूँ कि यह नया महल, जो इन्होने बड़ी श्रद्धा एवं लगन से बनाया है, वह मै इन्हे उपहार के रूप मे दे रहा हूँ।'

कहिए वस्तु उपहार मे मिले, तो कौन खुश नही होगा? परन्तु इंजीनियर के मन मे खुशी नही थी। क्योकि वह तो यह समझता था कि महल मे मजबूती नही है, कभी भी गिर सकता है और रहने वालो के प्राण ले सकता है। तो आप यह समझ गए होंगे कि **कभी-कभी मायावी की माया ही इस तरह के दुःख का कारण बन जाती है।**

अतः इससे हटने, बचकर रहने में ही जीवन की सार्थकता है।

卐 अमृत वाणी 卐

"मौत आकर तुम्हे ले जावे, तो उसके पहले मौत से पार होने की कला सीख लो।" अपने अमर स्वरूप का साक्षात्कार कर लो, जहाँ मौत की पहुँच ही नही है।

आप चाहे बड़ी-बडी अट्टालिकाएँ बनाओ अथवा धन के अम्बार लगाओ, मौत के एक ही झटके मे सब छूट जाने वाला है। छूटने वाली चीजो मे आसक्त होने की बजाय परमात्मा मे आसक्ति बढ़ाओ। झूठ-कपट-बेईमानी-दुराचार को त्याग कर **खोज लो, ऐसे ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों को जो तुम्हें लगा दे भव के पार।**

इधर एक दूल्हा घोड़ी चढ़ा है, उधर एक जनाजा उठ रहा है।
इधर वाह-वाह है, उधर ठंडी आहे, कोई रो रहा है, कोई गा रहा है।
कोई आ रहा है, कोई जा रहा है, **शायद इसी का नाम है – दुनिया।**

-------- इसी का नाम है – दुनिया।

卐 अंतिम यात्रा - श्मशान यात्रा 卐

जीवन मे आप कितनी भी यात्रा करो, आपकी अंतिम यात्रा श्मशान यात्रा ही है। आप एक नगर से दूसरे नगर यात्रा पर जाते है, तब कुछ लेकर जाते है, जाने की पूर्व तैयारियाँ रखते हैं, लेकिन क्या आपने अपनी श्मशान यात्रा के लिए कुछ तैयारियाँ कर रखी हैं? क्या आपने सत्संग, सेवा, सत्कर्म व धर्म-साधना का धन कमाया है?

राग-द्वेष : (४) 卐 लोभ 卐

रोग-द्वेष का चौथा भेद लोभ – दुःख एवं पापों का मूल है। अर्थ और काम का लोभ बड़ा खतरनाक है। लोभ मीठा जहर है। लोभ बड़ा शैतान है। लोभ ही नर्क है। लोभ ही ठग है, जो मानव को प्रति पल ठग रहा है।

लोभी मनुष्य को संसार की यदि सम्पूर्ण सम्पत्ति मिल जावे, तो भी उसकी तृप्ति नही होती। वह सदैव अतृप्त ही बना रहता है। आदमी कितने वर्ष तक जी सकता है? वैसे तो जीवन को संतो ने, ज्ञानियो ने क्षण-भंगुर बताया है, फिर भी अधिक से अधिक सौ वर्ष। परन्तु वह तैयारी करता है, हजारो वर्ष की। सौ वर्ष तक जीवित रहने वाला व्यक्ति हजार वर्ष की सामग्री का संचय करने के लिए आकाश-पाताल एक करके दु ख जनक प्रवृत्तियो का सहारा ले, पाप-पुण्य एवं धर्म-अधर्म के विवेक को भुला कर एकत्र की हुई निधि भी उसे तृप्त नही कर पाती, वह भी उसे तुच्छ ही दिखाई देती है। इस वृत्ति का पोषण करने के लिए वह अनर्थक कर्म करने मे भी नही हिचकिचाता। बिल्ली-चूहा मारने मे, नेवला-सर्प मारने मे और सिंह-हिरण मारने मे पाप नही मानता, उसी प्रकार असन्तोषी जीव, हिसा आदि पापजन्य संग्रहखोरी मे पाप नही समझता।

लोभ की प्रमुख जड है – **'तृष्णा'**। यूँ समझो कि दुःख की ज्वाला तृष्णा की भट्टी मे से ही निकलती है। तृष्णा के कारण ही मनुष्य निन्यानु के फेर मे पड जाता है। निन्यानु से सौ यदि हो जाते है, तो सौ का सुख तो उठाता नही और हजार करने की इच्छा जाग्रत कर लेता है। हजार के होने पर मनुष्य का मन लाख की चिन्ता से भर जाता है। मनुष्य सोचने लगता है कि लाख रुपये हो, तो ही आराम की जिन्दगी जी सकता हूँ, फिर लाख होने पर करोड की चिन्ता मे डूब जाता है। पर मन सन्तुष्ट कब होता है? वह तो सदा अतृप्त बना रहता है। क्योकि मन की इच्छाएँ असीम है, कामनाएँ अनगिनत है, आकांक्षाएँ असंख्य है। एक इच्छा की पूर्ति करो, तो चार नई उत्पन्न हो जाती है। **तो अर्थ एवं काम की इच्छा ही दुःख है। मन की चाह ही दुःख है। इच्छाएँ ही मनुष्य को लोभ में डालती हैं।**

मनुष्य की पूँजी लाख या करोड रुपये की होने पर भी यदि तनिक भी सुख न मिले, तो इसका कारण तृष्णा ही है, असन्तोष ही है। चक्रवर्ती जैसी रिद्धि-सिद्धि मिलने पर भी मन मे असन्तोष का जोर रहता है, वह मन को सदा बेचैन ही बनाए रखता है। खाते-पीते, उठते-बैठते और सोते समय भी मन बेचैन ही बना रहता है। गरीब कभी यह नही कहता कि मुझे मरने की भी फुरसत नही है। अमीर ही प्राय: यह कहते सुना जाता है कि मुझे मरने की भी फुरसत नही है। जिसके जीवन मे पुण्य धर्म कम और अर्थ काम तृष्णा अधिक होती है, वह अत्यधिक दु·खी होता है और जिसके जीवन मे पुण्य धर्म अधिक और अर्थ काम तृष्णा कम होती है, वह व्यक्ति अधिकांश सुखी होता है।

असन्तोष से ही लोभ के अलावा क्रोध, मान, माया आदि का वातावरण निर्मित होता है। जब तक असन्तोष नष्ट नही होता, तव तक आन्तरिक शान्ति सम्भव नहीं है और आन्तरिक शान्ति के बिना वाह्य शान्ति का कोई महत्व नही है।

जरा इतिहास के पन्ने पलट कर देखिये – जब पाइसर का वादशाह इटली को जीतने के लिए रवाना हुआ, तो सीनियस नामक एक तत्त्ववेत्ता ने उनसे पूछा –

'आप किस ओर जा रहे है?'

बादशाह ने उत्तर दिया – 'मै इटली को जीतने के लिए जा रहा हूं।'

तत्त्ववेत्ता ने पूछा – 'इटली को जीत कर क्या करोगे?'

'फिर मै अफ्रीका पर विजय प्राप्त करूँगा।' – वादशाह वोला।

तत्त्ववेत्ता ने फिर पूछा – 'अफ्रीका को जीतकर क्या करोगे?'

बादशाह ने कहा – 'फिर मै आराम करूँगा।'

तत्त्ववेत्ता ने कहा – 'वह आराम आप अभी ही क्यो नही कर लेते।'

यह सुनकर बादशाह निरुत्तर हो गया। लोभी आराम से नही रह सकता।

लालच और आनन्द की आपस में कभी नहीं बनती।

लोभी के मन मे दया नही होती जैसे – लोभी अहीर गाय दुहते समय सारा दूध दुह लेता है और बछड़े का भी ध्यान नही रखता, वैसे ही लोभी व्यक्ति दूसरो की सम्पत्ति हडपते समय उसके सुख-दुःख का ख्याल नही करता। लोभी मनुष्य नौकर से भी काम तो खूब लेता है, मगर दाम कम देता है।

लोभी वृत्ति से ही दुनिया मे बड़े-बडे युद्ध भी हुए है। वादशाह सिकन्दर जब अपनी अन्तिम साँसे ले रहा था, तो उसकी आँखो से आँसू वह निकले। लोगो को बड़ा आश्चर्य हुआ कि सिकन्दर महान होकर भी क्यो रो रहा है? सिकन्दर ने कहा – 'जिस दौलत के लिए ये हाथ आजीवन युद्ध करते रहे, वे ही हाथ आज खाली हो गए हैं।' **लोभी लोभ में ही मर जाता है, परन्तु सन्तोषी त्यागी मर कर भी अमर हो जाता है।** सन्तोष त्याग धारण करने का सबसे बडा लाभ है – मानसिक शान्ति, आत्म शुद्धि। इसलिए बडे-बड़े चक्रवर्ती भी अपार धन-सम्पदा व राज्य छोडकर संन्यासी, संयमी वने है।

卐 जीवन में तीन बातें सदा ध्यान रखो 卐

- *ये तीन चीजे किसी का इन्तजार नही करती - -* *समय, मौत और ग्राहक।*
- *ये तीन बाते कभी न भूले - - - - - -* *कर्ज, फर्ज और मर्ज।*
- *ये तीन चीजे जीवन मे एक बार ही मिलती हैं -* *माँ, बाप और जवानी।*
- *इन तीनो का सदा सम्मान करो - - - - - -* *माता, पिता और गुरु।*
- *जो निकल गया, वह वापस नही आता - - -* *तीर, मुँह के बोल, शरीर से प्राण।*
- *ये तीन बाते सदा मानो - - - - - -* *कम खाओ, गम खाओ, नम जाओ।*
- *इन तीन को कभी छोटा मत समझो- - - - -* *कर्ज, शत्रु और बीमारी।*
- *इन तीनों को वश मे रक्खो - - - - - - - -* *मन, काम और क्रोध।*

झरोखा

''**आज सन्तों और समाज को, युवाओं पर विशेष ध्यान देना होगा,** क्योकि युवा, बच्चो और बूढो के बीच एक सेतु है। मगर आज का युवा ऐसे मोड़ पर खडा है, जहॉ से उन्नति और पतन के दो रास्ते फूटते है। यदि समय रहते देश के युवाओ को सही मार्ग-दर्शन न मिला, तो बुजुर्गो का भविष्य बिगड़ जायेगा और आने वाली पीढी भी खत्म हो जायेगी।''

◇◇

''भूख लगे तो खाना प्रकृति है, भूख न लगे तब खाना विकृति है और स्वयं भूखे रहकर भूखे को खिला देना संस्कृति है। **विकृति में जीना दुर्जन-स्वभाव, प्रकृति में जीना सज्जन-स्वभाव और संस्कृति में जीना सन्त-स्वभाव है।** भारत की संस्कृति खिलाकर खाने की है। जो खिलाकर खाता है, वह सदा खिलखिलाता है, **हर रोज खिलाकर खाओ, हर रोज खिलखिलाओ।''**

◇◇

''मनुष्य मच्छर से ज्यादा खतरनाक है। मनुष्य भी काटता है, मच्छर भी काटता है। मच्छर काटता है तो सिर्फ खून पीता है, मनुष्य काटता है तो खानदान तक पी जाता है। फिर मच्छर को मच्छर कभी नही काटता, लेकिन मनुष्य को मनुष्य सदियो से काटता आ रहा है।

जाति, भाषा और मजहब के नाम पर बॉटता आ रहा है।

मनुष्य! तुम 'अमृत पुत्र' हो! काटो नहीं, अमृत बॉटो।

◇◇

''**नारी के तीन रूप हैं – लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा!**

नारी परिवार को संपन्न बनाने के लिए, लक्ष्मी का रूप धारण करे,

संतान को शिक्षित करने के लिए, वह सरस्वती बन दिखाए,

तथा सामाजिक बुराइयो को ध्वस्त करने के लिए, सिंह पर आरूढ दुर्गा की भूमिका निभाए।

यही नारी धर्म है – यही नारी कर्तव्य है।''

◇◇

''आज हिन्दू और मुसलमान अपने-अपने शुद्र कुएँ मे बैठा है और उसे ही अंतिम सत्य मान रहा है। हिन्दू सोचता है, सारा ब्रह्माण्ड मेरे ही कुएँ मे है, मुसलमान सोचता है, मेरा कुऑ ही सम्पूर्ण है। ज्ञानी कहते है – संप्रदाय कुऑ है, धर्म–सागर है।

कुऑ आंशिक सत्य है, **सम्पूर्ण सत्य तो सागर है, कुओं से ऊपर उठें, ताकि अनंत-सागर के दर्शन हो सकें।''**

◇◇

''यह सत्य है कि दुनिया मे बुराइयॉ है, पर कभी हमने यह भी सोचा बुराइयॉ क्यो है?

दुनिया मे बुराइयॉ इसलिए नही है कि बुरे आदमी ज्यादा बोलते है, बल्कि इसलिए है कि भले आदमी समय पर चुप रह जाते है। **आज हम गलत को गलत कहने की हिम्मत खो बैठे हैं और यही कारण है कि देश, समाज में बेशुमार बुराइयाँ हैं।''**

◇◇

"मै तुमसे 'नोट' माँगने नही आया हूँ, 'वोट' और 'सपोर्ट' माँगने भी नही आया हूँ। मै सिर्फ तुमसे तुम्हारी 'खोट' माँगने आया हूँ। वे खोट, जो तुम्हे रात को सोने नही देती, वे खोट जो तुम्हे दीन-हीन, दरिद्र बनाए हुए है। मै तुम्हारे द्वार पर झोली फैलाए खड़ा हूँ, **इस झोली में डाल दो जीवन की तमाम बुराइयाँ। बस यही मेरी गुरु-दक्षिणा होगी।।**"

◇◇

"पापी को जागने मत देना, उसका सोए रहना ही अच्छा है। क्योकि जब तक वह सोता रहेगा, उतनी देर तो लोग उसके अत्याचार से बचेगे। और सन्त को सोने मत देना, क्योकि यदि सन्त सो गया, तो दुनिया का कल्याण रुक जायेगा।

हमारी कोशिश हो कि **सन्त जागता रहे, पापी सोता रहे।**"

◇◇

"आज के इंसान की भूख, इस कदर बढ़ गई है कि वह संस्कृति, आदर्शों और नैतिक मूल्यो को भी खाने से नही चूकता है। पहले जब आदमी जंगली था, तब कंद-मूल खाता था, फिर थोड़ा समझदार हुआ तो अन्न खाने लगा और अब सभ्य हुआ, तो रुपया तक खाने लगा। ध्यान रखना! **पेट रुपयों से नहीं, रोटी से भरता है।**"

◇◇

"एक विनम्र अनुरोध है, यदि किसी मुनि मे, सन्त मे, कोई स्खलन (दोष) दिखे तो, उसकी निन्दा न करना, अपितु जब भी किसी मुनि मे दोष दिखाई दे, तो उसे तुरन्त कॉपी मे नोट कर लेना तथा उसी वक्त संकल्प करना कि यदि मै मुनि बनूँगा, तो यह गलती कभी नही करूँगा। **सन्तों की कमियाँ नहीं, खूबियाँ देखें।**"

◇◇

"आज देश को निरक्षर लोगो से, कोई खतरा नही है।

देश को खतरा है, तो साक्षर लोगो से है। आज तक देश मे जितने भी घोटाले हुए है, इन्ही तथाकथित साक्षर लोगो की देन है, साक्षर लोगो द्वारा ही देश की संस्कृति को, विकृत किया जा रहा है। **ध्यान रहे! संस्कृति की उपेक्षा भारत के हित में नहीं है।**"

◇◇

"पतंग की डोर किसी के हाथ मे होती है, फिर भी वह अनंत आकाश मे विचरण करती है। जबकि पतंगा स्वतंत्र होने के बाद भी, दीपक के चारो ओर घूमकर अपना जीवन नष्ट कर देता है। इसी प्रकार **जिस प्राणी की जीवन डोर, सद्गुरु के हाथ में होती है, वह अनंत ऊँचाइयों को छू लेता है, और जो स्वच्छन्द होता है, वह मिट जाता है।**"

◇◇

"प्रमाद ही दुःख का कारण है, तो ऐसे धर्मात्मा लोगो के जीवन मे जो कि बहुत ही सरलता से और बिना किसी को हैरान किये अपना जीवन जी रहे है, दुःख क्यों आते है ? ...... जीवन धर्ममय होने के बावजूद दुःखो का आक्रमण यही बताता है कि उस आत्मा ने पहले कही न कही प्रमाद का सेवन अवश्य किया है।" **प्रमाद से बचें।**

◇◇

इन्द्रियाँ

मनुष्य के इन्द्रियाँ पाँच होती हैं – (१) श्रोत्रन्द्रिय (कान) (२) चक्षुरिन्द्रिय (आँख) (३) घ्राणेन्द्रिय (नाक) (४) रसनेन्द्रिय (जीभ) (५) स्पर्शनेन्द्रिय (स्पर्शन)।

इन्द्रिय (१) श्रोत्रन्द्रिय (कान)

श्रोत्रन्द्रिय कान को कहते है। टेलीफोन शब्द-श्रवण का साधन है। यदि कान की श्रवण-शक्ति नष्ट हो जाए, तो उसके लिए टेलीफोन की क्या उपयोगिता है? अत: टेलीफोन से भी कान का या सुनने की शक्ति का मूल्य अधिक है। **और जिसका मूल्य अधिक होता है, उसका उपयोग भी उचित ढंग से ही किया जाता है।** यह बात तो माता-बहिने अच्छी तरह जानती है कि बर्तन मॉजते समय या भोजन बनाते समय वे कीमती साडी नही पहनती। कीमती वस्त्र तो विशेष प्रसंग पर या त्यौहारो पर ही पहने जाते है। इसी प्रकार मूल्यवान वस्तुओ का उपयोग भी समझदारीपूर्वक ही किया जाता है। कान शरीर की अत्यधिक कीमती वस्तु है। महान पुण्य के उदय से, धर्म के फल से प्राणी को पॉचो इन्द्रियॉ प्राप्त होती है। एक से चार इन्द्रिय तक के जीवो को कान नही होते, यह साधन पञ्चेन्द्रिय प्राणी को ही उपलब्ध है। ऐसी कीमती वस्तु का कोई दुरुपयोग करे,तो उसे कोई बुद्धिमान थोड़े ही कहेगा?

अपने कान से दूसरों की निन्दा सुनना दुरुपयोग है, जबकि उसके सद्‌गुण सत्य श्रवण करना सदुपयोग है। किन्तु प्राय: यही देखने मे आता है कि लोग दूसरो की निन्दा सुनने मे अधिक रस लेते है। जहॉ दो चार लोग इकट्ठे होते है, वहॉ चाय पीते-पीते, वाहनो मे यात्रा करते समय, बातो ही बातो मे, दूसरो की निन्दा करते रहते है और अन्य सभी बडी दिलचस्पी से सुनते रहते है। मगर कोई भी साहस जुटाकर यह नही बोलता है कि यह सुश्रावक का स्थान है, कोई होटल या पान अथवा नाई की दुकान तो नही है।

निन्दा करना व सुनना दोनों ही बुरा है। जिसकी निन्दा की जाती है, अगर उसको पता चल जाए कि फलां ने मेरी निन्दा की है, चुगली की है, तो वह उसका दुश्मन बन जाता है और बदला लेने के मौके की प्रतीक्षा करता रहता है और मौका मिलते ही उसका अहित करने से चूकता नही है। तो याद रखिये, अगर आप दूसरो की निन्दा सुनकर प्रसन्न होते है, तो दूसरे भी आपकी निन्दा सुनकर अवश्य प्रसन्न होगे।

फिल्मी संगीत सुनना कान का दुरुपयोग है, इससे वासना जाग्रत होती है। हरिण मधुर गीतो की आवाज पर मुग्ध होकर पकड़ा जाता है। साधु-सन्त व महापुरुषो की वाणी सुनना सदुपयोग है। इससे आत्म शुद्धि की राह दिखती है। श्रवण के साथ मनन भी जरूरी है। श्रवण के बाद मनन हो, चिन्तन हो और आचरण का रस वनकर जीवन के कण-कण मे पहुँचे, तभी जीवन सार्थक कहलाता है। सत्य श्रवण जीवन का दर्पण है, उसमे अपनी आत्मा का प्रतिबिम्ब पडता है।

इन्द्रिय (२)

卐 चक्षुरिन्द्रिय (आँख) 卐

शरीर में आँख का एक महत्वपूर्ण स्थान है। इन्हें दो चमकते हुए हीरों की उपमा दी गई है, जिनसे सारा शरीर शोभायमान होता है। यदि आँख की ज्योति नहीं जाती है, तो मनुष्य पराधीन बन जाता है, लाचार हो जाता है, उसका सम्पूर्ण जीवन ही अन्धकारमय हो जाता है। सैकड़ो मील दूर तक देखने वाला दूरबीन भी आँख के अभाव मे काम नही दे सकता। हमारे लिए **आँख एक बहुमूल्य साधन है। आँख है, तो विश्वदर्शन है, वरना सर्वत्र अन्धकार ही अन्धकार है।**

ज्ञानी सन्त कहते है कि ऐसी बहुमूल्य वस्तु का दुरुपयोग कतई नही होना चाहिए। कोई पुरुष अपनी तिजोरी मे गोबर के कण्डे भरे, तो लोग उसे कभी समझदार नही कहेगे, मूर्ख ही कहेगे, तो फिर आँख-रूपी तिजोरी मे **कहीं हम पाप-रूपी कण्डे भरने की मूर्खता तो नहीं कर रहे हैं? यह चिन्तन का विषय है।**

आँखों में कभी भी विकार उत्पन्न नहीं होने देना चाहिए। चक्षु-विकार के बारे मे भक्त तुकाराम ने कितना सुन्दर कहा है–

'पापाची वासना नको देऊ डोला, त्याहुन आंधला बराच मीं।'

'हे भगवान! अगर तू मुझ पर मेहरबान है, तो ऐसी कृपा बरसा दे कि मेरी आँखों मे कभी भी विकार जन्म न ले सके। यदि तू ऐसा नही कर सकता, तो मुझे अन्धा रहने दे।' **अन्धा हो जाना अच्छा है, पर आँखों में अर्थ या काम का विकार आ जाना अच्छा नहीं है।** अन्धे आदमी के लिए तो केवल एक भव ही दु:ख का कारण बनता है, परन्तु आँखो का विकार तो अनेक भवो मे दु.ख को उत्पन्न करता है। **अधिक रागोत्पादक दृश्य या टी.वी.एवं सिनेमा आदि देखने से भी आँखें विकारी बन जाती है।**

कुछ वर्षो पूर्व की ही सत्य घटना है – रविन्द्र स्टेडियम, कलकत्ता (कोलकाता) अशोककुमार नाइट का प्रोग्राम हो रहा था। उस रात स्टेडियम मे बहुत से स्त्री-पुरुष एकत्र हुए थे। हजारो लोगो ने तो टिकिटे भी ब्लेक मे खरीद कर प्रवेश पाया था। स्टेडियम ठसा-ठस भरा था। कही पैर रखने की जगह भी नही थी। प्रोग्राम शुरु होने से पूर्व ही कुछ बदमाशो ने बिजली की लाइन काट डाली। फलस्वरूप, स्टेडियम मे घनघोर अन्धेरा हो गया। फिर उन बदमाशो ने औरतो को पकडना शुरु किया। किसी के जेवर छीने, किसी के कपड़े फाड़ दिये, किसी के कपडे उतार दिये और उनकी इज्जत लूटने लगे। बड़ी भगदड मच गई, कई लड़कियाँ, बच्चे, स्त्रियाँ लोगो के ही पाँव तले कुचल गई। कई स्त्रियाँ अपनी लज्जा बचाने के लिए पास के तालाब मे कूद पड़ी, इसमे अनेक की जाने चली गई।

संगीत की स्वर लहरी तो शुरू न हो सकी और न ही ऑखो को तृप्त करने वाले दृश्यो से साक्षात्कार किया जा सका, पर हाहाकार और चीख-पुकारो की ध्वनि से स्टेडियम जरूर गूँज उठा। यह सब क्यो हुआ? ऑख मे विकार आया, तभी तो यह काण्ड हुआ। वैसे इसी प्रकार का एक काण्ड म.प्र. के शहर इन्दौर के नेहरू स्टेडियम मे भी हो चुका है। इसमे लोग सुलक्षणा पण्डित नाइट देखने को गए थे। इसमे भी इसी प्रकार की आपाधापी मची थी और कई लडकियॉ व औरते अर्द्धनग्न तथा घायल अवस्था मे जैसे-तैसे अपने घरो पर पहुॅची थी। क्या आपसे यह भी पूछ लेवे कि यदि आपके गॉव या शहर मे कोई साधु-सन्त या महात्मा आए हो और उनका कही प्रवचन हो रहा हो, जिसमे बिना टिकिट प्रवेश की व्यवस्था हो, तो क्या इतनी संख्या मे आप लोग इकट्ठा होवेगे? बडे दु:ख एवं शर्म की बात है कि वहॉ जाने के लिए आपको समय नही मिलता।

तो ऑखो का विकार क्या कहर ढा सकता है, यह आपने देख लिया है। **किसी को बुरी निगाह से देखना या देखकर ऑखों में वासना के भाव लाना, कदम बढ़ना —यह ऑख का दुरुपयोग है।** चिडियाघर मे सिंह, रीछ, मृग, मोर, बन्दर आदि पिंजरो मे बन्द करके रखे जाते है, उनका कारण भी ऑख का पोषण करना ही तो है।

सम्पन्न वर्ग के लोग विवाहो मे एक से एक नई वस्तुओ के प्रदर्शन मे लाखो रुपये इसी कारण खर्च कर देते है कि देखने वाले, आयोजक की प्रशंसा करे।

बच्चे-बच्चियॉ, आदमी-औरते ऐसी पौषाखे पहिनते है और ऐसा मेकअप करते है कि दूसरे उन्हे देखते ही रहे, ये ही कारण दूसरो की ऑखो मे विकार उत्पन्न होने के कारण बनते है।

रूप के साथ ऑख का घनिष्ठ सम्बन्ध है। रूप का राग ऑख को संकुचित बना देता है, विकारी बना देता है। जो रूप के मोह मे आसक्त बने है, उनका बहुत बुरा हाल हुआ है। रूप का, काम का रागी रावण हुआ, तो उसने अपने सारे कुटुम्ब का ही नाश करा लिया। रूप के नशे मे पागल बनकर पद्मोत्तर राजा द्रोपदी को उठा ले गया और अन्त मे उसे अपनी रक्षा के लिए स्त्री वेश धारण करना पडा। अलाउद्दीन के महलो मे रूपवती बेगमो की कमी नही थी। फिर भी चित्तौड की रानी पद्मिनी के सौन्दर्य पर उसकी नजरे उठी और उसे पाने के लिए उसने भयंकर नरसंहार किया। फलस्वरूप, पद्मिनी तथा उसकी सैकडो सखियो को जौहर की ज्वाला मे जलना पड़ा। ऐसे अनेक दृष्टान्त इतिहास मे भरे पडे है।

कृपया विवेक रखिये कि **जिसे देखने से ऑखों में विकार पैदा हो, उसे नही देखना, विकार शान्त हो, उसे देखना, बस यही ऑखों का सही सदुपयोग है।**

मरने के बाद ऑखो का दान कर देना भी पुण्य कार्य माना गया है। उसे भी यह जरूर कहना चाहिए कि वह इन ऑखो से किसी को भी विकारी नजरो से न देखे।

इन्द्रिय (३)

卐 घ्राणेन्द्रिय (नाक) 卐

शरीर मे **नाक** का एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अभाव मे शरीर की कोई शोभा नही, वह शोभा-हीन होता है। **मनुष्य के लिए नाक एक बहुमूल्य साधन है।** नाक गन्ध ग्रहण करने का प्रमुख कार्य करता है। इसका भी दुरुपयोग और सदुपयोग दोनो सम्भव है। हमे सदुपयोग ही करना चाहिए। भँवरा सुगन्ध से आकर्षित होकर फूलो पर आ बैठता है और मस्त होकर रस-पान मे लीन हो जाता है। कमल के मुंदने पर वह बन्धन मे पड जाता है और कभी-कभी प्राण गँवाने की नौबत आ जाती है।

अतः ऐसी कीमती घ्राणेन्द्रिय **(नाक) का सदा सदुपयोग ही करना चाहिए।** दुरुपयोग से तो दुःख ही दुःख मिलता है और परलोक भी विगड़ता है।

卐 ज्ञान-पिटारा 卐

卐 मेहमान का मकान 卐

मेहमान कितने भी शानदार मकान मे ठहरे, उसकी उस मकान के प्रति आसक्ति नही होगी, क्योकि वह समझता रहता है कि मै यहॉ कुछ दिनो के लिये ही ठहरने वाला हूँ – आगे या पीछे मुझे यह स्थान छोडना ही पडेगा। ठीक इसी प्रकार हमे भी सोचना चाहिए कि हम इस दुनिया मे एक मेहमान की भाँति आते है और मेहमान की तरह ही इसे छोड जाने वाले है; जाना न चाहे, तो भी हमे जाना ही पडेगा।

卐 मृत्यु और विज्ञान 卐

भौतिक जगत मे आश्चर्यकारी शोध करने वाले और प्रगति के शिखर पर आरूढ़ आज के विज्ञान के सामने सबसे बडी समस्या 'मृत्यु' की है। अनेक रोगो के निदान और उपचारो की शोध विज्ञान ने की है, परन्तु आज तक कोई वैज्ञानिक किसी भी व्यक्ति को 'मृत्यु' के रोग से नही बचा पाया है।

卐 तीन लाख की तीन बातें 卐

(१) प्रातः ब्रह्म मुहूर्त मे उठ जाना।

(२) माता-पिता, बड़ो व गुरुजनो का आदर करना।

(३) क्रोध का प्रसंग उपस्थित होने पर भी शांति धारण करना।

卐 सीमा में रहना सीखो 卐

सीमित खाने वाला, सीमित वोलने वाला, सीमित कमाने वाला और सीमित खर्च करने वाला – कभी परेशान नही होता, अत. सीमा मे रहना सीखो॥

इन्द्रिय (४)

卐 रसनेन्द्रिय (जीभ) 卐

पॉच इन्द्रियो मे **जीभ का विशेष महत्व है।** जीभ के अलावा अन्य जो चार इन्द्रियॉ है, ये बोलने का कार्य नही कर सकती। बोलने का कार्य तो केवल जीभ ही करती है। जीभ का पहला कार्य स्वाद लेना और दूसरा कार्य उसका निर्णय देना है। निर्णय देने मे इसे देर नही लगती। साग मे नमक कम हो या अधिक डल गया हो, दूध मे शक्कर कम हो या अधिक गिर गई हो, जीभ उसे कहने मे तनिक भी देर नही करेगी। थाली मे पचास व्यञ्जन रखे हो, पर जीभ जरा-सी कमी पर भी बोले बिना रह नही सकती। इस वस्तु के साथ अमुक वस्तु होती, तो मजा आ जाता। अरे दही बडे मे कुछ दही अधिक होता, तो मजा आता, दाल मे कुछ खटाई डाल दी होती, तो जायका बढ जाता और चटनी बिना तो सारा मजा ही किरकिरा हो गया – ऐसी अनेक बाते इस जीभ से अक्सर सुनने को मिलती रहती है। जीभ सदा स्वादिष्ट वस्तु को ही पसन्द करती है।

इस स्वाद के चक्कर मे कई लोग वर्जित वस्तुएँ भी ले लेते है और बीमार होकर बहुत कष्ट पाते है। कई लोग स्वाद के वशीभूत होकर अनन्त-अनन्त पाप बंध कर लेते है। पशुओ का मांस खाते है। इस जीभ की मात्र तृप्ति के लिए न जाने कितने निरपराध मूक पशु-पक्षियो की रोज हत्या की जा रही है। और कई प्राणी खाने के चक्कर मे अपनी जान तक गॅवा देते है। मछली आटे की गोली खाने के लिए मुँह खोलती है और धीवर का डाला हुआ कॉटा उसकी जान ले लेता है।

कई लोग कच्चा-पक्का मांस भी खा जाते है। कई देशो मे सॉप, मेढक व कई छोटे-मोटे कीड़े-मकोड़ो का अचार डालते है और उसे भी खा जाते है। यह कैसा मजा है? याद रखिये। दूसरो की हत्या मे मजा मनाने वालो की मौत भी बहुत दर्दनाक हुआ करती है, क्योकि यह तो कटु सत्य है कि जो दूसरो के लिए गड्ढा खोदता है, वह भी उसी मे गिरता है, जो जैसा बोयेगा – वैसा ही पायेगा। दूसरो को दुःख देने वाला भला वह सुख कैसे प्राप्त कर सकता है। यह निश्चित है कि अनेकानेक दु ख एवं बीमारी का मूल जिह्वा-लोलुपता ही है, अतः सुख के इच्छुक, खाने मे संयम रखकर दुःख, हिंसा और पाप से बच सकते है।

जीभ का दूसरा कार्य है, बोलने का। बोलने मे जीभ यदि बेभान होकर, बोल देवे तो अनर्थ हो जाता है, झगडा हो जाता है, रंग मे भंग हो जाता है, उसकी सर्वत्र निन्दा होगी और **यदि मीठे सत्य वचन बोलेगी, तो सभी से प्रशंसा मिलेगी।**

एक मनुष्य के घर मेहमान आता है, वह उसे चाय पिलाता है, स्वादिष्ट नाश्ता कराता है, तो मेहमान बहुत सन्तुष्ट होता है, किन्तु साथ ही यदि खिलाने वाला यह बोल देवे कि – 'क्यो वस्तु कैसी लगी? अच्छी लगी न! ये चीजे कभी तुमने तुम्हारे बाप जमारे भी खाई थी?' कहिये! मेहमान पर कैसी गुजरेगी? जीभ के ऐसे बोल किए-कराए पर पानी फेर देते है, कटुता पैदा कर देते है, सम्बन्धो मे दरार पड़ जाती है।

अत: कहा गया है कि **इस 'बिना हड्डी की लालीबाई' को सदा नियन्त्रण में रखो, इसका सदुपयोग ही करो, कभी भी दुरुपयोग नहीं करो।**

जीभ को पुण्य प्रकृति ने जिस स्थान पर स्थित किया है, यदि उसे भी समझ लिया जावे, तो जीभ का महत्त्व और स्पष्ट हो जाता है। जीभ मे पुण्य प्रकृति ने हड्डी नही डाली है। इसका मतलब है – ऐसा नम्र बोलो और मीठा बोलो कि उसमे शक्कर-सी मिठास झलके। दूसरा इसके ऊपर बत्तीसी का ताला लगाया है, इसके बाद फिर जबडा और मुँह का पहरा बैठाया है। इसका अर्थ है जीभ को सदा नियन्त्रण मे रखने की आवश्यकता है। मनुष्य यदि जीभ को नियन्त्रण मे रख ले, तो इस जीवन मे तो सुख भोगेगा ही, साथ ही परलोक के लिए भी पुण्य बंध कर लेगा।

इन्द्रिय (५) 卐 स्पर्शनिन्द्रिय (स्पर्शन, त्वचा) 卐

यह इन्द्रिय जीव को सबसे अधिक दुःख में डालने वाली है। काम राग सबसे अधिक पाप पैदा करता है। इस नश्वर शरीर से मोक्ष-सुख भी मिल सकता है, जो जीव काम, वासना को नष्ट कर देता है, वह मृत्यु को भी जीत सकता है। परन्तु, उसमें यह कामराग ही सबसे अधिक बाधक बनता है। कामराग को जीतने वाला ही सुखी बनता है। काम विजेता की शक्ति काल से भी महान होती है।

स्पर्श सुख मे ही मदमत्त हाथी आजन्म बंधन मे पड जाता है। कामरागी काम वासना मे अन्धा उन्मादी होकर सौन्दर्य को ही देखता रहता है, उससे उत्पन्न होने वाले सन्ताप को वह नही देख पाता। भोगो को भोगते हुए मौत तो आ जाती है, पर उनमें तृप्ति नही आती। भोगो का सुख विष मिश्रित सुख है, जो मौत मे ही परिणित होता है। जैसे – किसी को सॉप काट खाए, तो उसको नीम के पत्ते भी मीठे लगते है। वैसे ही ... **को कामजन्य दुःख मीठे प्रतीत होते हैं।**

मक्खी शहद खाने जाती है, तो उसी मे फॅसकर मर जाती है, इसी तरह काम में ... मानव भी उसी मे फॅसकर मौत का शिकार हो जाता है।

अर्जुनमाली की कथा तो सभी जानते है कि उसकी पत्नी से विषय सुख सेवन करने ...ले छहो पुरुष अकाल मे ही मृत्यु के मुख मे चले गए थे।

विषयान्धता (विषयो अर्थात् काम वासना के प्रति आसक्ति) प्राणी को विज्ञान विवेक शून्य बना देती है, ऑखे होते हुए भी अन्धा बना देती है, जिससे उसे यह भान नही हो पाता कि कामराग के अस्थायी सुखो के पीछे अनन्त दुःख भी जुडा हुआ है और वह कभी भी उस पर आक्रमण कर, उसे मौत के मुॅह मे धकेल सकता है। विषय सेवन मे पहले क्षणिक सुख अवश्य प्राप्त होता है, परन्तु बाद मे अनन्त दुःखो को भ... को झेलना पड़ता है।

भोग सामग्री स्वेच्छापूर्वक छोड़ देने से अपूर्व सुख की अनुभूति होती है।

स्पर्श सुख के रसिक को अन्त मे बहुत दुःख उठाना पडता है। शास्त्र मे उसके लिए राई जितना सुख और पहाड जितना दु.ख कहा गया है। विषय-सेवन से पूर्व भी कई पाप करने पडते है और बाद मे भी रोग तथा नरक निगोद का दुःख ही भोगना पडता है।

शास्त्र में एक रूपक का वर्णन आया है। एक दासी अपने **सम्राट** के लिए रोज फूलो की शैया सजाती थी। एक बार जब वह शैया तैयार कर रही थी, तो फूलो से महकती हुई उस शैया पर सोने की इच्छा को वह दबा न सकी। उसने सोचा – 'पॉच मिनिट के लिए सोकर देखूॅ तो सही कि कितना आनन्द आता है। वह शैया पर लेट गई। मन्द-मन्द हवा के झोको ने उसे गहरी नीद मे सुला दिया। जब सम्राट आया, तो उसने दासी को शैया पर सोते देखा। सम्राट की ऑखो से मानो अग्निज्वाला बरस पडी। सम्राट ने दासी को दो हण्टर लगा दिये। मगर आश्चर्य कि, दासी हॅसते-हॅसते उठ खडी हुई। सम्राट ने कहा – हॅसती क्यो हो? क्या तुझे अपने गुनाह का दण्ड कम मिला है?' ध्यान दीजिये। दासी ने सम्राट के प्रश्न का क्या उत्तर दिया। दासी ने कहा – 'हे सरकार! आपकी इस पुष्प शैया पर मैने थोडी ही देर के लिए शयन किया। जिसका यह परिणाम आया कि मुझे दो हण्टर की मार खानी पडी। हे शाह। मुझे आपकी हालत पर तरस आ रहा है कि आप तो इस शैया पर नित्य शयन करते है, तो आपको इसका कितना दुष्परिणाम भोगना पडेगा?'

दासी की यह मार्मिक बात सुनकर सम्राट के हृदय की ऑखे खुल गई, उसका हृदय परिवर्तन हो गया। उसे अपने वैभ्व व काम-वासना के प्रति अरुचि हो गई और वह वैभव को तिलांजलि देकर त्याग मार्ग का पथिक बन गया।

याद रखिये! सच्चा परम सुख भोग मे नही, अपितु त्याग मे ही है। वासना से जब दु ख उत्पन्न होता है, तो मनुष्य वैराग्य की बाते करने लगता है, परन्तु जब वह दुःख कुछ कम हो जाता है, तो पुन. वह उसी ओर भागने की कोशिश करता है।

कथानक : एक भाई अपनी पत्नी से बड़े दु खी थे। वे एक सन्त के पास आए और उसने अपने दुःख की कुछ बाते सन्त को सुनाईं और सुनाते-सुनाते वे जोरो से रो पडे। सन्त ने कहा – 'धैर्य और विवेक से काम लो। संसार मे अगर सुख होता, तो शालिभद्र अपनी बत्तीस पत्नियो को क्यो छोडते? वे सुख प्राप्ति के लिए ही धन-वैभव, पत्नियॉ सब कुछ छोडकर मुनि बन गए थे।'

कुछ दिनो बाद उस भाई की पत्नी मर गई। तब सन्त ने पुनः उस भाई से कहा– 'अब अगर सुख और शान्ति का जीवन जीना चाहते हो, तो पुन. इस चक्कर मे नही पडना।' परन्तु कई आदमी ऐसे भी होते है कि जो अपने अनुभव से भी लाभ नही उठाते। वे ठोकर खाकर भी नही सम्भलते। उस भाई ने दूसरी शादी कर ली। मगर अफसोस! यह औरत तो पहले से भी सवाई निकली।

वह तो फिर भी कुछ कद्र करती थी, पर यह तो कुत्ते की तरह दुत्कारती है। उसका बड़ा बुरा हाल हो गया। उसका जीना मुश्किल हो गया। सच ही कहा है कि – **सन्त ज्ञानियों के वचनों को न मानने से ऐसा ही होता है। वस्तुतः** काम-वासना ही दुःख **की जननी है। जो जीव यौवन अवस्था में ही इसे दबा** खपा देता है, उसकी **वृद्धावस्था भी बड़े सुन्दर ढंग से व्यतीत होती है।**

एक और मार्मिक **कथानक** गौर करने योग्य है। **नेपोलियन** को मुसीबत के दिनो मे कुछ दिन एक नाई के घर में रहना पड़ा था। वह सारे दिन पुस्तक पढता रहता था। वह युवक तो था ही और सुन्दर भी था, अतः नाई की औरत उससे प्रेम करने लगी। किन्तु वह उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता था। कुछ दिनो बाद नेपोलियन देश का प्रधान सेनापति बन गया। किसी प्रसंग वश वह एक बार उसी नाई के घर के सामने से गुजर रहा था। वह वहॉ रुका व उस औरत से पूछा – 'यहॉ नेपोलियन नामक एक युवक रहता था न?' नाई की औरत उसे पहचान न सकी। उसने उत्तर दिया – 'किस मनहूस आदमी का तुम नाम ले रहे हो? वह तो कुछ समझता ही नही था।' नेपोलियन ने कहा – वह नेपोलियन मै ही हूँ। अगर उस वक्त मै तुम्हारे चंगुल मे फंस गया होता, तो आज जो मै देश के सेनापति के रूप मे हूँ, वह कदापि नही हो पाता। **कामराग को जीते बगैर योद्धा बनना मुमकिन नहीं।**

आप लोग जब दुकान पर बैठते है, तो धन कमाने के लिए ही बैठते है या धर्म कमाने के लिए? सीधा सा उत्तर है – धन कमाने के लिए बैठते है। वहॉ भी अगर पांचो इन्द्रियो को वश मे करके न बैठो, तो आप धन नही कमा सकते।

दुकान पर ग्राहको की लाइन लगी हो और उस समय कोई तुम्हे संगीत सुनाने आवे, तो उस समय आप क्या करेगे? सुनाने वाले को यही तो कहेगे कि अभी नहीं, फिर कभी आना। और उस समय कोई नर्तक सुन्दर से सुन्दर नृत्य आपको दिखाना चाहे, तो उसे भी आप वहॉ से भगा देगे। अरे, और तो और, घर से लडका आकर यह कहे– 'बाबूजी। खाना ठण्डा हो रहा है, आप जल्दी से घर आकर खाना खा लीजिये। माताजी आपका इन्तजार कर रही है।' तब भी आप यही कहेगे न – 'आज ठण्डा ही खा लेंगे। अभी मुझे भूख नही है। जा, तेरी मॉ को कह देना कि मेरा इन्तजार न करे और खाना खा ले। मुझे थोडी देर हो जाएगी।'

यह कथानक इस बात को संकेत करता है कि धन प्राप्ति के लिए अगर हम पांचो इन्द्रियो को वश मे कर सकते है, **तो फिर मोक्ष प्राप्ति के लिए इनको क्यों न वश में करें? क्यों न इन्द्रियों को साधें? इन पर विजय प्राप्त करें।**

इन्द्रियो पर विजय का यह मतलव नही कि इन्द्रियो को नष्ट कर डालें। मन की शेतानियत का दण्ड इन्द्रियो को देना उचित नही। **इन्द्रियों को जीतने का मतलब है – उन्हें साधें। उसके लिए मन पर विजय प्राप्त करें।**

एक मन को जीत लेने पर पॉचो इन्द्रियो पर विजय पा सकते है। पॉचो इन्द्रियो पर विजय पा लेने के बाद पॉचो प्रमाद और पॉचो अव्रतो पर विजय पा सकते है और इसी प्रकार अपने अन्तर की दुनिया के तमाम शत्रुओ पर विजय प्राप्त कर सकते है, अतः मन को काबू मे करे तथा इन्द्रियो को शिक्षित बनावे।

नयन को कहें, जहॉ-जहॉ तेरी दृष्टि जावे वहाँ-वहाँ सद्गुण ही देखना।

कान से कहें, जो-जो तू सुनता है, उसमें से जीवन के लिए प्रकाश किरण ही लेना।

वाणी से कहना, जब तू बोले तो उसमें मिश्री-सी मिठास घोल देना।

काया को कहें, तू जहाँ उपस्थित हो, वहॉ सेवा की सौरभ फैलाना।

इस प्रकार इन्द्रियो को शिक्षित किया जा सकता है। इन्द्रियो को साधने के लिए मन को जीतना जरूरी है। **ॐशान्ति! ॐशान्ति!! ॐशान्ति!!!**

卐 चिन्तन करिये 卐

"लाया न था साथ कुछ, साथ न कुछ ले जायेगा,
मुट्ठी बाँधे आया था, हाथ पसारे जायेगा।
कर ले कुछ सत्कार्य, बस साथ यही जायेगा।।"

卐 सद्गति का आरक्षण 卐

दिल्ली से मुम्बई तक की यात्रा मे यदि सीट का आरक्षण हो, तो यात्री निश्चिन्त रहता है। गाडी आने के पूर्व उसे कोई चिन्ता नही रहती है, किन्तु टिकिट का आरक्षण न हो, तो सतत् चिन्ता बनी रहती है। उसी प्रकार इस जीवन से विदाई के पूर्व **यदि सद्गति का आरक्षण करा लेंगे, तो निश्चिन्त रह सकेंगे,** अन्यथा मृत्यु के समय हाय! हाय! रही तो आत्मा की दुर्गति निश्चित ही है।

माना हुआ घर – शरीर को अपना घर माना और उसमे रहा। किन्तु वह अपना नही था। ऑसू बहाते विवशता से एक दिन उसे खाली करना पडा। यदि वह अपना होता, तो उसे खाली करना न पडता। अनन्त जन्मो मे हर बार ऐसा हुआ। फिर भी ऑखे नही खुली। कितनी रोमांचक है, जीवन की कहानी। खैर, अब भी ऑखे खुल जाऍ, तो अतीत का घटनाचक्र प्रेरक बन जाएगा। अपने मे रहना, अपने घर मे रहना है। शरीर अपना घर नही, माना हुआ घर है। माना हुआ घर, लम्बे-लम्बे समय तक अपना नही होता।

महान आत्माएँ मृत्यु से घबराती नहीं हैं। वे तो प्रसन्नतापूर्वक मृत्यु का स्वागत करती है। समता और समाधि के द्वारा वे अपनी मृत्यु को भी महोत्सवरूप बना देती हैं। महापुरुषो की विदाई भले ही जगत् के लिए शोक का कारण वने, परन्तु वह मृत्यु उनके लिए तो महोत्सवरूप ही होती है।

मन और उसका निग्रह

मानव का मन बहुत चपल है, बहुत चंचल है। जैसे – चलती हुई घडी के से
का कॉटा एक क्षण भी स्थिर नही रहता है, इसी तरह शरीर रूपी घडी का मन
कॉटा भी फिरता ही रहता है। **मन पानी से भी पतला, धुएँ से भी बारीक और प
से भी तेज गतिशील है। मन का वेग विद्युत से भी तीव्र है।**

जिस प्रकार कुत्ता दर-दर भटकता है, उसी प्रकार **यह मन भी विषय-सुख
लालसा में दर-दर भटकता है।** अगर कुछ मिल भी जाता है, तो उससे तृप्त
होता। तृष्णा सदा ही बनी रहती है। जैसे– छिद्रयुक्त पात्र कभी जल से परिपूर्ण नही हो
वैसे ही मन कभी भी तृप्त नही होता, कारण कि उसमे तृष्णा रूपी छिद्र है। जैसे– म
कभी मिठाई पर बैठती है, तो कभी गंदगी पर जा बैठती है। वैसे ही यह मन भी क
तो साहित्य के सुन्दर पुष्पो का, धर्म ग्रन्थो का रस लेता है, तो कभी वासना की ग
की ओर दौड़ जाता है। मन का विजेता सारे संसार पर विजय पा लेता है।

मन यात्रालु है। परमात्मा को खोजने की बात भी वही कहता है और संसार
स्वाद चखने की प्रेरणा भी वही देता है। उसका काम है, आत्मा को शरीर और
से हटाकर कभी आराम-कुर्सी पर न बैठने देना। बुद्ध या बुद्धिमान कहलाने वाला म
मन के आगे निरा बुद्धू है। कहा भी है – **'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।'**

सिनेमा के दृश्य स्थिर नही होते, उसी प्रकार मन मे भी एक दृश्य घूमता है,
दूसरे ही क्षण कोई नया ही दृश्य आ जावेगा। **मन एक प्रसिद्ध बहुरुपिया है।** इस
कोई निश्चित रूप नही है। मन स्वयं मे न अच्छा है और न बुरा है। मन तो बस मन
मन एक शक्ति है, जो उपयोगकर्ता पर निर्भर करता है – कि वह उस शक्ति को अ
प्रवृत्तियो मे लगाता है या बुरी। **मन ही जीवन का शत्रु है और मित्र भी है।**

जैन धर्म मे भगवान महावीर स्वामी ने आत्मा के साथ कर्म बंध होने के जो कार
बताए है (काय, वचन और मन), इनमे से मन को प्रमुख कारण माना है।

आगम से चुनी हुई **निम्न कथा** मन की गति को अधिक स्पष्ट कर रही है।

राजर्षि प्रसन्नचन्द्र समवसरण के बाहर अडोल ध्यान मुद्रा मे खडे है। उधर से मगध स
श्रेणिक, भगवान महावीर के दर्शनार्थ आते है, तो बीच मे राजर्षि पर दृष्टि जाती है। उन
देह की निष्प्रकंप साधना को देख उनका मन श्रद्धा से राजर्षि के चरणो मे झुक जाता है।
श्रेणिक भगवान के समवसरण मे पहुँचे। भगवान महावीर को वंदन करते है। मन के
राजर्षि की साधना के चित्र अंकित थे। सम्राट श्रेणिक भगवान से पूछते है –

'यदि इस समय राजर्षि की आयु समाप्त हो जावे, तो वे किस गति मे उ

प्रभु वर्धमान शान्त मुद्रा में बोले – 'सातवी नरक मे।'

'क्या कहा भगवन्! सातवी नरक? ऐसा साधक सातवी नरक मे जाए, तो हम जैसे भोग के कीड़े कहाँ टिकेगे?' – सम्राट श्रेणिक बोले।

पर सर्वज्ञ की वाणी तो संदेहो से परे होती है।

सम्राट के मन का समाधान तो अभी शेष है। कुछ क्षण रुककर सम्राट श्रेणिक ने फिर अपना वही प्रश्न दोहराया।

भगवान महावीर ने उत्तर दिया – 'पहली नरक मे।'

सम्राट के मन का अभी भी समाधान नही हुआ। आकुल मन से सम्राट ने फिर पूछ लिया – भगवन्! यदि राजर्षि अभी आयु समाप्त करे तो?

'अब वे स्वर्ग के ही राही है, पहले स्वर्ग मे।' भगवान ने उत्तर दिया।

श्रेणिक अभी कुछ सोच ही रहे थे कि – आकाश मे देव दुन्दुभि गड़गडाने लगी। देवो का आगमन शुरु हो गया।

श्रेणिक ने फिर पूछा – 'भगवन्! यह असामयिक गडगडाहट कैसी?'

भगवान बोले – 'सम्राट! राजर्षि प्रसन्नचन्द्र केवली (सर्वज्ञाता) बन गए है। देवगण उसका आघोष कर रहे है और उन्ही के लिए ये देव दुन्दुभियाँ गडगडाई जा रही है।

सम्राट श्रेणिक बोले – 'पर भगवन्! मै कुछ समझ नही पा रहा हूँ, यह पहेली सुलझ नही पा रही है। कुछ मिनटो पहले सातवी नरक, फिर पहली नरक, फिर पहले स्वर्ग मे और अभी केवली? भगवन्! जरा स्पष्ट करे।'

प्रभु बोले – श्रेणिक! जिस क्षण तुम राजर्षि को वंदन कर मेरे पास आए थे, उस क्षण उनका तन तो मुनि साधना मे था, पर मन? तुम उसकी गति को पकड नही सकते। वह उस समय भीषण संहार कर रहा था। अपने नन्हे पुत्र पर राज्य का भार डाल कर राजर्षि प्रसन्नचन्द्र मुनि बने थे। इधर उनके शत्रुओ ने नन्हे पुत्र की दुर्बलता का लाभ उठाकर आक्रमण कर दिया। युद्ध छिड गया। इधर राह मे गुजरते हुए दो पुरुषो ने राजर्षि की ओर संकेत करते हुए कहा – 'पिता मुनि बन गए, पुत्र के लिए राज्य विपत्ति लेकर आया। नये सम्राट शत्रु की विशाल सेना मे घिर गए है।'

ये शब्द राजर्षि के कानो मे टकराए और विद्वेष की आग भडक उठी। मन युद्ध के मोर्चे पर जा डटा। दोनो ओर से शस्त्रो के भीषण प्रहार शुरु हो चुके थे। राग-द्वेष की ज्वाला मे झुलसता मन अशुभ की तीव्रतम परिणति के द्वारा सातवी नरक के कर्म एकत्र कर रहा था। यह वही क्षण था, जो तुम्हारा प्रश्न मेरे सामने आया था और मैने मन की परिस्थिति का निरीक्षण करते हुए तुम्हे उत्तर दिया था। राजर्षि का वाह्य शरीर तो साधना मे ही था, जबकि अन्तर्मन शत्रु के सिरो के साथ क्रीडा कर रहा था।

युद्ध पूरे यौवन पर था। हजारो वीर कट मरे थे। शत्रु दल भी विनाश पर था और शस्त्र सामग्री भी नष्ट हो चुकी थी कि अचानक दोनो सम्राट आमने-सामने हो गए।

शत्रु को सामने पाकर राजर्षि का क्रोध उबल पड़ा और एक ही साँस मे शत्रु सा[illegible] की जीवन-लीला नष्ट करने के लिए वे शस्त्र खोजने लगे। पर सभी शस्त्र काम आ चुके थे। सम्राट ने सोचा – 'चलो मुकुट ही सही, एक ही प्रहार मे शत्रु का सिर जमीन पर लौटने लगेगा और ज्योहि हाथ ऊपर उठे, पर वहाँ तो मुण्डित सिर था। कहाँ था मुकुट?

उसी क्षण विचारधारा ने मोड़ खाया। अरे! मै तो मुनि हूँ। कैसा शत्रु और कैसा युद्ध? कहाँ से कहाँ पहुँच गया और पश्चात्ताप की पुनीत गंगा पाप को धोने लगी और तभी तुम्हारा दूसरा प्रश्न आया था। कुछ क्षणो मे शुभ योग और शुद्ध उपयोग की धारा ने मिलकर राग परिणति और द्वेष परिणति को क्षय कर दिया और राजर्षि 'केवल ज्योति' प्राप्त कर गए, सर्वज्ञाता बन गए।

जैन धर्म की यह लघु कथा संकेत करती है कि मन की धारा यदि ऊपर उठती है, तो मनुष्य को निर्वाण (मोक्ष) तक पहुँचा देती है और नीचे गिरती है, तो सातवी नरक की अन्धेरी गुफा मे गिरा देती है। अतः मन को वश मे करे।

मन को वश में करने का सबसे सरल उपाय है – परिग्रह (स्वर्ण आदि वस्तुओं के संग्रह) और स्त्री परिचय से अपने आप को दूर रखना। अधिक परिग्रह और अधिक परिचय से चित्त मे विभ्रम / क्षोभ अधिक जागृत होता है और फिर मन एक के बाद एक रसातल की सीढ़ियो पर उतरता ही जाता है।

मानव को चाहिए कि वह अपनी योग शक्ति को धर्म में केन्द्रित करे। शक्ति को पाप में विखेरना असफलता को निमन्त्रण देना है। बिखरी हुई किरणे तेजहीन होती है। यदि किरणो मे तेज लाना है, तो उन्हे धर्म मे एकत्र करे। सूर्य की किरणे जब शीशे मे केन्द्रित होती है, तो चिंगारी फूट निकलती है। जल की नन्ही बूंदे यदि धारा के रूप मे एक ही वस्तु पर सतत गिरती रहे, तो पाषाण जैसी कठोर वस्तु को भी काट सकती है। किन्तु तेजी से बहने वाले पानी का प्रवाह केवल आवाज करके रह जाता है।

जीवन में बुद्धिमानी का कार्य मन की एकाग्रता है। मन की एकाग्रता मे महान शक्ति है। मन की गति को धर्म के नियन्त्रण मे रखना योगियो का ही काम है। राग-द्वेष मे लीन व्यक्ति मन की अधर्म गति पर पूरा काबू नही पा सकता।

दिगम्बर मुनियों की नग्नता – सांसारिक कामवासना मे आसक्त व्यक्ति ही [illegible] मुनि की नग्नता को देखकर घबराता है और नग्नता मे अश्लीलता का अनुभव करता है। उनकी निर्दोष नग्नता उसे वीभत्स, घृणास्पद और अरुचिकर प्रतीत होती है, किन्तु **दिगम्बर मुनियों की नग्नता तो परमोत्कृष्ट साधना का प्रतीक है।** नग्न वही व्यक्ति [illegible] है, जिसने अपनी समग्र इन्द्रियों और मन पर पूर्णरूपेण विजय पताका फहरा दी है। **अध्यात्म योगी, मन पर सद्विचारों और विवेक से शासन करते हैं। मन इनका सेवक है, ये उसके सेवक नहीं।** भगवान ने ऐसी साधना भी बताई है, जिसके द्वारा [illegible] छोड़े विना भी मन:स्थिति पर बहुत कुछ विजय प्राप्त कर सकता है।

प्रतिदिन यदि वह निम्न चार तत्वो का चिन्तन करता रहे, तो पारिवारिक उत्तरदायित्व निभाकर भी काफी सीमा तक मन संयम पर विजय पा सकता है –

१. मैं जराधर्मी हूँ, २. मै वियोगधर्मी हूँ, ३. मैं रोग धर्मी हूँ, ४. मैं मरण धर्मी हूँ।

१. मै जराधर्मी हूँ – मानव के मन-मस्तिष्क मे एक चिन्तन चलता रहना चाहिए कि 'मै जराधर्मी हूँ' मेरे शरीर को एक दिन बुढ़ापा आने वाला है। यह अमीर, गरीब, साधु-सन्त, अध्यात्म योगी आदि किसी को भी नही छोडता है। महान शक्तिशाली राजा भी वृद्धावस्था के आक्रमण से बच नही सकते। यह कर्म प्रकृति का अटल नियम है। वृद्धावस्था का चिन्तन मानव को रूप की आसक्ति से भी बचाता है।

२. मैं वियोगधर्मी हूँ – मनुष्य को सोचते रहना है कि 'मै वियोगधर्मी हूँ।' जितने भी संयोग है, एक दिन वे वियोग मे बदल जाने वाले है। संयोग के सूत्र बहुत कच्चे है। आप उन्हे चाहे जितनी मजबूती से बाँधे, एक दिन वे टूटकर ही रहेगे। संयोग का अन्त वियोग मे ही होने वाला है। संयोग दो प्रकार के होते है– पहला अजीव संयोग और दूसरा जीव संयोग। घर की प्राप्ति, सम्पत्ति का लाभ आदि अजीव संयोग है। पत्नी, सन्तान, परिवार आदि जीव संयोग है। कोई सम्पत्ति शाश्वत नही है। पत्नी, सन्तान व कुटुम्बीजन भी अमर नही है। दुनिया की जिन वस्तुओ के साथ आप अपना सम्बन्ध जोड रहे है, किन्तु जरा एक-एक से आप पूछ ले कि वह तुम्हे छोडकर तो नही जाएगा, अथवा आप निश्चिन्त हो ले कि आप इन्हे छोडकर तो नही जावेगे?

यह संसार एक बडे रंगमंच की तरह है। हम सब अभिनय कर रहे है। जिसको जैसा रोल उसके पूर्व कर्मो के अनुसार मिला है, उसे वैसा ही रोल करना पड़ता है। हम जो सिनेमा देखते है, वह ढाई-तीन घंटे का होता है और जो नाटक हम खुद कर रहे है, यह कुछ लम्बे टाइम का होता है। जब जिसका रोल पूरा हो जाता है, वह रंगमंच से बाहर हो जाता है। अज्ञान के अन्धकार के कारण हमे यह रंगमंच रुचिकर लगता है। यदि ज्ञान का प्रकाश हो जाये तो ----------। अत: मानव चिन्तन करता रहे कि – 'मै वियोगधर्मी हूँ।' यह चिन्तन उसके मन से सम्पत्ति का अहंकार क्षीण करेगा, जिस सम्पत्ति के पीछे आज का मानव हाथ धोकर पडा है। सम्पत्ति के चन्द टुकडो के लिए भाई ने भाई को नही बख्शा। जिस सम्पत्ति के लिए मानव ने अपनी मानवता = आर्यता बेची, ईमानदारी बेची। प्रामाणिकता को बेचकर जो चन्द टुकडे इकट्ठे किए है, एक दिन वे यही रह जाएँगे। वियोग धर्म का चिन्तन मानव की परिग्रह जन्य आसक्ति को क्षीण करता हे।

३. मै रोग धर्मी हूँ – मनोनिग्रह के लिए यह चिन्तन कि "मेरा शरीर रोगधर्मी है" देह के प्रति आसक्ति को मन्द करता है। यदि इस चिन्तन का प्रत्यक्ष अनुभव लेना है, तो आप अस्पताल मे जाएँ। आप देखेगे कि – किसी का पैर लटका हुआ है, किसी की आँख पर, सिर पर, अंग-अंग पर पट्टियाँ बँधी है। किसी की हाथ, नाक व गले मे नलियाँ डली है। कोई दर्द के मारे चीख रहा है, कराह रहा है।

ये सब आदमी के शरीर के प्रति अभिमान को मन्द करते हैं। जैन शास्त्रों में ऐसे अनेक दृष्टान्त है और आज भी प्रत्यक्ष यही देखने को मिल रहा है कि शरीर के रोगों को दूर करने मे लोगों ने सम्पत्ति खर्च करने मे कोई कसर नही छोडी, मगर धन खर्च करने मात्र से सभी निरोगी हो गए हो – यह देखने व सुनने को न मिला है और न मिलेगा।

बीमारी कभी-कभी मानव के लिए वरदान भी बन जाती है। अच्छे व स्वार्थी मित्रों की पहचान करा देती है तथा मानव, मानव के प्रति सेवा मे जुट जाने मे वर्षों का मनमुटाव धुल भी जाता है।

मै रोग धर्मी हूँ – यह चिन्तन मनुष्य की सौन्दर्य के प्रति आसक्ति को भी कम करता है। जब हमे रूप का अहंकार आने लगे, तव यह चिन्तन करें कि 'मुझे रोग पीड़ित कर सकते है और व्याधि मेरे सौन्दर्य और शक्ति को भी खा सकती है।' यह चिन्तन यदि चलता रहा, तो व्यक्ति शरीर से मुडकर आत्मा की ओर आने का प्रयास करेगा। दिन-रात चलने वाली शरीर सेवा की वजाय आत्म-सेवा का अवसर मिलेगा।

४. मैं मरणधर्मी हूँ – मनोनिग्रह का चौथा उपाय हैं – मृत्यु का चिन्तन। मृत्यु तो जन्म के साथ ही जुड़ जाती है। जो जन्मा है, वह मरेगा ही – यह कर्म प्रकृति का अटल नियम है। दुःख इस वात का है कि मानव इसे स्मरण नही रखता, भुलाकर बैठा है। मृत्यु के नाम से मानव के रौंगटे खडे हो जाते है, जवकि मानव के लिए मृत्यु सबसे बड़ा उपदेशक है। निम्न कथानक इसी वात को और अधिक पुष्ट करता है –

एक कथानक – एक शहर मे एक महात्मा पधारे, जिनकी प्रशंसा दूर-दूर तक फैली हुई थी कि ये दीन-दुखियो के दुःख-दर्द मिनटो मे दूर करते हैं। एक व्यक्ति रोग पीड़ित था, वह इनके पास पहुँचा और अपनी पीडा-वेदना महात्मा के सम्मुख रखी।

महात्मा ने उत्तर दिया – 'वच्चा तेरी आयु तो मात्र पन्द्रह दिन की बची है, तू इस संसार मे अव सिर्फ पन्द्रह दिनो का ही मेहमान है। वापिस घर जाओ और जो भी जरूरी कार्य रह गए हो, उन्हे पूर्ण कर लो।'

वह व्यक्ति घर आता है। मृत्यु के भय से उसके हृदय के भाव अशुभ से शुभ की ओर मुड़ चुके थे। वह शुभ कार्यो मे जुट गया। जिनका कर्जा ले रखा था, पूर्व मे जिसे नही चुकाने का सोच रखा था, उन्हे कर्जा चुका दिया। जिन-जिन से अभी तक झगड़ा हुआ था, याद कर-करके उनके घर जाकर क्षमा माँग आया। पहले मित्रो व परिवार से वहुत ही वेरुखी से पेश आता था और अव उनसे अत्यन्त स्नेहपूर्ण व्यवहार करने लगा। पहले धर्म की वहुत खिल्ली उडाता था, किन्तु अव परमात्मा को वहुत मानने लगा और आत्म शुद्धि की ओर जुट गया। इस प्रकार जिन-जिन से राग-द्वेष थे, सबको मन से धो डाला। नतीजा यह हुआ कि उसे वहुत ही सुख अनुभव होने लगा। मन शान्त रहने लगा।

इधर पन्द्रह दिन पूर्ण हुए, किन्तु वह मरा नहीं।

महात्मा गॉव मे ही विराजमान थे। वह साधक पुनः उनके पास पहुॅचता है। महात्मा उसका चेहरा देखते ही समझ गए कि यह व्यक्ति अब बहुत बदल गया है। साधक कुछ बोले, उसके पहले महात्मा ही बोले – 'तूने मृत्यु पर विजय पा ली है। अब तू जब चाहेगा तभी मरेगा, मगर एक शर्त है वह यह कि – **मृत्यु को सदा स्मृति में रखना।**

मानव जब कभी दूसरे के शोषण मे प्रवृत्त होता है, तब वह मान बैठता है कि वह मरने वाला नही है और सम्पत्ति भी इतनी अधिक एकत्र करता है, जो अनन्त काल तक समाप्त न हो, किन्तु उसी क्षण उसके दिमाग मे यदि मृत्यु की स्मृति जागृत हो जाए और यह ख्याल मे आ जाए कि मै अनन्त-अनन्त युगो तक जीवित रहने वाला नही हूँ, फिर थोडे से जीवन के लिए पाप की यह विशाल गठरी क्यो बांधूॅ? मौत की यह स्मृति अत्याचार की ओर बढ़ते हाथो को रोक देगी और मानव मे मानवता लौट आवेगी।

मौत की स्मृति मानव को पाप से भयभीत बनाती है। दुर्बल मन का मानव मौत से डर कर पाप क्रिया की ओर बढने का साहस नही कर सकता।

ये चार चिन्तन जीवन की आसक्ति की रस्सी को तोड़ते है। जब तक अज्ञानता, मोह एवं आसक्ति है, तब तक मन की दुष्टता दूर नही हो सकती। दुष्टता की जड आसक्ति पर काबू करे और मन की दुष्टता दूर करने के लिए ज्ञान वैराग्य का अंकुश लगाऍ। छोटा-सा अंकुश विशालकाय हाथी को भी वश मे रख सकता है, इसी प्रकार ज्ञान से वैराग्य रूपी अंकुश, मन का निग्रह जरूर करेगा। किन्तु फिर भी मन का निग्रह एक दिन मे ही नही हो जाने वाला है। उसके लिए दीर्घ-कालीन साधना की ही आवश्यकता है। साधना (अभ्यास) जारी रखे। वासना की रस्सी तोड़ दे, फिर मन आपका स्वामी न होगा, आप मन के स्वामी होगे और सफलता आपके चरण चूमेगी, फिर भी मन को वश मे करने के लिए निम्न बातो का भी पालन करे —

(१) दुष्ट मन रूपी सिंह को संयम – रूपी पिंजरे मे बन्द रखे।

(२) सात्विक और सादा भोजन करे। अधिक भी नही, बल्कि सामान्य से कुछ कम। पशुओ की तरह हर समय खाते नही रहना चाहिए।

(३) हीरे से हीरा काटा जाता है, इसी तरह शुभ मन से ही अशुभ मन को वश मे किया जाता है। इसकी साधना कठिन जरूर है। वर्षो तक निरन्तर साधना (अभ्यास) करते रहने पर ही इसमे सफलता प्राप्त की जा सकती है।

(४) मन मे जो कुछ आता है, उसे रोक न सके, तो स्वयं की दोस्ती उससे न जोडे। जो भी बुरे कार्य हो, उसे रोक न सके, तो कल पर छोड दे और स्वयं को उससे न जोडे। दुष्ट क्रिया पर शुभ **प्रतिक्रिया** करे। मानसिक तनाव, आक्रोश और असन्तुलन का मुख्य कारण अशुभ प्रतिक्रिया है। अतः प्रतिक्रिया से वचे।

देह राग और ममत्व

सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि अपनी आत्मा में आत्मस्वरूप की **अज्ञानता और मोह के कारण भौतिक सुख और भौतिक सुख की सामग्रियों पर तीव्र राग भाव रहा हुआ है। शरीर के प्रति रहे तीव्र राग के कारण ही व्यक्ति सब कुछ छोड़ने के लिए तैयार हो जाता है।**

* शरीर मे डायबिटीस् हो जाय तो, डॉक्टर की सलाह पर सभी मीठे पदार्थ त्याग देता है।
* हार्ट की बीमारी हो गई हो, तो गलिष्ठ भोजन, घी आदि सभी छोड देता है।
* पाचन-क्रिया बिगड जाय, तो रुचिकर, नमकीन आदि तली हुई वस्तुएं छोड़ देता है।
* शरीर की अस्वस्थता निवारण के लिए वह कडवी गोली भी ले लेगा और रूखा-सूखा भोजन भी बड़े चाव से खा लेगा। यह सब शरीर के प्रति रहे राग-भाव का ही परिणाम है।
* **शरीर के प्रति रहे तीव्र राग-भाव के कारण ही तो मनुष्य शारीरिक स्वस्थता पाने के लिए अपने पसीने की कमाई को भी पानी की तरह बहाने के लिए तैयार हो जाता है। सौ-पचास रुपये का भी जिंदगी में कभी दान नहीं करने वाला व्यक्ति हार्ट की या अन्य गंभीर बीमारी के ऑपरेशन के पीछे एक साथ लाखों रुपये खर्च करने के लिए तैयार हो जाता है।** शरीर से रोगो को मिटाने के लिए अर्थात् शरीर को टिकाए रखने के लिए, हम सब कुछ करने के लिए तैयार हो जाते हैं।

आत्म-स्वरूप की अज्ञानता के कारण शरीर के ही रक्षण, पालन-पोषण व संवर्धन के लिए इस जीवात्मा ने सभी प्रकार के पापाचरण किए हैं। अन्य सभी वस्तुओं का त्याग करना तो सरल है, मगर देह की ममता का त्याग करना अत्यन्त कठिन कार्य है।

एक बात स्पष्ट है कि जिस वस्तु पर हमे तीव्र राग-भाव या ममत्व होता है, उसी वस्तु के वियोग व नाश मे हमे दुःख की अनुभूति होती है और जिस वस्तु पर हमें कोई ममत्व नही हो, उस वस्तु के नाश की न तो हमे कोई चिन्ता होती है और न ही उसका वियोग मे हमे पीड़ा का अनुभव होता है। अखवार के मुखपृष्ठ पर कहीं आग लगने से अथवा एक्सीडेन्ट हो जाने से किसी की मृत्यु के समाचार पढते हुए भी मनुष्य आराम से चाय पी लेता है, नाश्ता कर लेता है, उसे लेश मात्र भी दुःख अनुभव नहीं होता है। उस एक्सीडेन्ट मे यदि अपने बच्चे, पति या पत्नी के समाचार होने तो तत्काल रो उठते है, खाना-पीना हराम हो जाता है। ऐसा क्यों? इसका एक ही कारण है कि उस व्यक्ति के प्रति कोई ममत्व नही है, जबकि स्वयं के परिजन के प्रति तीव्र ममत्व भाव है।

अपने जीवन में से ममत्व भाव का विसर्जन करने वाली और समता भाव को आत्मसात् करने वाली आत्माएँ ही समाधिमरण पाती है।

मृत्यु से कैसे बच सकता हूँ?

भागवत मे एक अच्छी कहानी है। राजा परीक्षित को सॉप ने काटा। वह ऐसा सॉप था कि जिसको काटे, वह सातवे दिन मर जाये। राजा परीक्षित भयभीत हुआ। मृत्यु के भय से राजा शुकदेवजी के पास गया। शुकदेवजी के पास बैठकर वह धर्म श्रवण करने लगा – **मृत्यु से मैं कैसे बच सकता हूँ?** इस जिज्ञासा से वह धर्मश्रवण करता है। सुनते-सुनते छह दिन बीत गये। राजा की जिज्ञासा शान्त नही हुई। वह विक्षुब्ध था। शुकदेवजी ने परीक्षित की घबराहट को जान लिया। उन्होने कहा – राजन आज मै तुझे एक घटना सुनाता हूँ।

लघु कथा – एक राजा था। एक दिन शिकार करने के लिए वह जंगल मे गया। शिकार मिला नही। रात हो गई। वह रास्ता भूल गया। उसने जंगल मे ही रात्रि विश्राम का मन बनाया। उसने अपने आसपास नजर दौडाई। उसे कुछ दूरी पर एक झोपड़ी दिखी। वह वहॉ पहुँचा। वह झोपडी एक कसाई की थी। पूरी गन्दगी से भरी हुई थी। छत पर मरे हुए पशु की खाले लटकी हुई थी। एक तरफ मल-मूत्र विसर्जन की जगह थी। इतनी दुर्गध फैली हुई थी कि राजा का सिर चकराने लगा। परन्तु जाये, तो कहॉ जाये? वहॉ रुकना अनिवार्य था। उसने कसाई को कहा – 'भैया, मै भूला हुआ मुसाफिर हूँ। मुझे एक रात के लिये यहॉ आश्रय दोगे क्या?' कसाई ने कहा – 'जो-जो पथिक यहॉ आश्रय पाने आते है, वे यही कहते है कि बस, रात भर रहने दो, सुबह चले जायेगे। परन्तु वे सुबह जाते नही और यही टिक जाते है। यहॉ से जाने को तैयार नही होते। तब मुझे बल प्रयोग करना पड़ता है।'

राजा ने कहा – 'मै वैसा नही करूँगा, प्रातःकाल होते ही यहॉ से चला जाऊँगा। दया कर, मै तुझे परेशान नही करूँगा।' कसाई ने उसको आश्रय दिया। राजा मुँह और नाक पर कपडा बॉधकर झोपडी मे सो गया। धीरे-धीरे वह दुर्गन्ध उसके मस्तिष्क मे व्याप्त हो गई। प्रात. जब वह उठा, उसको सब कुछ अच्छा लगने लगा। उसकी भी वहॉ से जाने की इच्छा नही हुई। कसाई को कहने लगा – 'भैया मुझे यही रहने दो, तुम जो कहोगे, वही मै करूँगा।' कसाई हॅसने लगा। वह बोला – 'सब लोग ऐसा ही कहते आए है। तुझे तो अब यहॉ से जाना ही पडेगा।' शुकदेवजी ने कहा – 'परीक्षित! तुम्ही कहो कि राजा ने उचित किया या अनुचित?' परीक्षित ने कहा – 'भगवन्! एकदम अनुचित। कितना मूर्ख था, कौन था वह राजा?' शुकदेवजी ने कहा – 'परीक्षित! वह राजा दूसरा कोई नही, तू ही है!' 'भगवन्, वह कैसे? 'परीक्षित! यह शरीर की झोपडी कैसी है? क्या भरा है इस देह मे? मल, मूत्र, खून, मांस, हड्डियॉ ही न? तू कितने वर्ष रहा इस झोपडी मे? अब भी इसे छोडने की इच्छा नही होती है न? अनिच्छा से छोडनी पडेगी। इस बात का तुझे दुःख है न? इस प्रकार दुःख करना क्या उचित हे? राजा परीक्षित की ज्ञान दृष्टि खुल गई। वह मृत्यु से निर्भय बना और आत्म भाव मे लीन हुआ।

''विषाद में डूबने का नाम मृत्यु हैं ।'' ॐ शान्ति! ॐ शान्ति!! ॐ शान्ति!!!

आचार-विचार

आचार धर्म की पहली सीढ़ी है। परम धर्म है, परम तप है, ज्ञान की सफलता है।

ज्ञानियो ने धर्म की व्याख्या केवल एक पंक्ति मे इस प्रकार की है –

"विचारों की निर्मलता और आचरण की पवित्रता ही धर्म है।"

धर्म के तीन अंग बताए है -(१) सम्यग् दर्शन, (२) सम्यग् ज्ञान, (३) सम्यग् चारित्र।

वस्तु को सही स्वरूप मे देखना व तत्व ज्ञान पर श्रद्धा रखना, आत्मा का [illegible] करना **सम्यग् दर्शन** है। आत्म आदि नव तत्व को जानना, पहचानना **सम्यग् ज्ञान** है। जीवन मे दर्शन अर्थात् श्रद्धा का होना आवश्यक है, ज्ञान का होना भी अनिवार्य है, किन्तु उन दोनो को क्रियात्मक रूप देने के लिए चारित्र का आचरण होना तो श्रद्धा व ज्ञान की अपेक्षा भी अधिक महत्वपूर्ण है। तत्वो के जानने से आत्मा के कर्म मैल को दूर करने की एवं नये कर्म रोकने की प्रक्रिया हस्तगत होती है। आत्मा के कर्म हटाने की, आत्मा के मैल को धोने की जो प्रक्रिया है – उसे **सम्यक् चारित्र तथा सम्यक् तप कहते है।**

आचार का अर्थ है – मर्यादित जीवन विताना। अगर व्यक्ति अपने जीवन को मर्यादा में नही रखता अर्थात् अपनी इन्द्रियो एवं मन पर यदि संयम नही रखता, तो उसका आचरण कदापि शुद्ध नही रह पाता। सत्य का साक्षात्कार ही ज्ञान है।

तीन प्रकार के योग माने गए है। वे है – **मनोयोग, वचनयोग एवं काययोग।** मनोयोग अर्थात् चिन्तन करना या विचार करना। अतः मन मे शुद्ध विचार ही होने चाहिए। मन के द्वारा किसी भी कार्य के करने का निश्चय हो जाने पर वे विचार जबान पर आते है। वाणी, मन मे उमड़ने वाले विचारो की ही प्रतिध्वनि होती है। इस प्रकार मन से विचार कर लिया, वाणी से उसको प्रकट भी किया, किन्तु जब तक उसे आचरण के द्वारा जीवन मे नहीं उतारा, तो केवल विचार और उच्चार से कुछ भी लाभ होने वाला नही। **आत्म-कल्याण के लिए आचरण अनिवार्य है।**

अगर एक व्यक्ति स्वयं सन्मार्ग पर चलता है, तो वह अच्छा ही है और कुमार्ग पर जाने वाले अन्य व्यक्ति को यदि सन्मार्ग पर ले आता है, तो वह बडे धर्म पुण्य का [illegible] है। ज्ञानी कहते है कि अगर मोक्ष प्राप्त करना है, तो पहले आचार को ग्रहण करो, फिर भगवान की आज्ञा के पीछे चलो, बाद मे औरो को सन्मार्ग पर लाओ, फिर चारित्र का पालन करो। **शुद्ध चारित्र का पालन करने से ही हमारे दर्शन और ज्ञान का भी सम्यग् उपयोग हो सकता है। श्रद्धा का मतलव – आपको धर्म पर विश्वास रखना तथा ज्ञान का मतलव – आपको मुक्ति के मार्ग की पहचान करना और चारित्र का मतलब है – आपको उस मार्ग पर चलना। यही मोक्ष का मार्ग है।** [illegible] पुण्यशाली मानव चारित्र के महत्व को पूर्णतया हृदयंगम् करते हुए अपने जीवन को [illegible] एवं शुद्ध चारित्र से अलंकृत कर अपनी मंजिल के समीप पहुँचने का प्रयत्न [illegible]

विचार **मैं कौन हूँ? मेरा कर्तव्य क्या है? मुझमें ये दोष क्यों आए? संसार की वासनाएँ मुझमें क्यों आई? इन सब बातों का युक्तिपूर्वक चिन्तन करना विचार है।** इस प्रकार के विचार से सत्य-असत्य का, हित-अहित का परिज्ञान होता है। विचार का मतलब सिर्फ विचार के रूप मे नही, अपितु सद्‌विचार, सुविचार या चिन्तन-मनन से है और चिन्तन-मनन ही भावना का रूप धारण करते है। भावना संस्कार बनाती है, उससे जीवन का महत्वपूर्ण निर्माण होता है।

एक चिन्तक ने बड़ी मार्मिक बात कही है – **'आँख का अंधा संसार में सुखी हो सकता है, किन्तु विचार का अंधा कभी भी सुखी नहीं हो सकता। विचार के अंधे को स्वयं ब्रह्मा भी सुखी नहीं कर सकते।' विचार-विवेक, जीवनरूपी महल की नींव है।** जीवन मे यदि सद्‌विचार नही है, विवेक तथा भावना नही है, तो वह जीवन, मानव का जीवन नही कहला सकता। वह जीवन निरा पशु जीवन है। विचार मनुष्य की विशिष्ट संपत्ति है। बाइबिल मे कहा है – 'मनुष्य वैसा ही बन जाता है, जैसे उसके विचार होते है।' जो जीवन मे उतारे वही सच्चा ज्ञान है।

हमारे सामाजिक जीवन मे काफी गड़बड़ी चल रही है। एक ओर शिक्षा का ढेर लग रहा है, दूसरी ओर आचार का हाल यह है कि वे विलासिता, भोगवाद, फैशन और खाने-पीने मे ही जीवन का वास्तविक सुख समझ रहे है। इसी तरह पुराने विचारो के जो बुजुर्ग या प्रौढ लोग है, वे केवल पुरानी अन्धश्रद्धा से पूर्ण विचारो को पकडे हुए है। व्याख्यान सुनना सामायिक, प्रतिक्रमण, पूजा-पाठ सब करते दिखाई देते है, मगर जीवन मे उतारते नही। इस कारण युवको की श्रद्धा भी आचार से धीरे-धीरे खिसकती जा रही है।

जीवन को चमकाने के लिए उच्च विचार के साथ उच्च आचार (आचरण) की आवश्यकता है। **मनुष्य का कोरा ज्ञान पंगु है और बिना ज्ञान के केवल क्रिया थोथी है, अन्धी है।** जहाँ विचार के साथ आचार का समन्वय होता है, वही जीवन ऊपर उठता है। समाज मे आज जो विचार और आचार के बीच चौडी खाई पडी हुई है, उसे पाटा जाय। अन्यथा, वह दिन दूर नही, जबकि विचार केवल विचार ही रह जायेगे और आचार स्वप्न की वस्तु हो जायेगी। विचारो के अनुरूप जब हम आचरण करेगे, तभी समाज, देश और राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल होगा।

कथानक – एक कहानी है – अन्धे और पंगु की। वन मे आग लगी। पंगु देख रहा है, परन्तु बचने का कोई उपाय नही। अन्धा दौड़ रहा है, पर राह का पता नही। जब पंगु की बताई हुई युक्ति के अनुसार, अन्धा पंगु को कंधे पर चढ़ा लेता है, तब सकुशल वन से पार हो जाते है। इसी प्रकार **राग-द्वेष रूपी अग्नि से जलते हुए संसार से पार होने के लिए ज्ञान और क्रिया के संयोग की आवश्यकता है। क्रिया के कन्धे पर ज्ञान को चढ़ाने से सिद्धि प्राप्त हो सकती है।**

 मानवता की पुकार और जिन्दगी की मुस्कान

मानवता सभी धर्मो का मूलाधार है। अगर किसी भी धर्म मे यदि मानवता नहीं है तो वह धर्म दुनिया के किसी काम का नही है। **आज का मानव भौतिकता की चकाचौंध में पथ भ्रमित हो गया है।** बाहर तो मानव ने स्वर्ग का वैभव बिखेर दिया है, पर क्या मानव ने अपने हृदय के भीतर की झाँकी भी देखने का कष्ट किया है? इसके हृदय, मन और मस्तिष्क मे अशान्ति का ज्वालामुखी पहाड धधक रहा है। मानव बाहर से विकसित होता दिखाई दे रहा है, पर भीतर से मुर्झा रहा है। उसकी इन्द्रियो की शक्ति बढ़ती नजर आ रही है, पर हृदय की शक्ति सिकुडती जा रही है। **मानव स्वयं जी रहा है, पर मानवता मर रही है।** मानव की शक्लो मे आज करोडो आदमी घूम रहे हैं, पर उनमे सच्चे मानव कितने होगे? यही चिन्तन का विषय है।

हम किसी से पूछते है – 'आप कौन है?' तो वह कहेगा कि मैं हिन्दू हूँ, मुसलमान हूँ, जैन हूँ, पारसी हूँ, सिख हूँ या ईसाई हूँ। वह यह नही कहेगा कि मैं मानव हूँ। भारत के ऋषि-मुनियो ने मानव शरीर की अपेक्षा मानवता को महत्व ज्यादा दिया है। उन्होंने कहा है कि मनुष्यत्व से बढ़कर इस दुनिया मे कुछ भी नही है। **मानव जीवन में जहाँ मनुष्यत्व की उपेक्षा करके धन को, भौतिक साधनों को, जाति व संप्रदायों को महत्व दिया जाता है, वहाँ मानवता चकनाचूर हो जाती है।**

आज हमे अपने आपको टटोलना होगा, आत्म-निरीक्षण करना होगा कि कहीं हम मानव के रूप मे दानव का, पशु का-सा तो कृत्य नही कर रहे हैं। कही हम दूसरों के अधिकार तो नही छीन रहे है। हम अपने कर्तव्य पालन का कितना निर्वाह कर रहे हैं? २वत लेकर कही हम देशद्रोह का कार्य तो नही कर रहे है। आपके सामने मानवता और नवता दोनो खड़ी है। यदि मानवता को अपनाएँगे, तो आपका जीवन नामक उठेगा और आपके समाज, धर्म, प्रान्त और राष्ट्र का नाम रोशन होगा।

क्या ठण्ड से ठिठुरते हुए मानव को देखकर आपके पास कपड़ा आवश्यकता से अधिक होने पर भी दे देने का मन होता है? क्या किसी गरीब विधवा बहिन को अभाव से पीड़ित होता देखकर उसकी यथाशक्ति मदद करने को जी मचलता है? क्या किसी अनाथ, लाचार और अभावग्रस्त व्यक्ति के दुःख-दर्द मिटाने के लिए आपकी भावनाएँ उमडती है? यदि ऐसा है, तो आपकी धमनियो मे अभी मानवता की करुणा के सुसंस्कार दौड़ रहे हैं। जिसकी नसो मे मानवता की करुणा का स्पंदन होता रहता है वही व्यक्ति सच्चा मानव कहलाने योग्य है।

भगवान महावीर ने भी यही कहा – 'उसी जीवन-पट पर धर्म का रंग चढ़ सकता है, जो शुद्ध हो, साफ हो, निष्कपट हो। **सम्पूर्ण जीव-सृष्टि में मनुष्य-जीवन से बढ़कर दूसरा कोई श्रेष्ठ जीवन नहीं है।** क्योंकि मनुष्य-जीवन, मुक्ति का द्वार है।'

मनुष्य-जीवन द्वारा वह परमात्मा तक पहुँचने की उडान भर सकता है। देवो के जीवन से भी मानव-जीवन बढकर है। अगर आपने इन्सान की जिन्दगी पायी है, किन्तु आप उसका विकास करना नही जानते, चमकाना नही जानते, तो समझना चाहिए कि आपने मानव-जीवन कौडी के भाव लुटा दिया है। **जो जिन्दगी मुस्कराती नहीं, खिलती नहीं, उन्नत नहीं बनती, वह जिन्दगी इस धरती पर भार समान है।** उस जिन्दगी का क्या मूल्य है, जो स्वयं ही मुर्झा कर समाप्त हो जाती हो, न किसी के काम आती हो, न दूसरो के लिए प्रेरणादायी बनती हो?

एक बगीचे मे ऐसी किस्म के फूल खिल रहे है, जिनमे रंग तो आकर्षक है, किन्तु सुवास बिलकुल नही है। इसी प्रकार **किसी आदमी को बहुत सुन्दर सुरूप, गठीला शरीर मिला है, किन्तु उसमें विनय, विवेक, मानवता, संयम, सत्य, अहिंसा आदि सद्गुणों की सुवास नहीं है, तो वह मनुष्य संसार के समझदार लोगों को आकर्षित नहीं कर सकेगा।** जिनके जीवन मे कोई सौन्दर्य, माधुर्य, सौरभ या शिवत्व नही, उनकी जिन्दगी को हम सफल जिन्दगी नही कह सकते, भले ही उसके पास धन का ढेर हो, वैभव का पुञ्ज हो, साधनो का अपार संग्रह हो।

कंस की कहानी ऐसी ही कहानी है, जिसके जीवन मे मुस्कान नही थी। वह वैभवशाली सम्राट था, अपार धन था। शरीर भी सुन्दर और सुदृढ़ था। वह जीवन भर दूसरो पर अत्याचार ढहाता रहा। वह अपने जीवन मे दूसरो को कभी सन्तुष्ट नही कर सका। रावण भी अन्त मे सीता का अपहरण कर बैठा। हर विचारक उनके जीवन पर थूकता है।

जिन पुरुषों का जीवन समस्त कलाओं के साथ खिल जाता है, उनकी जिन्दगी मुस्कान भरी होती है, अनुकरणीय होती है। समस्त प्राणी उनकी जिन्दगी की मंगल कामना करते हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, कर्मयोगी कृष्ण, भगवान महावीर, महात्मा बुद्ध, ईसा मसीह, महात्मा गांधी आदि संसार के महापुरुषो का जीवन पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान मुस्कान से परिपूर्ण था। उनके जीवन मे शान्ति, प्रेम, क्षमा, न्याय, सत्य, अहिंसा आदि की कलाएँ खिली हुई थी। यही कारण है कि आज हजारो वर्ष बीत जाने पर भी विश्व के सभी मानव उनके जीवन की गुणगाथा गाते है।

मनुष्य शुरु से ही विवेक के प्रकाश मे ऐसी प्रवृत्ति करे, ऐसा कार्य करे, जिसमे फिर पछताना न पडे। जहाँ एक बार हाथ से तीर छूट जाता है, वह फिर हाथ मे नही आता। **इसी प्रकार किसी भी कार्य को करने से पूर्व मनुष्य को हजार बार सोच लेना चाहिए, ताकि आगे चलकर जीवन की मुस्कान भंग न हो।** जब मनुष्य कर्तव्य की धारा पर न चलकर जीवन को भय और प्रलोभन की ओर मोड लेता है, तो उसके जीवन की मुस्कान नष्ट हो जाती है।

जिन्दगी की मुस्कान बढ़ाने के लिए आत्मा मुख्य नायक है। आत्मा सम्पूर्ण शरीर का एवं इन्द्रियाँ, मन, मस्तिष्क, हृदय आदि की मुस्कान का पावर हाउस है। हार्दिक दृष्टि से मुस्कान वहाँ होती है, जहाँ मनुष्य का हृदय विराट हो। उसके हृदय मे सम्पूर्ण विश्व के प्रति स्नेह, वात्सल्य और प्रेम का प्रवाह छलछला रहा हो, करुणा और मैत्री प्रत्येक प्राणी के प्रति बह रही हो। जो शरीर हितकारी श्रम करता रहता है, परोपकार में लीन रहता है, पर दुःख मे सहायक बना रहता है, समाज को अपनी सेवाएँ देता रहता है, वह शरीर मुस्कान भरा, लालिमा से युक्त रहता है। जहाँ मनुष्य इन्द्रियो का गुलाम बन जाता है, वहाँ मनुष्य की बादशाही नष्ट हो जाती है।

नैतिक दृष्टि से मुस्कान वहाँ है, जहाँ जीवन के दैनिक व्यवहार में ईमानदारी, सच्चाई, शिष्टता, सभ्यता, नियम, मर्यादाओं आदि का पालन किया जाता हो।

आत्मिक दृष्टि से मुस्कान वहाँ है, जहाँ चारित्र आत्मा के मूलभूत गुणों, सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, क्षमा, दया, संयम आदि को अपनाया जाये और जीवन के प्रत्येक प्रसंग पर दृढ़तापूर्वक इनका पालन किया जाये।

अतः मित्रो! आप अपने को मुस्कान के गुणो से भरिये, आपका जीवन मुस्करा उठेगा। आपको अपनी जिन्दगी मे सर्वांगीण सच्ची मुस्कान प्राप्त करनी है, जो आपकी जिन्दगी को अमरता की ओर ले जा सके। नरक की गन्दी राहो से बचा सके।

卐 महापुरुषों की वाणी 卐

"आत्मा का सौन्दर्य शाश्वत है, पुद्गल का सौन्दर्य क्षण भंगुर है। नश्वर देह का सौन्दर्य कितने समय के लिए है? इसे सजाने के लिए अत्यन्त क्रूरता से निर्मित सौन्दर्य-प्रसाधनो का उपयोग करना कौनसी बुद्धिमत्ता है?"

"जन्म के साथ ही अनिवार्य है मृत्यु! उसे टालना हमारे वश मे नही। किन्तु मृत्यु को सुधारना, हमारे हाथ की बात है।।"

"मनुष्य का जन्म दुर्लभ है, उसका एक-एक क्षण अमूल्य है, तो भी बड़ा आश्चर्य है कि मनुष्य कौड़ियो के समान उसका व्यय करते है।"

"दुनिया का हर जीव सुख का आकांक्षी है। भौतिक संसाधनों मे तो साता सुख मिल सकता है, मगर शांति नही मिलती। प्रसन्नता बाजार मे नही बिकती। सुख और दुःख हमारे मन की उपज है। धर्म ही वह तत्व है, जो मनुष्य और पशु मे भेद करता है।

निहारिका

"सब कुछ सीखा। अपने (आत्मा) मे रहना नही सीखा, तो सीखने जैसा कुछ नही सीखा। मै कौन हूँ? – जिसने यह जान लिया, उसने सब जान लिया। उसे अब और कुछ जानना शेष न रहा। मै कौन हूँ? यह जानना ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है।"

◆◆◆

卐 पंडित और संत में अन्तर 卐

"शास्त्र पढकर जो बोले वह पंडित और सत्य पाकर जो बोले वह संत।

जो ज्ञान को जिह्वा से दर्शाता है, वह पंडित और जो ज्ञान को आचरण से दर्शाता है, वह संत।

पंडित बातो का बादशाह होता है और संत आचरण का आचार्य होता है।"

◆◆◆

卐 भाषण और प्रवचन में अन्तर 卐

"भाषण और प्रवचन मे सिर्फ इतना-सा अन्तर है कि भाषण दिया जाता है और प्रवचन जिया जाता है।" भाषण जिह्वा की खुजलाहट है और बौद्धिक व्यायाम है, जबकि प्रवचन जीवन का निचोड है। आज देश को बातो के बादशाह नही, वरन् आचरण के आचार्य चाहिए। **विनोबा भावे** जैसे संत और **महात्मा गाँधी, लालबहादुर शास्त्री, सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. राजेन्द्रप्रसाद, सुभाषचन्द्र बोस** जैसे आचरणवान लोग ही देश का सही नेतृत्व कर सकते है। इस देश मे जहाँ-जहाँ भ्रष्टाचार, हिंसा, पाप, आतंकवाद पनप रहा है, वहाँ-वहाँ संतो को बैठना होगा। क्योकि सच्चे संत ही समाज और राष्ट्र की चेतना को जागृत कर सकते है और मुर्दा समाज मे नए प्राण फूँककर राष्ट्र को समृद्धि के शिखरो तक पहुँचा सकते है।

◆◆◆

卐 भव्य और अभव्य में अन्तर 卐

"जो परमात्मा की पूजा मे रत है, वह भव्य है और जो परमात्मा को गाली देता है, वह अभव्य है। जिनवाणी के दो शब्द और संतो के प्रवचन सुनकर जिसका मन आनन्द से भर जाता है, रोम-रोम पुलकित हो जाता है, वह भव्य और सम्यग्दृष्टि है और भविष्य मे मोक्ष का अधिकारी है।"

◆◆◆

卐 संन्यासी एवं गृहस्थ में अन्तर 卐

"संत के लिए मृत्यु एक महोत्सव है और गृहस्थ के लिए मातम।

संन्यासी को मृत्यु छेडती नही है और गृहस्थ को छोडती नही है। मृत्यु मातम नही, महोत्सव है।

संसार के हजार-हजार द्वार हो सकते है, मगर मोक्ष का तो एकमात्र द्वार वीतराग (राग-द्वेष रहित) धर्म है। इसके अलावा कही मन लगाया, तो पछताना पडेगा।"

◆◆◆



जीवन का सत्य वासना नहीं, साधना है

जीवन का सत्य वासना नहीं, साधना है; भोग नही, त्याग है। [illegible] भले मनुष्य को शैतान बना देती है और साधना पतित से पतित इन्सान को [illegible] बना देती है। वासना का अर्थ है – आत्मा से हटकर बाहर की ओर दौड़ना [illegible] के भोगो से जुड़ना तथा साधना का अर्थ है – सत्य के निकट पहुँचना, [illegible] पहचानना। मनुष्य यदि अपनी कामनाओ और वासनाओ पर काबू पा ले, तो उसे [illegible] संसार मे भी आनन्द का सागर दिखाई देने लगे। मुक्ति का एकमात्र द्वार वीतराग ([illegible] द्वेष रहित) धर्म है। मनोविकारो के चंगुल से छूटकर ही व्यक्ति वीतरागता को [illegible] सकता है। शरीर के तल पर जीने वाले लोग आत्मा का अनुभव नही कर सकते।

पुण्य और पाप एक ही सिक्के को दो पहलू हैं। सम्पत्ति और विपत्ति पुण्य और पाप का विपाक है। अतः मनुष्य को पुण्योदय से प्राप्त वैभव-ऐश्वर्य के [illegible] इतराना नही चाहिए और न ही पापोदय से कठिन परिस्थितियो मे घबराना [illegible]

वस्तु विकारी नहीं, अपितु उसके प्रति ममत्व और आसक्तिपूर्ण विचार ही विकार को जन्म देते हैं। संसार में रहना बुरा नहीं, अपितु मन में संसार को बसाना बुरा है। पानी मे तैरने वाला सागर से पार हो जाता है, परन्तु उसमें डूबने वाला [illegible] जाता है। हमे संसार मे तैरना है, डूबना नही। जीवन प्रथम और मृत्यु अंतिम [illegible] मृत्यु का भय जीवन के लिए मोह को जन्म देता है और जीवन का मोह आराम [illegible] की लिप्सा को जन्म देता है और फिर मनुष्य इस तरह जीने लगता है कि [illegible] मनुष्य है, समाज से उसका कोई सम्बन्ध नही। लेकिन वास्तविकता तो यह है [illegible] इकाई है, जिससे समाज का निर्माण होता है। हम शरीर के लिए जीते है और [illegible] लिए मरते है।

भौतिक ऐश्वर्य में जीने वाला व विषय-लोलुपी व्यक्ति सत्य के दर्शन कभी नहीं कर सकता। सत्य! उदात्त, मधुर व विराट होता है। इस संसार मे सत्य [illegible] दूसरा कोई मुक्तिदाता नही है। सत्य ही जीवन है, जीवन ही सत्य है। सत्य ही शिव है, शिव ही सुन्दर है। हम अच्छा जीवन जीने का अभिनय तो करते हैं, मगर [illegible] जीवन जी नही पाते।

◇◇

संयम संयम वह मशाल है, जो जीवन के कोने-कोने को आलोकित कर देती है। संयम वह पतवार है, जो जिन्दगी की नाव को भवसागर के पार पहुँचा देती है। [illegible] वह तपस्या है, जिससे गुजरकर व्यक्ति काँच से कंचन बन जाता है। संयम [illegible] जो विषयो के बाणो को भीतर घुसने से रोकता है। संयम भारतीय संस्कृति [illegible] संयम जीवन-क्रान्ति की दास्तान है। संयम साधना की ठोस भूमि है। संयम [illegible] महान सम्पदा है। **ॐ शान्ति! ॐ शान्ति!! ॐ शान्ति!!!**

◇◇

कर्तव्य-निष्ठा

वैसे तो मानव के प्रत्येक उचित कार्य कर्तव्य की सीमा मे आ जाते है। कर्तव्य को किसी एक परिभाषा मे बांधना बड़ा दुष्कर कार्य है। फिर भी ज्ञानी कहते है – **'अन्तरात्मा की वह यथार्थ आवाज, जो चंचल व मोहयुक्त बुद्धि द्वारा ठगी गई न हो, वही कर्तव्य है। अन्तरात्मा की सहज आवाज कभी गलत नहीं होती। जो भाव अथवा कार्य अपनी अन्तरात्मा के प्रतिकूल हो, उसे नहीं करना और जो अन्तरात्मा के अनुकूल हो, उसे अवश्य करना ही कर्तव्य है।'**

कर्तव्य वह है, **जहाँ दूसरों के साथ हम वैसा ही व्यवहार करें, जैसा हम अपने साथ चाहते हैं।** यदि अपने को निष्कपट और सरल व्यवहार प्रिय है, तो दूसरो के प्रति भी हम निष्कपट और सरल व्यवहार रखे। भगवान महावीर कहते है – 'अपनी अन्तरात्मा से सत्य को खोजो, कर्तव्य की अन्वेषणा करो, आत्मा के गज से सत्य का नापतौल करो।'

क्या धर्म, क्या समाज और क्या राष्ट्र? सभी का जीवन कर्तव्य-पालन में ही सुरक्षित है। संसार मे जितने भी महापुरुष हुए है, पहले स्वयं ने कर्तव्य का पालन किया, फिर संसार को कर्तव्य-पालन का उपदेश दिया। कर्तव्य मानव-जीवन का अनिवार्य तत्त्व है। सारे जगत की सुव्यवस्था कर्तव्य-निष्ठा पर आधारित है। प्रकृति के जितने भी पदार्थ है, जैसे– सूर्य, चन्द्रमा, पेड-पौधे, हवा, पानी, पृथ्वी और अग्नि सभी कर्तव्य-पालन मे लगे हुए है और जगत को कर्तव्य-पालन की प्रेरणा दे रहे है। कर्तव्य की बलिवेदी पर बलिदान करने वालो को फूल के जीवन से कितनी मधुर और मूक प्रेरणा मिलती है।

रामायण का पन्ना-पन्ना कर्तव्य के रंग से रँगा हुआ है। रामायण कर्तव्य का बोलता हुआ चलचित्र है। जिस परिवार, जाति, समाज, नगर, देश, राष्ट्र मे कर्तव्य-निष्ठा आ गई, समझो कि वहाँ अष्टसिद्धियाँ और नौ निधियाँ आ गई। लक्ष्मी का उसी कुटुम्ब मे पदार्पण होता है, जहाँ कर्तव्य-पालन की झंकार प्रत्येक सदस्य के हृदय मे भर गई हो। वास्तव मे कर्तव्य-पालन की चूक, मानव की मानवता की चूक है, मानव-जीवन के मधुर आनन्द का ह्रास है, प्रगति की सीढ़ी से फिसलना है, गिरना है।

कर्तव्य जीवनरूपी मानसरोवर का हंस है। इसके अभाव मे जीवन विवेक भ्रष्ट हो जाता है। **कर्तव्य, मानव-जीवन का अमृत है।** कर्तव्य पालक को पार्थिव शरीर के नष्ट हो जाने पर भी अमर बना देता है। कर्तव्य का ज्ञान प्रत्येक मनुष्य को होना ही चाहिए। कर्तव्य-पालन के अभाव मे मनुष्य, मानव समाज मे रहते हुए भी मानव की आकृति मे पशु है। अरे! इतिहास के पन्नो मे कुछ पशु-पक्षी भी अपने कर्तव्य-पालन मे शहीद होकर अमर हो गए। इसके ज्वलन्त उदाहरण है – प्रताप का चेतक घोडा। अपने स्वामी के प्रति कर्तव्य-पालन करते-करते मरकर अमर हो गया। जटायु पक्षी ने कर्तव्य के खातिर महासती सीता को अत्याचारी रावण के चंगुल से छुडाने के लिए अपने प्राणो की बाजी लगा दी।

कभी-कभी दो कर्तव्य एक साथ आ पड़ते हैं, उस समय कोई एक प्रमुख कर्तव्य चुनना पड़ता है।

कथानक – फर्रुखाबाद मे एक सेठ का लडका अचानक बस दुर्घटना मे मर गया। बस के मुसाफिरो का खून खौल उठा और उन्होंने जोश मे आकर ड्राइवर को इतना मारा कि वह बेहोश होकर गिर पड़ा। इसी बीच खबर मिलते ही लडके का पिता वहाँ आ गया और देखा कि लड़का मर गया है और ड्राइवर बेहोश पडा है। उसके सामने आज दो कर्तव्य आ खड़े थे। वह परम कर्तव्य से प्रेरित हुआ और ड्राइवर को दूसरी गाड़ी मे बिठाकर उसे अस्पताल ले गया, उसके इलाज की व्यवस्था की और फिर वापिस आकर अपने मृत लड़के के अंतिम-संस्कार की व्यवस्था करी।

कथानक – एक बार पेरिस मे एक बडा भयंकर दगा हो गया। मैथ्यू [illegible] नामक एक पत्रकार दंगाइयो द्वारा फेके जाने वाली पत्थरो की वर्षा के बीच बैठा हुआ अपने अखबार के लिए विवरण लिख रहा था। दंगा काबू मे नही आया, तो विवश होकर सेना ने गोली चला दी। पत्रकार को भी गोली लगी। वह घायल होकर गिर पड़ा। मरहम पट्टी के लिए जब डॉक्टर आया तो, बोला – 'लिखने मे क्या रखा है, अब तो तुम्हारे लिए आराम ही मुख्य काम है।' पत्रकार बोला – "**अपने कर्तव्य की पूर्ति करना अपना धर्म होता है।** मै पत्रकार हूँ, मेरा कर्तव्य है – घटना-वर्णन लिखना। यह मेरी कलम लो और इस पृष्ठ पर नीचे लिख दो – सायंकाल ३ बजकर १० मिनट पर सेना की गोली चली जिससे तीन घायल, एक मरा।" डॉक्टर ने पूछा – 'मरा कौन?' उत्तर मिला – 'मै' इतना कहते ही पत्रकार के प्राण-पखेरू उड गए। यह है कर्तव्य-निष्ठा का अनूठा [illegible]। कर्तव्य-निष्ठा मे आनन्द का अनुभव उसे ही होता है, जो कर्तव्य-पालन [illegible] हो।

चीन के महान दार्शनिक कन्फ्यूशस ने लिखा है – **'श्रेष्ठ राष्ट्र वही है, जिसमें राजा-[illegible], पिता-पुत्र, गुरु-शिष्य आदि अपना कर्तव्य निष्ठा के साथ पूरा करते है।'**

यदि आप अपने जीवन को महान बनाना चाहते है, तो कर्तव्यनिष्ठ बनिये।

◇◇

"भगवान महावीर का अमर संदेश – **जियो और जीने दो।**"

◇◇

"ज्वाला नही, ज्योति बन जलना सीखो, कॉटे नही, फूल बन खिलना सीखो।

जीवन मे आने वाली कठिनाइयो से डरना नही, समझकर चलना सीखो।।"

◇◇

"यह संसार असार ही है। मोहराजा अनादिकाल से अज्ञानी प्राणी [illegible] नचा रहा है। कर्म संयोग से सभी पदार्थ शरीर, संपत्ति, स्वजन आदि मिलते है [illegible] स्थिति परिपक्व होने पर चले जाते है। लाख यत्न करने पर भी रुकते नहीं।"

◇◇

प्रेम की आभा

प्रेम करने का अर्थ है – अपनी प्रसन्नता को दूसरे की प्रसन्नता में लीन कर देना। प्रेम का मार्ग अग्नि की ज्वाला पर चलने के समान है, उसे सदा जागृत रहना पडता है, जरा-सी भी भूल हुई कि मार्ग से गिरे। **प्रेम आत्मशक्ति वर्द्धक और तारक है। प्रेम सुख की निधि है। संसार के दुःखों को मिटाने और अपने सुखों को लुटा देने में जो आनन्द है, वह प्रेम है।** प्रेम के रस का वर्णन, शब्दो मे किया नही जा सकता, वह तो अनुभव किया जा सकता है। जहाँ निःस्वार्थ व अनन्य प्रेम होता है, वहाँ रूखी-सूखी रोटी भी पकवानो से भी ज्यादा मीठी लगती है। शुद्ध प्रेम की विशेषता है कि वह दूसरो के दोषो की ओर नही देखता, बल्कि गुणो को ही ग्रहण करता है। जहाँ प्रेम की आभा है, वहाँ मनुष्य अपने मन, तन और हृदय तीनो को एक साथ बाँध देता है।

प्रेम से ही हृदय के घाव धुल सकते हैं। प्रेम से ही शत्रु को वश में किया जा सकता है। प्रेम से ही पापी को पुण्यात्मा बनाया जा सकता है। प्रेम ही संसार में समस्त सुधारों का मूल माना गया है। प्रेम ही हिंसा और घृणा पर विजय प्राप्त कर सकता है। प्रेम ही क्रूर प्रकृति को शांत-प्रकृति का बना सकता है। प्रेम ही विश्व शान्ति की अमर-बेल लगा सकता है। प्रेम ही अपराधियो और पापियो के अपराधो और पापो को घटा या हटा सकता है। बुराई को भलाई मे और क्रूरता को शान्तता मे परिवर्तित करने की शक्ति अगर किसी मे है, तो वह है – प्रेम। प्रेम के प्रखर प्रकाश से ही कठोरता का अंधकार मिट सकता है। प्रेम से पशुता की प्रबलतम शक्ति को भी वश मे कर सकते है।

प्रेम सिन्धु ईसा मसीह ने प्रेम-बल द्वारा बडे-बडे पापियो का हृदय परिवर्तन कर दिया था। गुजरात के रविशंकर महाराज को कौन नही जानता, जिन्होने अनेक क्रूर और खूँख्वार डाकुओ का हृदय परिवर्तन प्रेम-बल से कर दिया।

कथानक – जेकस जितना धनी था, उतना ही वह अत्याचारी भी था। जब वह चौथ वसूली के लिए निकलता, तो नगरवासी उसकी अमानवीय यातनाओ के भय से जंगल मे जा छिपते। उसके स्वामित्व मे कई शराबखाने भी चलते थे, जहाँ रात-दिन दुराचार का दावानल सुलगता रहता था। एक दिन प्रेम-शक्ति के धनी ईसामसीह उस नगर मे आए। पीड़ितो की भीड उनके दर्शनार्थ उमड पडी। लोगो ने जेकस के अत्याचार की व्यथा सुनाई। ईसामसीह सीधे जेकस के घर गए और उसे बड़े स्नेह से बोले – 'आज मै तुम्हारा ही अतिथि बनूँगा। आतिथ्य पाने के बाद ईसामसीह ने जेकस के साथ प्रेम से वार्तालाप किया। उस वार्तालाप मे ही ईसा की अपार करूणा स्नेह की वर्षा से जेकस का हृदय बर्फ की भाँति पिघल गया और गरीबो का सम्पूर्ण धन वापिस लौटाने के लिये राजी हो गया।' यह है अन्यायी, अत्याचारी का दण्ड शक्ति की अपेक्षा प्रेमशक्ति से हृदय परिवर्तन का नमूना।

विश्व की सभी समस्याओं के हल के लिए स्नेह का प्रयोग ही [illegible]
है। आज तो धार्मिक, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय [illegible]
स्वार्थ और घृणा की तूती बोल रही हैं। प्राय. प्रेम का [illegible]
हैं। सभी मे मनुष्य अपने लिए मान-प्रतिष्ठा, सुख-साधन [illegible]
है। प्रेम को समझने वाला कोई विरला ही है। सास-बहू के [illegible]
मिल रहे हैं। सास-बहू मे अगर स्नेह की ज्योति जग जाये, [illegible]
मानकर स्नेह व सहानुभूति प्रदान करे और बहू भी उसे [illegible]
सेवा करे, जहाँ इस प्रकार का आपसी प्रेम हो, वहाँ संघर्ष [illegible]
प्रेम की स्थापना के लिए दोनों ओर से स्वार्थ व अहंकार [illegible]

महापुरुषों ने प्रेम को प्रभु का रूप माना है। विश्व के सभी धर्म-[illegible]
'प्रेम' को उच्च स्थान दिया है। तीनों लोकों में प्रेम शक्ति के समान [illegible]
शक्ति नहीं है। प्रेम ही स्वर्ग का मार्ग है। मनुष्यता का दूसरा नाम प्रेम है। [illegible]
समस्त प्राणियों से प्रेम करना ही सच्ची मानवता है। जहाँ प्रेम [illegible]
वहाँ द्वेष और क्लेश के कीडे कुलबुलाने लगते है, घृणा की दुर्गन्ध [illegible]

भगवान महावीर ने 'प्रेम' की जगह 'वात्सल्य' शब्द चुना। [illegible]
माँ की तरह पवित्र प्रेम, स्वार्थ व वासनाविहीन प्रेम, आत्मिक प्रेम, [illegible]

बड़े दु:ख की बात है कि आज मनुष्य आदमी से प्रेम नहीं करता, [illegible]
करता है, यह उसकी पशुता का प्रतीक है। हम अक्सर देखते है [illegible]
सुबह-सुबह अपनी गोद मे कुत्ते के बच्चे को लेकर घूमते है और [illegible]
को बाजू में नौकर लेकर चल रहा होता है। पशु मे प्रेम, किस बात [illegible]
यह आशय नही कि कुत्ते को डंडे से मारो, मगर मनुष्यता को तो [illegible]
तो मत लजाओ। हम कुत्तों को लेकर कार मे घूमे और हमारा [illegible]
प्यासा है, संकट मे है, उसकी फिक्र न करें। क्या यह मनुष्यता [illegible]

याद रखिए **प्रेम संकुचित न होवे।** संकुचित प्रेम मे आते ही [illegible]
जाती है। विराट प्रेम मे सबको सुखी देखने की भावना होती है। **संकुचित प्रेम** [illegible]
ही एक संप्रदाय दूसरे संप्रदाय से घृणा करते है। [illegible]
प्यासे बन जाते है। अत: आत्मविश्वास पूर्वक आप [illegible]
प्रवाहित होने दीजिये, तब आप विश्व के बनेंगे और [illegible]

◇◇

"**मोह और प्रेम** मे बहुत बडा अन्तर है। प्रेम जीवन का प्रकाश है, [illegible]
है। प्रेम उत्थान की राह है, तो मोह पतन की प्रेरणा। प्रेम आत्म धर्म है [illegible]
देह धर्म है। प्रेम त्याग का पुजारी है, तो मोह राग और भोग का [illegible]
मे रहता है, तो मोह आँखों मे बसता है। **प्रेम असली है,** [illegible]

◇◇

जीवन का अमूल्य धन - समय

एक कहावत है – **"खोया हुआ धन और खोया हुआ स्वास्थ्य पुनः प्राप्त हो सकता है, परन्तु खोया हुआ समय पुनः प्राप्त नहीं हो सकता।"**

समय बहुत कीमती है (टाइम इज मनी)। समय किसी का इंतजार नही करता। जीवन का एक-एक पल बहुमूल्य है। लेकिन बिरले ही व्यक्ति समय की कीमत ऑक पाते है। जैसे – हीरे की कीमत जोहरी ही जानता है। उसी प्रकार समय की कीमत कोई महापुरुष ही कर पाता है। कुछ अभागे लोग गपशप मे, ताश-पत्तो के खेल मे, मित्रो के साथ घूमने-फिरने मे, हास्य-विलास मे, विषय-भोग एवं काम-वासनाओ की तृप्ति मे समय को नष्ट कर देते है। कुछ लोग शराब पीने मे, उपन्यास पढ़ने मे, टी.वी. एवं सिनेमा देखने मे भी समय को खर्च कर देते है। इस प्रकार समय को बर्बाद करने वाला स्वयं बर्बाद हो जाता है। ये समय काटने के आत्मघाती तरीके है। समय की उपेक्षा मानव-जीवन के विकास की उपेक्षा है। **समय का तिरस्कार मानव-जीवन की प्रगति का तिरस्कार है। जो समय के महत्व को नहीं जानता, वह जीवन में महत्वपूर्ण कार्यो का संपादन नहीं कर सकता। समय के सदुपयोग से हम महात्मा बन सकते हैं।**

समय धन है – धन के निरर्थक चले जाने पर हम कितना अफसोस करते है? क्या उतना ही अफसोस हमको समय के व्यर्थ चले जाने पर होता है? जो व्यक्ति समय का सदुपयोग करते है, वे एक दिन संसार के पूजनीय बन जाते है और उच्च पद पर आसीन हो जाते है। समय का सदुपयोग मानव को महामानव बना सकता है। समय का हर क्षण स्वर्ण के कणो की तरह कीमती होता है। **एक क्षण भी बेकार न जाने देना और उसका सदुपयोग करना सौभाग्य का लक्षण है।** आलस्यरूपी चोर मनुष्य के समय का अपहरण करने मे लगा हुआ है, उससे सावधान नही रहे, तो समझो जीवन की हार है। प्रत्येक कार्य या साधना उसके समय पर ही करे। **जो अपने सभी कार्य समय पर करते हैं, उनके शरीर में स्फुर्ति, तन्दुरुस्ती और प्रसन्नता रहती है। वे बड़े से बड़े कार्य को थोडे से समय में कर सकते है। शुभ कार्य में तो विलम्ब कतई न करें।**

अपने जीवन मे जब कभी शुभ अवसर आवे, तो उसे हाथ से कभी न जाने दे, नही तो उम्र भर पछतावा रहेगा। अवसर को, शुभ समय को नही खोने वाले ही संसार के इतिहास मे चमके है। अत. जीवन मे जो कुछ भी करे, उसे वस समय पर होशपूर्वक करे।

आपने जहॉ भी समय को परखने मे गलती की, मौज-शौक, एशो-आराम और तडक-भडक मे अपना अमूल्य जीवन गॅवाना शुरु किया कि फिर आपके कावू मे समय नही रहेगा, बल्कि समय ही आप पर कावू पा लेगा।

महत्वपूर्ण कार्यो को ठीक समय पर न करना और अमहत्वपूर्ण कार्यो में समय को बर्बाद करना भी जीवन-रस को सुखाने में एक कारण वना हुआ है।

भारतीय लोगो मे से आपको वहुतेरे इस आदत के [illegible] के समय भोजन करने वैठेंगे और भोजन के समय [illegible] ब्रह्ममुहूर्त मे उठकर आत्म-चिन्तन करने की जगह उनका [illegible] चिन्तन चलेगा। जव सूर्य की किरणे उनके शरीर पर पड़ेगी, [illegible] सोने के समय को ताश, चौपड खेलकर या टी.वी., सिनेमा [illegible] साहित्य पढ़कर वर्वाद कर देगे। इस प्रकार अमूल्य समय-धन [illegible] की एक वहुत वडी धरोहर है, व्यर्थ के कार्यो मे खर्च करके [illegible] और देश व समाज के प्रति भी विद्रोह करते हैं।

आजकल वहुत से लोग जो आलसी, अकर्मण्य, [illegible] अपने दोष को समय के सिर पर मढ देते है। वे कहते है – 'आजकल तो [illegible] कलियुग है, समय ही खराव है। इस समय मे धर्मकर्म मे कुछ पुरुषार्थ [illegible] काल ही वडा वलवान है, जो करता है, समय ही करता है। हम तो समय [illegible] कठपुतली है, वह जैसा नचायेगा, नाचना पडेगा।' इस प्रकार की [illegible] काल के हाथो मे सौंपकर मनुष्य को पंगु वना डाला है।

किन्तु जैन धर्म के महान चिन्तकों ने इस तथ्य से इन्कार किया है। [illegible] कि **मनुष्य के उत्थान-पतन की वागडोर काल या किसी दूसरी शक्ति के हाथ मे नहीं है। मनुष्य अपना निर्माता स्वयं ही है। जव मनुष्य के मन, [illegible] पुरुषार्थ, न्याय-नीति एवं सत्य का प्रकाश जगमगाता है, तो वह [illegible] अच्छा वनता है और साथ में काल को भी अच्छा वनाता चला जाता है।** [illegible] काल अपने आप मे न अधिक अच्छा है और न अधिक वुरा। [illegible] मनुष्य के अच्छे-वुरेपन पर अवलम्वित है। मनुष्य का उत्थान [illegible] पतनकाल ही कलियुग है। एक ही समय मे राम हुआ, तो रावण भी हुआ। [illegible] तो कंस भी हुआ। कलियुग मे गाँधी हुए, तो गोडसे भी हुआ। [illegible] [illegible] युग है।

जव मनुष्य अज्ञान की काली चादर ओढकर मोह की गहरी नींद में [illegible] रहता है, तो वह कलियुग है और जव वह ज्ञान के प्रकाश में आँखें खोलकर [illegible] मार्ग पर चल पड़ता है, तव जीवन का सतयुग है। मनुष्य के मन, [illegible] पर ही अच्छाई या वुराई निर्भर है। समय अपना काम करता है, [illegible] काम करता है। चतुर मनुष्य समय के अनुसार अपनी [illegible]

हाँ तो! **समय ही, जीवन का अमूल्य धन है। समय के सदुपयोग से [illegible] चमक उठेगा।**

"समय वहुत कीमती है। घड़ी यह नहीं वताती कि समय [illegible] है।

वह यह वताती है कि हम प्रतिक्षण मृत्यु की ओर वढ रहे है।।"

हमारा शरीर भाड़े का ही घर है

संसार के सम्बन्ध तो पक्षी मेले की भाँति है। सन्ध्या समय वृक्ष पर अनेक पक्षी आकर इकट्ठे होते है, परन्तु प्रात.काल सूर्योदय होते ही सभी पक्षी अलग-अलग दिशा मे प्रयाण कर जाते हैं। अत: वर्तमान जीवन के किसी स्वजन के वियोग मे शोक-संताप करना अज्ञानता ही है। इस प्रकार शोक करने से तो मोहनीय कर्म का ही बन्ध होता है। ज्ञानी कहते है – हे मानव ! उठो, जागो। आलस्य व प्रमाद का त्याग करो। यह अमूल्य मानव-जीवन तो मोहनीय कर्म के बन्धन से मुक्त होने के लिए मिला है, वही जीवन कही और अधिक कर्म बंधन मे न जकड जाए। **जो आत्मा मोह के अधीन है, वह सोई हुई ही है।**

जिस मकान को तुम अपना मानते हो अर्थात् तुम अपने को उस मकान का स्वामी मानते हो, उसे कोई हडपने की कोशिश करे, बलात् कब्जा करे और ऐसी नौबत आ जाए कि जिन्दा रहने के लिए मकान छोडना पड़े, तो दिल मे कितनी पीडा और वेदना होगी? उस पीडा का एकमात्र कारण है – उस घर के साथ जोडा गया स्वामित्व का सम्बन्ध, उसके प्रति आसक्ति। भाड़े का घर छोड़ते समय कुछ भी दु:ख नही होता है क्योकि हम जानते है कि यह घर हमारा नही है।

बस! यह हमारा शरीर भी भाड़े का ही घर है। आयुष्यरूपी जितना भाडा चुकाया है, उतने ही दिन तक इस घर मे रह सकते है, अधिक नही। परन्तु अफसोस! इस भाडे के देह-गृह को हमने अपना घर मान लिया है और इसी कारण इस देह (शरीर) का त्याग करते समय, इस देह की ममता के कारण हमे अत्यन्त ही पीड़ा का अनुभव होता है।

यह 'देह' हमारा वास्तविक घर नही है और चिर-स्थायी भी नही है, ऐसा सम्यग् बोध हो जाय, तभी समता व समाधिपूर्वक देह का त्याग कर सकेगे।

आत्म धन

आत्म धन के मुकाबले दुनिया का और कोई धन नही है। जरा उस वक्त को याद करो, जिस समय बिना मुहूर्त के तुम्हारी डोली उठा ली जाएगी। आत्म धन विलीन हो जाएगा और दुनिया का धन यही का यही धरा रह जाएगा। तुम स्वयं माटी के हो, बर्तन तूने सारे सोने के सजाए है। तू छोटा-सा है, लेकिन तेरे अरमान तो आसमान जैसे है। पर एक बात तय है कि जिस दिन माटी, माटी मे समाएगी, उस दिन न सोना काम आएगा और न चाँदी काम आएगी। दुनिया का धन खो भी जाए, पर

अपना आत्म-धन बच जाए, तो समझो जान बची लाखों पाए।

आत्मा की परिणति तीन प्रकार की है – (१) जो शरीर इन्द्रियाँ, मन को ही आत्म मानकर चलता है और उन्ही मे आसक्त रहता है, **वह बहिरात्मा है।** (२) जो शरीर आदि को साक्षी रूप मानता है और आत्म-स्वरूप मे रमण करता है, वह **'अन्तरात्मा'** है। (३) जो आत्मा कर्ममल से सर्वथा रहित है, वह अत्यंत निर्मल आत्मा **'परमात्मा'** है।

ॐ तमसो माऽ ज्योतिर्गमय-मृत्योर्मा अमृतं गमय

तमसो माऽ ज्योतिर्गमयः। भक्त कामना करता है, हे प्रभो! मुझे अज्ञान के [illegible] **से निकालकर ज्ञान के पवित्र और उज्ज्वल प्रकाश में ले चलो।** [illegible] क्यो करता है? इसलिए कि अज्ञान के प्रभाव से उत्पन्न [illegible] कर्मो का खेल ज्ञान की दिव्य शक्ति व क्रिया से नष्ट हो जाता है। [illegible] फैलते ही भौतिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार का अंधकार [illegible] आत्मा और परमात्मा रूप तत्वो का चिन्तन, मनन एवं [illegible] के विकारों का और मोह का नाश करने के प्रयत्न मे जुट [illegible]।

ज्ञान का यही सार है कि उसकी सहायता से आत्मा अपने निज [illegible] **पहचान ले तथा उसकी मुक्ति के लिए सम्यक् रूप से साधना करे।** [illegible] घोर संसार को सुखपूर्वक तैर जाना चाहता है, उसे सम्यग् [illegible] लेना चाहिए। वास्तव मे ज्ञान के समान अद्भुत और दुर्लभ [illegible] नही है। ज्ञान का अर्थ सिर्फ किताबो के ज्ञान से नही, बल्कि [illegible]

मृत्योर्मा अमृतं गमयः – अर्थात् – मुझे मृत्यु से अमरता की ओर [illegible] **अब प्रश्न उठता है – अमरता कैसे प्राप्त हो?** मृत्यु से अमरता की ओर [illegible] है – 'जन्म-मरण से मुक्त हो जाना।' यह अभिलाषा केवल इच्छा [illegible] सकती है। गन्तव्य स्थान तक पहुँचने के लिए उस ओर कदम [illegible] सचमुच मे जन्म-मरण की शृंखला को तोड़ना चाहते हैं, तो संसार [illegible] आसक्ति को छोडना ही होगा, त्याग और तपस्या के मार्ग पर [illegible] **होगा कि यह संसार असार है, सांसारिक सुख झूठे है। संसार के** [illegible] **शरीर, मकान, धन-दौलत, पति-पत्नी, बच्चे सभी नाते-रिश्ते** [illegible]। इस शरीर के नष्ट होते ही यही छूट जाने वाला है, तो फिर [illegible] प्रति रही हुई आसक्ति तथा मोह-ममता का त्याग करे।

संसार मे रहते हुए संसार से अलिप्त रहे। इस [illegible] छोड़कर हमे अपनी आत्मा की शुद्धि का ख्याल रखना चाहिए। [illegible] इच्छाशक्ति को जगाएं। अपने आप मे विश्वास रखे तथा सच्चे [illegible] हुए कल्याण के मार्ग पर बढ़ने का प्रयत्न करें। ऐसा करने पर [illegible] प्राप्ति होगी। हमारी आत्मा मिथ्यात्व और अज्ञान के [illegible] दिव्य प्रकाश की ओर बढ़ेगी तथा मृत्यु को जीतकर अमरत्व [illegible] हमारी प्रार्थना – 'मृत्योर्मा अमृतं गमय' सार्थक बनेगी।

◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊

◊ ''जो न दे सके सुगन्ध, वो फूल ही क्या? मिले न जिसमें [illegible], वो [illegible]

◊ जीने को तो सभी जीते है, इस जगत में, जो धर्म-पथ अपना न सके, वो [illegible]

◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊◊

परोपकार की महिमा

इस संसार मे अपना पेट भरने के लिए वैसे तो कुत्ते-बिल्ली, कौए आदि सभी पशु-पक्षी प्रयत्न करते ही है। अपने लिए तो सभी जीते हैं। **जीना उसी का सार्थक है – जो दूसरों के लिए जीए, शुभ कर्म करते हुए, परोपकार के कार्य करते हुए जीए। परपीड़ा कार्य, पाप कार्य करते हुए न जीए।** जहॉ परोपकार की महक हृदय मे उतर जाती है, वहॉ व्यक्ति को दूसरो के सुख मे ही अपना सुख नजर आता है। वे दूसरो की भलाई के लिए अपने प्राण तक न्यौछावर करने मे तनिक भी सकुचाते नही। उन्हे **परोपकार में जो आनन्द आता है, वह व्यक्तिगत उपभोग में कभी भी प्राप्त नहीं होता।**

क्या हमने कभी यह सोचा भी है कि **हम मनुष्य ही क्योंकर बन गए।** पशु-पक्षियो की योनि मिल गई होती तो! इसका उत्तर अगर हम विचारो की गहराई मे जाकर सोचे, तो यही मिलेगा कि 'जिस मनुष्य ने पूर्वजन्म की किसी भी योनि मे दूसरो का कुछ भला किया है, परोपकार किया है, दूसरो की खातिर अपना स्वार्थ त्याग किया है, उसी से हमे इस भव मे मानव का शरीर मिला है, इन्सान का चोला मिला है, जिसके लिए देवता भी तरसते है।' **मनुष्य जन्म प्राप्त करने का रहस्य मिला – परोपकार वृत्ति।**

वास्तव में दूसरों के लिए अपने जीवन को लगाना ही परोपकार है। किसी के लिए मर-मिटना यही तो जीवन की सार्थकता है। दूसरों का भला करने में जो आनंद है, वह दूसरे सब आनंदों से कहीं बढ़कर है। परोपकार एक तरह से अपना ही उपकार है। परोपकार किसी पर एहसान नही, अपितु मुख्यतया अपनी आत्मा के विकास के लिए है। इसी से आत्मा मे मैत्री और करुणाभाव जागृत होते है, तभी मनुष्य जगत के प्राणीमात्र से मैत्री करने लगता है। परोपकार मे ही सच्ची मानवता छिपी हुई है।

प्रकृति के विशाल दृश्य को देखेंगे, तो सर्वत्र परोपकार की वृत्ति के ही दर्शन होंगे। सूर्य, चंद्रमा, नदी, पर्वत, वृक्ष आदि सभी परोपकार में तल्लीन है। प्रकृति के इन परोपकार कार्यो को देखकर क्या मानव को, जो संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है, पीछे रहना चाहिए? क्या उसे अपने प्राप्त साधनो का परोपकार मे सदुपयोग नही करना चाहिए? अवश्य करना चाहिए। यही कारण है कि उदार-हृदय साधु पुरुष दूसरो के लिए ही जीते हैं। **जो मनुष्य परोपकार करता है, वह अपने हृदय में चुभे हुए दुःख के काँटे को निकालता है।**

कुछ लोगों के हृदय में धन-पदार्थ के प्रति ममता एवं आसक्ति भाव इतना प्रवल रहता है कि वे सक्षम होते हुए भी परमार्थ में संलग्न नहीं हो पाते है, किन्तु मनुष्य यदि इस तरफ बढने का दृढ संकल्प पूर्वक साहस कर ले, तो उसके लिए यह कोई कठिन वात नही है। फिर कोई वाधाएँ उनके मार्ग को रोक नही सकती। परोपकारी वनने मे कोई कीमत नही लगती है। यह तो उनकी साधना का एक अंग है।

परोपकार में हदबंदियाँ नहीं होतीं, सीमा-रेखाएँ नहीं खींची [illegible] **या लेवल देखकर काम नहीं किया जाता।** [illegible] रखना चाहिए और सेवा-भावना ही उद्देश्य रखना चाहिए। [illegible] रेखाएँ खीचकर दूसरो के लिए अपनी प्रवृत्ति करती है? [illegible] सम्प्रदाय का भेदभाव नही करती, तो फिर मानव ही ऐसा क्यो [illegible] के पीड़ितो की ही मदद करूँगा? हाँ! यह सच है कि अकेला मानव [illegible] तक सम्पर्क साध नही सकता, किन्तु उसके विचार, बुद्धि और [illegible] व्यापक होना चाहिए। उसे सोचना चाहिए कि – **'जो भी मानव मेरे सम्पर्क मे** [illegible] **सबका भला मेरे द्वारा हो, उन सबका कल्याण, मंगल और शुभ हो।** [illegible] **ऊँचा, सुखी, स्वस्थ और मंगलकारी बने।'**

भारत का एक साधारण-सा अदना आदमी भी यह तो समझता है [illegible] होगे, उसे उसी अनुसार अगली योनि मिलेगी। **जो जैसा बोयेगा वैसा काटेगा।** [illegible] शुभ कार्य करके और अपने प्राप्त साधनो का सुन्दर से सुन्दर [illegible] करके क्यो नही पुण्य की गठरी हम परलोक मे ले जाएँ? [illegible] इस लोक मे भी सुख और आनन्द की मस्ती मे झूमता रहता है। [illegible] स्वर्गीय आनन्द का अनुभव होता है।

पुराणो मे भी यही कहा गया है कि – **'दूसरों को पीड़ा नही पहुँचाना और** [illegible] **परोपकार करना।'** परोपकार केवल धन से ही हो सकता है – [illegible] **सिवाय शरीर से, मन से, बुद्धि से, वाणी से और अन्य साधनों से भी** [illegible] **सकता है।** शरीर से किसी बीमार या वृद्ध की सेवा करना, [illegible] [illegible]लाई करना, बुद्धि द्वारा किसी को सही मार्ग दर्शन देना, [illegible] [illegible] पर जा रहे हो, उन्हे समझाकर सन्मार्ग पर लाना, बुद्धि का [illegible] [illegible] को दुःख के समय सान्त्वना देना, इनके लिए [illegible] या शुभ कार्य को गति दिलवा देना, यह वाणी का परोपकार है। [illegible] और प्राणी मात्र की भलाई की बात सोचना, चिन्तन करना, [illegible] परोपकार ही मानव-जीवन की सच्ची निशानी है।

वास्तविक परोपकार क्या है? – जैन दर्शन कहता है कि [illegible] **कर देना, परोपकार तो है, किन्तु वर्तमान दुःख को टालने के** [illegible] **दुःख के कारणों का नाश करने में उद्यत कर लेना,** [illegible] **पीड़ितों को शुभ-अशुभ कर्मो के स्वरूप को समझाकर,** [illegible] **जाय और उस पर उन्हें अमल करने के लिए** [illegible]

एक कहावत है – "[illegible] नही [illegible]

हृदय नही वह पत्थर है, जिसमे [illegible]

संसार का वास्तविक स्वरूप क्या है?

सम्पूर्ण विश्व, एक नाट्यशाला है और सभी स्त्री-पुरुष इसके अभिनयकर्ता है। इस संसार मे कोई रोग के कारण दु:खी है, तो कोई संतान न होने के कारण। कही लूट-पाट चल रही है, तो कही बलात्कार। नाना प्रकार के आतंक से मानव भयभीत बना हुआ है। संपूर्ण संसार नाना प्रकार की वेदनाओ से भरा हुआ है। मनुष्य-जीवन की पीडाओ के साक्षात् दर्शन करने हो, तो किसी एक बडे अस्पताल मे जाकर देखे कि – लोग कैसे-कैसे भयंकर रोगो से घिरे हुए है। उनके मुख से कितनी भयानक चीखे निकल रही है। कोई हार्ट का दर्दी है, तो कोई टी.बी का, कोई केन्सर का। किसी की ऑखो मे दर्द है, तो किसी के कान मे। किसी का हाथ कटा है, तो किसी का पैर। कोई आग मे जला हुआ दर्दी है, तो कोई एक्सीडेट से घायल।

दुनिया में अर्थ-काम के साधनों में हम सुख मानते है, परन्तु यह हमारी भ्रांति है। वास्तव मे यह सुख नही, केवल सुखाभास ही है। परन्तु मोह मे अंधा व्यक्ति इस यथार्थ सत्य के दर्शन नही कर पाता है और वह अपने जीवन के अमूल्य क्षणो को प्रमाद मे गवॉ देता है। बचपन खेलने कूदने व खाने-पीने मे, यौवन भोग-सुख मे और वृद्धावस्था चिन्ता व शोक मे गॅवाने वाला व्यक्ति आत्मसाधना कब कर सकता है? वास्तव मे दुर्लभता से प्राप्त यह मनुष्य-जीवन आत्म-कल्याण और संयम-साधना के लिए है। **जीवन का सत्य वासना नहीं, साधना है; भोग नहीं, त्याग है।**

शरीर के प्रति कैसा अभिमान?

संत ज्ञानी कहते है कि इस शरीर को कितना ही साफ-सुथरा कीजिये, क्या यह बिल्कुल साफ हो सकेगा? शरीर के भीतर घृणित पदार्थ ही भरे हुए है, तव वह क्या साफ रहेगा? सौ घडे पानी से कुल्ले करके मुँह को साफ करे और अंतिम कुल्ला किसी सभ्य-सज्जन व्यक्ति पर कर दे, तो वह सज्जन खुश होगा या नाराज? पॉच सौ सात सौ या हजार रुपये किलो की मिठाई या इससे भी महॅगा कोई पदार्थ किसी ने खाया, तो दूसरे दिन वह मिठाई नही रही, मल हो गया।

कभी-कभी स्वादिष्ट, सुगंधित पदार्थ भी इधर खाया और क्षण भर बाद ही वमन (उल्टी) हो गया, तो उस पदार्थ की ओर कोई देखना भी नही चाहेगा। ऐसा है – यह शरीर! इसकी स्वच्छता का कैसा अभिमान? इसलिये **इस शरीर में उलझना नहीं है, आसक्त होना नहीं है। साधना में लगे रहना है – यही कला है। शरीर साध्य नहीं है, साधन है।**

"जो प्रेम से जिन नाम को रटता, वही सुख पायेगा,
सब कर्म से निर्लेप हो, शिव धाम में वह जायेगा।"

सुगन्धित बनो

सुगन्ध भौंरो को नही खोजती। भौंरे सुगन्ध को खोजते है, सुगन्ध [illegible] इर्द-गिर्द स्वतः मण्डराएँगे। सुगन्ध से कोई लाभान्वित न हो, तो सुगन्ध [illegible] हानि है – लाभान्वित न होने वाले को।

राग-द्वेष से बढ़कर कोई दुर्गन्ध नही। वीतरागता से बढ़कर कोई सु[illegible]

वीतराग (राग-द्वेष रहित) बनना, सुगन्धित बनना है।

सुगन्ध का प्रचार, जीवन का लक्ष्य नही। जीवन का लक्ष्य है, सुग[illegible]

असंख्य व्यक्ति सुगन्ध से लाभान्वित हो, तो हर्ष नही। एक भी [illegible] लाभान्वित न हो, तो शोक नही। ***पुष्प की भाँति सुगन्धित बनने मे ही सार्थकता है।*** *ख्याति-प्रशंसा के पीछे वे भागते है, जिनका [illegible] ख्याति-प्रशंसा उनके पीछे भागती है, जिनका जीवन सुगन्धित है।*

ख्याति-प्रशंसा के पीछे भागना, जीवन को सुगन्धित बनने से [illegible]

वीतराग (राग-द्वेष रहित) बनकर जीवन को सुगन्धित बनाओ।

अनमोल वाणी

"जिनके संसार के कारणभूत कर्मरूपी अंकुरो को उत्पन्न करने वा[illegible] राग-द्वेषादि समग्र दोष क्षीण हो चुके है, उनको, वे चाहे ब्रह्मा हो, विष्णु हो, शंकर हो या जिन हो, मै वन्दन नमस्कार करता हूँ।"

"अन्य धर्म मे ईश्वर की भक्ति से भक्त बन सकते है, ईश्वर नही [illegible] दूसरे अनेक धर्म परमेश्वर की आगधना को ही धर्म मानते है, जैन धर्म तो भक्ति से आगे परमेश्वर बनने का उपाय भी बताता [illegible]

"ज्ञान जिसका भोजन है, सत्य जिसका मित्र है, शान्ति [illegible] वसुन्धरा जिसका परिवार है, माहम जिमका पिता है, [illegible] संयम जिसका भाई है, पृथ्वी जिसका बिस्तर है, [illegible]

"मुर्दा कौम मत बनो, जिन्दा कौम बनो। और देश, [illegible] सेवा करो। एकता के सूत्र मे बंध जाओ। फूट-[illegible] संकुचित, सांप्रदायिक दृष्टिकोण को त्याग कर [illegible]

"बाहर नया दर्शनीय कुछ नही। [illegible] वह इधर-उधर भटकना और दर्शनीय [illegible]

बिन्दु में सिन्धु

卐 सत्संग 卐

"व्यक्ति जैसी संगत करता है, वैसा ही परिणाम सामने आता है। सज्जन अथवा संत-सतियो का सत्संग संसार सागर पार करने के लिये नौका तुल्य है। व्यक्ति सत्संग के माध्यम से ही अपनी आत्मा के विकारो और मन की विकृतियो को हटाने मे समर्थ हो सकता है। सत्संगति के सहारे से ही मानव की भौतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति संभव है। बुरी संगति से आत्मा मलिन होती ही है। महापुरुषो का समागम मन के संताप को दूर करता है। अत: कुसंगत का परित्याग कर सत्संगति मे रहे। **जीवन में सत्संग के माध्यम से नया मोड़ आ जाता है।**"

◇◇

"चिन्ता हर एक से प्यार नही करती, जिसे कुछ चाहिए, उससे प्यार करती है।
जिसे कुछ नही चाहिए, उसे वह फूटी ऑखो से भी नही देखती।
चिन्ता से मुक्ति पाना है, तो 'कुछ चाहिए' से मुक्त बनो।।"
"अंधा वह नही होता, जिसके पास दुनिया को देखने की ऑख नही।
अंधा वह होता है, जिसके पास अपनी कमियों को देखने की ऑख नहीं।।"

◇◇

"पल भर का विश्वास नही, कल का तूॅ क्या विश्वास करे,
माया के झूठे बन्धन मे, जीवन का क्यो तूॅ ह्रास करे?"

◇◇

प्रसिद्धि, प्रशंसा, पूजा का भाव, जहरीला फणधर साँप है।
यह न डसे, तब तक ही शुभ है।
इसके डसने के बाद आध्यात्मिक प्रगति निष्प्राण बन जाती है।
अध्यात्म के पथिक! इससे बचना। अन्यथा जीवन का लक्ष्य अपने से रूठ जायेगा।
अध्यात्म चन्दन का वृक्ष है। प्रसिद्धि आदि के भाव, कोयले है।
कोयलो के लिए चन्दन के वृक्ष को जलाना, अक्षम्य भूल है।।

⁂

भोजन की भूख तन मे होती है और नाम की भूख मन मे।
भोजन की भूख सीमित होती है और नाम की भूख असीम।
भोजन की भूख दो वार लगती है। नाम की भूख चौबीस घण्टे बनी रहती है।
अध्यात्म के पथ मे बाधा, भोजन की भूख नही, नाम की भूख है।
नाम की भूख से बचो, वरना अध्यात्म से वंचित रहना पडेगा।

◇◇◇

शरीर मरणधर्मा है और आत्मा अमरणधर्मा

शरीर मरणधर्मा है, लेकिन शरीर मे जो आत्मा है, वह अमरणधर्मा है। शरीर नश्वर है, आत्मा अमृतपुंज है। अमृत को पाना है, तो मृत्यु के चक्रव्यूह से बाहर निकलना आवश्यक है। शरीर इन्द्रियो मे जीता है, आत्मा परमात्मा मे जीता है।

इन्द्रियाँ सत्य नही है, शाश्वत नही है। इन्द्रियो के पीछे जो छिपा है, वह सत्य है, जिसके कारण इन्द्रियाँ जीवित है। शरीर फिल्म नही है, शरीर तो फिल्म का पर्दा मात्र है। फिल्म कही ओर है, लेकिन लोग पर्दे को ही फिल्म समझ लेते है। टॉकीज मे पीछे जो मशीन लगी होती है, वहाँ फिल्म होती है, लेकिन वहाँ तक हर किसी का ध्यान नही पहुँच पाता। फिल्म के प्राण पीछे है और इन्द्रियो के प्राण अपने भीतर है। दीपक का महत्व नही होता, ज्योति का महत्व होता है। **शरीर दीपक है और आत्मा ज्योति है।**

ज्ञानी कहते हैं – राग-द्वेष (क्रोध, मान, माया, लोभ) से बचो। क्रोध नहीं करें। वैसे क्रोध के बारे मे पीछे बहुत कुछ लिख चुके है। क्रोध का आवाज से गहरा सम्बन्ध है। जैसे-जैसे क्रोध बढ़ेगा, आवाज भी बढेगी और आवाज मे अपशब्द, गालियो की बहुलता होगी ही। क्रोध और गाली का गहरा सम्बन्ध है। गाली क्रोध के पीछे-पीछे चलती है। गाली क्या है? गाली सिर्फ एक निमित्त है। कोई हमें गाली देता है, तो हम भी उसको गाली देने लगते है। इसका मतलब है कि गाली हमारे अन्दर भी थी। जैसे – कुएँ मे बाल्टी डालते है, यदि कुआँ सूखा है, तो बाल्टी खाली आ जाती है। ज्ञानी कहते है, शब्दो से प्रभावित होने की जरूरत नही है। कोई हमे गाली दे रहा है, तो समझ लेना टेपरिकार्ड चल रहा है। कोई अपना गीत गा रहा है। उसे केवल साक्षी भाव से सुने, देखे केवल ज्ञाता-दृष्टा बनकर।

यदि जीवन में सद्गुणों का प्रश्रय मिले, तो जीवन का चहुँमुखी विकास संभव है। दूसरो के अवगुण देखने की अपेक्षा अपने दुर्गुण देखना बेहतर है। दरअसल व्यक्ति दूसरो के गुण नही देखता, अपितु दुर्गुण जल्दी देख लेता है। यदि किसी की एक आँख फूटी है, तो वह झट बोल पडता है कि यह काना है। जो आँख फूटी थी, वह दिख गई, जो सलामत है, वह नही दिखी। यह सम्यग् दृष्टि का लक्षण नही है। **सम्यग् दृष्टि वह है, जो सिर्फ गुण ही देखता है।** जिसे भी देखे, उसमे जो गुण दिखे, उसे अपना ले। और ऐसा व्यक्ति इस धरती पर कोई नही होगा, जिसमे एक भी गुण न हो। उसमे भले ही निन्यानु दुर्गुण हो सकते है, मगर एक गुण तो होगा ही। यदि जीवन मे एक भी सद्गुण आ जाए, तो अन्य गुण भी अपने आप आ जाते है।

हम दिन की शुरुआत परमात्मा के नाम स्मरण से करें, अखबार पढ़कर नहीं। सोएँ तो अपने-अपने धर्म मंत्र का जाप करें और आज की समीक्षा व कल की तैयारी करे तथा अपने आप को परमात्मा के हवाले करके सोएँ। टी.वी. देखते-देखते अथवा फिल्मी गीत सुनते-सुनते न सोएँ।

युवक ने योजना रद्द की

एक युवक डी.लिट. की डिग्रीधारी था। मस्तिष्क योजना प्रधान था। एक योजना बनाई। संत से मिला। योजना बताना चाही। बोला – "जल्दी ही मेरी शादी होगी। व्यवसाय या उद्योग के द्वारा अरबपति बनूँगा। शाही-ठाट का जीवन होगा। आधुनिक सुविधाएँ उपलब्ध होगी। उसके बाद राजनीति मे प्रवेश कर किसी प्रमुख पार्टी का अध्यक्ष बनूँगा। फिर चुनाव मे खड़ा होऊँगा। विजेता बन प्रधानमंत्री बनूँगा। मेरा शासन स्थिर एवं लोकप्रिय होगा।"

"फिर एक अलौकिक पुस्तक लिखूँगा। उसमे सब धर्म-दर्शनो का निचोड़ होगा। विश्व की सभी भाषाओ मे उसका अनुवाद होगा। वह पुस्तक विश्व-मान्य होगी। गीता, रामायण, बाइबिल जैसे ग्रन्थो से भी ज्यादा उसका बहुमान होगा। फिर सब कुछ छोड़कर अध्यात्म की साधना मे लगूँगा और आप जैसा संत बनूँगा और भी कोई सुझाव हो तो इसमे जोड़ सकता हूँ।"

संत बोले - 'योजना चिन्तनपूर्ण है, कुछ भी कमी नही। एक बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है। योजना की पूर्णता तक अर्थात् योजना के अंतिम पायदान पर पहुँचने तक तुम चिरजीवी (जीवित) न रहे, तो फिर योजना का क्या होगा?'

युवक तत्काल संभला, गम्भीर बना और बोला – 'फिर तो योजना पर पानी फिर जायेगा।'

संत बोले – 'अन्त मे जब संत बनना है, तो अभी से अध्यातम-साधना में लगो और संत बन जाओ। घुमाव मे जाना व्यर्थ है।'

संत की वाणी ने युवक की आँखे खोल दी। युवक ने योजना रद्द की। अध्यात्म की साधना मे लगा और संत बन गया।

प्रत्येक व्यक्ति लम्बी उम्र की कामना रखता है, किन्तु चिरायु होना किसी के हाथ की बात नही। **मृत्यु कभी भी आ सकती है। उचित यह है कि अन्त में जो करना आवश्यक हो, उसमें अभी ही प्रवृत्त हो जाना चाहिये।**

◇◇

"सुख प्राप्ति के तीन नुस्खे - **कम खाओ, गम खाओ, नम जाओ।**

सुख संसार के भोगोपभोगो मे तथा पदार्थो का संचय करने में नहीं है, उनका त्याग करने में है। **कामनाओं को जीत लो, दुःख दूर हो जायेगा।**"

◇◇

"अमृत रूप से चिन्तन करने पर विष भी अमृत बन जाता है।

शत्रु को वार-वार मित्र दृष्टि से देखने पर शत्रु भी मित्र बन जाता है।"

◇◇

जिन्दगी का मूल लक्ष्य जीविका नहीं

जिन्दगी का मूल लक्ष्य जीविका नहीं, जीवन है। जीवन की उपेक्षा करके जीविका के पीछे भागना निरा पागलपन है। जीविका की चिन्ता आवश्यक है, लेकिन [illegible] भी नही कि जीवन को ही भूल जाएं। सुबह ब्रह्ममुहूर्त मे उठकर हर आदमी को [illegible] मे चिन्तन करना चाहिए कि मै कौन हूँ? मै कहाँ से आया? और मरकर मुझे [illegible] ये ऐसे जीवन्त प्रश्न हैं, जिनका समाधान, जिन्दगी की अनिवार्य आवश्यकता है। [illegible] उठकर जीविका के पीछे न भागे। कुछ क्षण धर्म-साधना के लिए देवें।

संसार में अच्छा-बुरा कुछ नहीं है। हमारी दृष्टि ही उसे अच्छा-बुरा बना देती है। यदि हमारा दृष्टिकोण परिष्कृत है, तो सृष्टि हमे स्वर्ग प्रतीत होगी। यदि हमने [illegible] मे अमृत बसा लिया हैं, तो सृष्टि के कोने-कोने मे अमृत नजर आयेगा। [illegible] दर्शन सिर्फ वे ही कर पाते है, जो सम्यग् दृष्टि है, जो अनेकान्त दृष्टि रखते है। [illegible] तो हम बस एकान्त दृष्टि को लेकर जी रहे है। जिस प्रकार बैल आँखें बन्धी होने के [illegible] इधर-उधर देखे बिना निरन्तर कोल्हू चलाए जाता है, उसी प्रकार मनुष्य भी [illegible] नीति-अनीति, धर्म-अधर्म या पाप-पुण्य का विचार किए बिना ही गृहस्थी [illegible] जुटा रहता है। अन्तर दोनो मे यही है कि बैल अपनी आँखो पर अनिच्छा से [illegible] है और मानव स्वेच्छा से अपने ज्ञान-चक्षु बन्द किए रहता है। **स्वयं को पहचान [illegible] ही धर्म है। धर्म आत्मभाव है।** जब तक मनुष्य चेतना (आत्मा) की पहचान नहीं [illegible] तब तक माया मे जीता है। माया मनुष्य की चेतना को मूर्च्छित कर देती है, [illegible] भूल जाता है कि जीवन का सत्य क्या है और लक्ष्य क्या है? [illegible] रूप ही संसार है। संसार अपने चित्त मे है, अपनी वासना मे है। जिसकी [illegible] होगी, उसका संसार भी उतना ही बडा होगा। वासना अनंत है, तो संसार भी [illegible]

सच्चा धर्म यही है कि जो व्यवहार हमें पसन्द नहीं, वैसा हम दूसरों के साथ न करें। धर्म आत्मगत है। शरीर तो स्वभाव से अपवित्र, [illegible] से शुद्ध नही हो सकता। हाँ! धर्म जल से शुद्ध हो सकता है। धर्म [illegible] जो आत्मा की मलिनता दूर करता है। जो लोग शरीर और आत्मा का भेद [illegible] वे आत्म-साधना के माध्यम से अपना आत्म-कल्याण करके जन्म और मृत्यु [illegible] से हमेशा के लिए मुक्त हो जाते है। शरीर तो नश्वर है, लेकिन इस [illegible] (आत्मा) है, जो शाश्वत हैं, उसे पाना है, उस तक पहुँचना है, [illegible]

सतयुग सदा है, यदि हम सम्यग् दृष्टि हो तो। कलयुग भी सदा है, [illegible] दृष्टिधारी हो तो। सतयुग आज भी है, लेकिन हमे नहीं दिखता, [illegible]

परमात्मा तो सिर्फ उन्हे ही दिखाई पडता, जिनकी आँखे है। [illegible] भक्ति की। इन चमडे की आँखो मे परमात्मा को नहीं देख सकता। [illegible] परमात्मा के दर्शन सम्भव है। सच्चा धर्मात्मा अत्यन्त उदार [illegible] दृष्टि का मन विराट होता है। वह सीमित व संकुचित दायरे मे [illegible] मे कर्म करता है।

आज आदमी का हृदय इतना छोटा हो गया है कि उसमे 'हम दो-हमारे दो' ही समा पाते है। शेष दुनिया जाए भाड़ मे। हमारे मकान तो बडे है, लेकिन मन छोटा है। मन बडा होना चाहिए। इतना बडा कि सारी दुनिया उसमे समा जाये। अभी तो हमने मंदिर के शिखर और मस्जिदो की मीनारे ऊँची-ऊँची बना ली, लेकिन हमारे दिल बड़े छोटे-छोटे हो गए हैं। मंदिर के शिखर और मस्जिदो की मीनार ही ऊँची नही करनी है, मन को भी ऊँचा करना है, ताकि उच्च आदर्शो की स्थापना हो सके। **जन-जन की सेवा, दीन-दुःखी की सेवा भी एक पूजा है।**

अज्ञानी जीव अमृत मे भी जहर खोज लेता है और मंदिर मे भी वासना खोज लेता है। वह मंदिर मे वीतराग प्रतिमा के दर्शन नही करता, अपितु वहाँ आयी हुई स्त्रियो को राग की दृष्टि से ताकता है और पाप का बंध कर लेता है। जबकि ज्ञानी सम्यग् दृष्टि जीव, रहता तो दलदल मे है, लेकिन अनुभव परमात्मा का करता है। कमल रहता तो कीचड मे है, मगर आकाश मे खिलता है।

एक व्यक्ति बिस्तर पर लेटा-लेटा हाथ-पाँव पटक रहा था, तभी उसका मित्र आ पहुँचा। मित्र ने पूछा – 'भैया! यह तू क्या नाटक कर रहा है?' तो व्यक्ति ने कहा – 'मित्र! 'नाटक नही, दरअसल मै तैरना सीख रहा हूँ।' मित्र ने पूछा – 'यह साधना कितने दिनो से चल रही है?' व्यक्ति ने कहा – 'अट्ठारह साल हो गए, पर अब तक तैरना आया नही, पता नही भूल कहाँ हो रही है?' भूल हो रही है, सबको पता है, सिर्फ उस मूर्ख व्यक्ति को पता नही है। तैरना सीखना है, तो पानी मे जाना होगा, पानी मे डूबना होगा। तैरना पलंग पर नही, पनघट पर सीखा जाता है। **परमात्मा तक ट्रेन, प्लेन में बैठकर नहीं, अपितु धर्म साधना करके ही पहुँचा जा सकता है।**

प्राणी जगत मे एकमात्र मनुष्य ही ऐसा प्राणी है, जो जीना ही नही, जानना भी चाहता है और वह जानना स्वयं को जानना होना चाहिए। मनुष्य सबको तो जानता है, लेकिन स्वयं को नही जानता। अब जरा अपने अंतर मे झाँके, अपने को निहारें, अपने को सम्हाले, औरो के लिए अब तक बहुत जी लिये। जीवन का सच्चा आनन्द स्वयं को जानने मे है। **जिसने आत्मा को जान लिया, उसने परमात्मा को जान लिया,** क्योकि आत्मा ही परमात्मा है। आत्मा को समझकर ही परमात्मा को समझा जा सकता है। जीवन का लक्ष्य यदि कोई प्रदान कर सकता है, तो वह धर्म ही है और धर्म ही जीने की कला सीखाता है। धर्म से ही सही जीवन की दिशा और दशा सुधरती है। भारतीय संस्कृति मे धनपतियो और सत्ताधीशो की नही, संन्यासियो और संतो की पूजा होती है। इस देश की परम्परा रही है कि महलो मे रहने वाले सम्राट भरत और दशरथ अपने महलो से निकलकर, नंगे पाँव पैदल चलकर कुटियो मे रहने वाले संतो की चरण वंदना करते थे। **राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, महात्मा गाँधी, ईसा मसीह आदि सभी त्याग के ही हिमालय है। इन्हें मात्र जिह्वा में नही, जीवन में बसाएँ।**

卐 महावीर, बुद्ध, राम, कृष्ण, क्राइस्ट अब चौराहे पर खड़े हों 卐

अब संत-मुनियो को अपने प्रवचन मन्दिरो, उपासरो मे करने की बजाय शहर के [illegible], चौराहो और सार्वजनिक ठिकानो पर करना चाहिए, ताकि जन-जन लाभान्वित हो।

अब महावीर जैनों से मुक्त होकर चौराहे पर खड़े हों, ताकि उनका सन्देश, उनकी चर्या, उनका आदर्श जीवन दुनिया के सामने आ सके। आज समय की माँग है कि [illegible] महावीर और उनके दर्शन को विश्वमंच पर लाएँ। जिस दिन महावीर चौराहे पर खड़े हो [illegible] उस दिन इस समाज, राष्ट्र व विश्व मे एक क्रांतिकारी परिवर्तन होगा। संसार का [illegible] जायेगा और देश मे जो भ्रष्टाचार, गन्दी राजनीति, भाषाई संकीर्णता, चारित्रिक [illegible] विघटनकारी जातिवाद और देश को विभाजित करने वाला सम्प्रदायवाद व्याप्त है, [illegible] समाप्त हो जायेगा। दुनिया बदली-बदली नजर आयेगी।

लेकिन शर्त केवल इतनी-सी है कि **महावीर, बुद्ध, राम, कृष्ण, क्राइस्ट को चौराहे पर खड़ा होना पड़ेगा। चौराहे से तात्पर्य है, प्रत्येक व्यक्ति को अपने रोजमर्रा की चर्या में उनके आदर्शों को स्थान देना होगा। आदर्शों को जीकर बताना होगा।**

मानव जाति का दुर्भाग्य है कि आज सभी धर्म और सम्प्रदाय के लोगों ने अपने-अपने **आराध्यों को कैद कर दिया है – किसी ने मंदिरों में, किसी ने मस्जिदो मे, किसी ने चर्चो में, तो किसी ने गुरुद्वारों में।** जो मुक्तिदूत बनकर आये थे, हमने उन्हें [illegible] में डाल दिया। हमारे मंदिर, मस्जिद, चर्च, गुरुद्वारे क्या कारागृह नही है?

महावीर की देशना तो प्राणीमात्र के लिये है। उनका 'जिओ और जीने दो' तथा अनेकांत जैसे सिद्धांत एवं अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जैसे उपदेश न केवल जैनियों के लिए है, अपितु संपूर्ण विश्व के लिए संजीवनी बूटी है। [illegible] की ही बपौती नही, बल्कि सबकी जागीर है। महापुरुष, तीर्थंकर और अवतार [illegible]।

जिस प्रकार माँ किसी एक बेटे की जागीर नही होती। माँ पर सब बेटों का [illegible] अधिकार होता है, उसी प्रकार **महापुरुष समुचित मानव-जाति के प्राण होते हैं,** [illegible] एकाधिकार जमाना कुचेष्टा है। ये तो संपूर्ण विश्व की धरोहर है। जिस प्रकार [illegible], वैद्य सबके लिए होते है, सभी उनका लाभ उठा सकते है, उसी प्रकार धर्म, [illegible], मुनि और अवतार सभी के लिए होना चाहिए। **सभी धर्मो और सम्प्रदायों में जो श्रेष्ठ गुण हैं, उन्हें हम ग्रहण करें। मर्यादा पुरुषोत्तम राम की कर्तव्यनिष्ठा, श्रीकृष्ण का कर्मयोग, भगवान महावीर की अहिंसा, बुद्ध की करुणा, नानक का [illegible], कबीर का फक्कड़पन, जीसस की क्षमा और और मुहम्मद का ईमान – ये सभी के लिए अनुकरणीय है।**

वैचारिक स्वतंत्रता और मतभेद होना बुद्धिमत्ता और प्रगति का द्योतक है, किन्तु [illegible] के नाम पर लड़ना, झगड़ना, वैर-विरोध को बढ़ावा देना, [illegible] सत्य का खून करना है अर्थात परमात्मा की हत्या करना है। [illegible] किन्तु मनभेद नही होना चाहिए। **महावीर को जिह्वा में नहीं, जीवन में बसाएँ।**

卐 ''फूट परस्ती महावीर का धर्म नहीं, तोड़-फोड़ महावीर का कर्म नहीं। फिर भी देखिये, आज क्या हो रहा है, यह सब करते हुए भक्तों को शर्म नहीं।'' 卐

गीता-सार

* क्यो व्यर्थ चिन्ता करते हो? किससे व्यर्थ डरते हो? कौन तुम्हे मार सकता है? आत्मा न पैदा होती है, न मरती है।
* जो हुआ, वह अच्छा हुआ, जो हो रहा है, वह अच्छा हो रहा है। जो होगा, वह भी अच्छा ही होगा। तुम भूत का पश्चात्ताप न करो। भविष्य की चिन्ता न करो। वर्तमान चल रहा है।
* तुम्हारा क्या गया, जो तुम रोते हो? तुम क्या लाये थे, जो तुमने खो दिया? तुमने क्या पैदा किया था, जो नाश हो गया? न तुम कुछ लेकर आये, जो लिया, यही से लिया। जो दिया, यही पर दिया। जो लिया, इसी (भगवान्) से लिया। जो दिया, इसी को दिया। खाली हाथ आए, खाली हाथ चले। जो आज तुम्हारा है, कल किसी और का था, परसो किसी और का होगा। तुम इसे अपना समझ कर मग्न हो रहे हो। बस यह प्रसन्नता ही तुम्हारे दुःखो का कारण है।
* परिवर्तन संसार का नियम है। जिसे तुम मृत्यु समझते हो, वही तो जीवन है। एक क्षण मे तुम करोड़ो के स्वामी बन जाते हो, दूसरे ही क्षण मे तुम दरिद्र हो जाते हो। मेरा-तेरा, छोटा-बडा, अपना-पराया मन से मिटा दो, विचार से हटा दो, फिर सब तुम्हारा है, तुम सबके हो।
* न यह शरीर तुम्हारा है, न तुम शरीर के हो। यह अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश से बना है और इसी मे मिल जायेगा। परन्तु आत्मा स्थिर है, फिर तुम क्या हो? तुम अपने आपको भगवान् के अर्पित करो। यही सबसे उत्तम सहारा है। जो इसके सहारे को जानता है – वह भय, चिन्ता, शोक से सर्वदा मुक्त है।
* जो कुछ भी तू करता है, उसे भगवान् को अर्पण करता चल। इसी से तू सदा जीवन-मुक्ति का आनन्द अनुभव करेगा।

क्रान्तिकारी-सूत्र

"जीवन मे थोडा दु:ख भी जरूरी है। जैसे कोई मीठा ही मीठा खाए
तो खाते-खाते ऊब हो जाती है, मीठा के साथ वीच मे थोडा नमकीन जरूरी है,
वैसे ही सुख के वीच मे थोडा दु.ख जरूरी है, दरअसल दुःख मनुष्य के ही कृत-कर्मों का फल है।
जो रोकर भोगता है, वह अज्ञानी है और जो हँसकर भोगता है, वह ज्ञानी है।"

◇◇

"अगर आपने एक मांसाहारी व्यक्ति को अपनी सत्प्रेरणा से शाकाहारी बना दिया तो समझना,
आपने घर बैठे ही चार-धाम की यात्रा का पुण्य अर्जित कर लिया।
दरअसल एक हिंसक व्यक्ति को अहिंसक बना देना, सबसे बडी तीर्थ यात्रा है।
और **अपना पेट भरने के लिए किसी प्राणी का पेट काटना, सबसे बड़ा पाप है।"**

◇◇

"मित्रो! जो शुभ है, पुण्य है, धर्म है, करने जैसा है, वह आज, अभी, इसी वक्त करो।
उसे कल और परसो पर नही टालना, क्योकि जिन्दगी का पल भर का भी तो भरोसा नहीं है।
पता नही हम कल रहे, ना रहे, अत: **जो शुभ है, धर्म है, उसे आज ही कर लो।
नहीं तो मृत्यु के वक्त हमें पछताना पड़ेगा।"**

◇◇

"अव संत-मुनियो को अपने प्रवचन साधारण जनता के वीच करने की अपेक्षा संसद
और विधान सभाओ मे भी करना चाहिए, क्योकि **ऐसा विश्वास है कि अगर देश और
प्रदेश की राजधानियों में बैठे करीब ९ हजार लोग सुधर जाएँ, तो देश की १०
करोड़ जनता आपो-आप सुधर जायेगी।"**

◇◇

"पौ जन्म है, प्रभात वचपन है, दोपहर जवानी है, संध्या बुढापा है और रात मृत्यु है।
दरअसल जीवन एक यात्रा है। पूरव मे सूर्य निकलता है, तो यह तय है कि सुबह के बाद दोपहर
और शाम भी होगी। लेकिन जिन्दगी के साथ ऐसा कोई नियम नही है। जिन्दगी का सूरज
कभी भी अस्त हो सकता है। अत: विलीन होने से पहले अपने को पहचान लेना।"

◇◇

"मनुष्य एक सोपान है, सीढी है। जिस सीढी मे नीचे उतरा जाता है, उसी से ऊपर भी
चढ़ा जा सकता है। मनुष्य देह भी एक सीढी है। इस सीढी से ऊपर चढ़कर हम भगवान
वन सकते है और नीचे उतरकर पशु वन सकते है। **भगवान बनना है या पशु? निर्णय
हमारे हाथ में है।"**

◇◇

"जागरूक संत और ईमानदार पुलिस ही देश की असली ताकत है। संत और पुलिस
दोनो का लगभग एक ही काम है। दोनो ही लोगो को सुधारने का काम करते हैं,
केवल इतना है कि संत 'संकेत' से समझाते है और सिर्फ डंडे से। **दरअसल जो संत
का संकेत नहीं समझते हैं, उन्हें ही पुलिस के डंडे की जरूरत पड़ती है।"**

◇◇

"**दान और पुण्य एकांत में होना चाहिए।** जैसे – आप स्नान सडक या चौराहे पर नही वरन् बन्द बाथरूम मे करते है, वैसे ही दान-पुण्य गुप्त होना चाहिए। पुण्य की किसी को खबर नही लगने देना चाहिए, **क्योंकि पुण्य छिपाने से बढ़ता है और बताने से मरता है। पुण्य और दान छपाकर नहीं, छिपाकर करना चाहिए।**"

◇◇

"बच्चा सुन्दर लगता है, लेकिन माँ यदि उसकी आँखो मे काजल आँज दे, तो और भी खूबसूरत लगने लगता है और फिर हर कोई उसे गोद मे लेकर खिलाता है। यो तो तुम भी सुन्दर हो, लेकिन **यदि तुमने अपनी आँखों में प्रभु-भक्ति का काजल आँज लिया, तो तुम और भी सुन्दर लगने लगोगे। फिर तुम्हें परमात्मा भी गोद में लेकर खिलाए, तो आश्चर्य नहीं।**"

◇◇

"किसी ने कहा – 'दिगम्बर मुनि के तन पर लंगोट क्यो नही?' मुनि भगवंत कहते है – जब मन मे कोई खोट होती है, तभी तन पर लंगोट होती है। दिगम्बर मुनि के मन मे कोई खोट नही है, इसलिए उसके तन पर लंगोट भी नही है। **दिगम्बर मुनियों की नग्नता तो परमोत्कृष्ट साधना का प्रतीक है। जो वासना और विकारों से परे है, ऐसे शिशु और मुनि को वस्त्रों की क्या जरूरत?**"

◇◇

"एक बूढा बाप अपने चार बच्चो की परवरिश तो कर सकता है, किन्तु
चार जवान बेटे मिलकर भी अपने बूढे माँ-बाप की परवरिश नही कर पा रहे है। **बुजुर्गों के प्रति बढ़ता यह अलगाव समाज के लिए खतरनाक संकेत है। इस खतरे का समाधान – बच्चों को सुसंस्कार देना है।**"

◇◇

"**धर्म और धन दोनों औषध है। इसमें धर्म 'टॉनिक' है, पीने की दवा है और धन 'मरहम' है, बाहर लगाने की दवा है।** दोनो का सही प्रयोग जीवन को स्वस्थ बनाता है। किन्तु आज सब कुछ उल्टा हो रहा है। धर्म को बाहर लगाया जा रहा है और धन को गटागट पिया जा रहा है। यह विसंगति ही जीवन-तनाव का कारण है।"

◇◇

"**मांस-निर्यात भारत की ऋषि और कृषि की परम्परा के माथे पर कलंक है।**
मांस-निर्यात, घाटा पूर्ति का घटिया तरीका है। सरकार मांस निर्यात बन्द करे।।"

◇◇

शरीर के प्रति ममत्व भाव जितना तीव्र होता है,
मृत्यु मे समाधि भाव उतना ही दुर्लभ बनता है।
मृत्यु के समय **यदि समाधि भाव की चाहना है तो,**
जीवन में धन-परिवार के प्रति ममत्व भाव को तोड़ना पड़ेगा।

◇◇

प्रगाढ़ श्रद्धा-दृढ़ विश्वास

जीवन में जो महत्व श्वास का है, समाज में वही महत्व विश्वास का है। दुनिया [illegible] चारित्र विश्वास पर टिकी है। जब तक विश्वास है, तब तक दुनिया है। श्रद्धा [illegible] ही जीवन की नीव है, चारित्र ही जीवन की रीढ़ है, धर्म का मूल है। श्रद्धा [illegible] का सृजन करती है और उसे कल्याण के पथ पर अग्रसर करती है। [illegible] भक्ति का ही पुतला है। जिसकी जैसी श्रद्धा-भक्ति होती है, वह वैसा ही बन [illegible]

कथानक – एक अन्धा पुरुष अपने पोते के कन्धे पर हाथ रखकर [illegible] हेतु मंदिर जाया करता था। मार्ग में एक पुरुष उसे रोज मंदिर जाता हुआ देखता [illegible] दिन उस व्यक्ति ने सूरदास से पूछा – 'बाबा! तुम्हे दिखाई देता नही है, फिर [illegible] जाते हो?' सूरदास ने तपाक से कहा – 'मुझे नही दिखता, तो क्या हुआ? [illegible] देखते ही है, वे अंधे नही है। इसको कहते है – प्रगाढ श्रद्धा और दृढ़ [illegible] श्रद्धा भावना ही तो है, जो पत्थर मे भी भगवान के दर्शन कर लेती है। सूरदास [illegible] आँखे कहाँ थी? फिर भी कहते है कि प्रभु ने उन्हे दर्शन दिये।

दुनिया ने उन्हे सूरदास कहा, पर **सूरदास तो हम सब है, क्योंकि हमें सिवाय प्रभु के सब कुछ दिखाई देता है।** सचाई तो यही है कि परमात्मा को [illegible] निहार सकता है, जो दुनिया के लिए अंधा हो गया हो। परमात्मा दुनिया में [illegible] है, लेकिन भक्तो के दिलो से नही जा सकता। महावीर, राम और कृष्ण दुनिया में [illegible] के चले गए है, पर भक्तो के दिलो से कभी नही जा पायेंगे।

श्रद्धा और भक्ति के दो कानों से ही ईश्वर के उस शाश्वत-स्वर को सुन स[illegible] सकता है, जिसे सुनने के बाद और कुछ भी सुनना शेष नही रहता है। [illegible] के साथ सच्चरित्र के पैरो से चलकर ही उस मंजिल को पाया जा सकता है, [illegible] और कोई मंजिल नही होती है। श्रद्धा बहुत बडी चीज है। अगर [illegible] लगन हो, तो कठिन से कठिन साधना और सिद्धि भी सुलभ हो जाती है।

वाल्मिकी ऋषि राम-राम की जगह मरा-मरा का ध्यान करने लगे। [illegible] उच्चारण गलत था, लेकिन श्रद्धा गलत नही थी। कहा जाता है कि [illegible] करते-करते ही सिद्ध पुरुष हो गए।

अंजन चोर जो अपने समय का एक नामी-गिरामी चोर था। [illegible] सच्चे दिल से जैन धर्म के णमोक्कार-मंत्र की साधना करने बैठे [illegible] णमोक्कार-मंत्र कभी पढ़ा नहीं था। एक सेठ से सुना जरूर था कि संकट [illegible] मंत्र का जाप करने से संकट टल जाता है। [illegible] 'णमो अरिहंताणं' [illegible] तो भूल गया। कहते है, उसे 'आणं-ताणं कछु न जाणं, सेठ वचन [illegible] करते-करते आकाश-गामिनी विद्या सिद्ध हो गई।

विश्वास जीवन की शक्ति है। आत्म-विश्वास से बढ़कर दूसरी कोई ताकत नहीं है। हम दूसरो पर तो विश्वास कर लेते है, लेकिन खुद अपने पर नही कर पाते। इस देश का आदमी साढ़े तैतीस करोड़ देवी-देवताओ के अस्तित्व पर तो विश्वास कर लेता है, लेकिन स्वयं मे एक जीवित परमात्मा है – यह विश्वास नही कर पाता है, यह जीवन की सबसे बडी विडंबना है। शायद यही कारण है कि एक पत्थर को प्रतिमा (मूर्ति) बना देना बडा सरल है, लेकिन एक इंसान को भगवान बना पाना बड़ा कठिन है। एक पत्थर भगवान बन जाता है, पर आदमी नही बन पाता। क्या कारण है? कारण स्पष्ट है, जब कोई शिल्पी उस पर कोई छैनी और हथौड़ा चलाता है, तो वह कोई प्रतिकार नही करता है, श्रद्धा समर्पण भाव से शिल्पी की हर चोट को सहता है। शिल्पी जितना काटता है, कट जाता है, जितना छीलता है, छिल जाता है, जितना मिटाता है, मिट जाता है। वह पाषाण कभी कोई प्रतिकार नही करता और न ही खंडित होता है। लेकिन यह इंसान! यदि इस पर कोई सद्गुरु जरा-सी भी चोट करता है, तो प्रतिकार करता है, उठ खडा होता है। यही वजह है कि यह इंसान भगवान नही बन पाता। यही कारण है कि इंसान के जीवन मे क्रांतिकारी परिवर्तन नही हो पाता।

जीवन समर्पण माँगता है। भारत की संस्कृति समर्पण की संस्कृति है, अगर हम एक बार अपने आराध्य के प्रति सर्वस्व समर्पण कर दें, तो फिर प्रभु हम पर बलिहारी हो जायेगा।

कथानक – एक चोर प्रतिदिन चोरी करता था। एक दिन पूरी रात इधर-उधर घूमता रहा, कही चोरी का दॉव न लगा। सुबह हो चली थी। उदास और निराश वापिस घर लौट रहा था। रास्ते मे एक शिवजी का मंदिर पडा। सोचा आज तो मुहूर्त ठीक ही नही था। चलो शिवजी को प्रणाम कर लूँ, हो सकता है कल का मुहूर्त ठीक हो जाये। मंदिर मे गया, शिवजी को प्रणाम किया, मंदिर मे इधर-उधर दृष्टि दौडाई, और तो कुछ वहाँ था नही, ऊपर देखा तो शिवजी की मूर्ति पर एक घण्टा लटक रहा था। फिर क्या था, चोर ने सोचा – आज तो कुछ मिला नही, घर खाली कैसे जाऊँ? और फिर भगवान के दरवाजे से तो यो भी कोई खाली नही जाता। चलो घण्टा ही चुरा लेता हूँ। कुछ तो काम चलेगा। घण्टा बहुत ऊँचा था। उसका हाथ उस तक पहुँच नही पा रहा था। अव क्या करे। हडबडी मे उसे कुछ तो सूझा नही, तो घण्टा चुराने के लिए मूर्ति पर ही चढ़ गया।

ज्यो ही वह मूर्ति पर चढा, शिवजी प्रकट हो गए। बोले – 'वत्स! मै तुझसे वहुत प्रसन्न हूँ। घण्टा-वण्टा छोड, आज मुझसे माँग ले तुझे क्या चाहिए?' चोर तो घवरा गया। उसने सोचा बुरे फँसे। वह क्षमा-याचना करने लगा। भोले शिवजी वोले – 'घवरा मत! मैं पुलिसवाला नही हूँ, स्वयं शिव हूँ। तेरे समर्पण से प्रसन्न होकर प्रकट हुआ हूँ। मैंने भक्त तो बहुत देखे, लेकिन तेरे जैसा भक्त नही देखा। माँग ले क्या माँगना है?'

इसी बीच मंदिर का पुजारी आ गया। पुजारी ने मामला देखा, ... पुजारी चिल्लाया – 'प्रभु आप भी कमाल करते है, मै पुजारी हूँ, मेरी ... प्रसन्न नही हुए और इस पर प्रसन्न ------। यह भक्त नही, ... पूजा के लिए नही, चोरी के लिए घुसा है। पुजारी तो मै हूँ आपका। प्रसन्न ... मुझ पर होइये। वरदान माँगने के लिए मुझे कहिए।' शिवजी बोले – '... बोला – 'भगवन्! चुप कैसे रहूँ? मैं आपको प्रतिदिन पत्र, पुष्प, ... नारियल चढ़ाता हूँ, दूध चढ़ाता हूँ, रुपये-पैसे चढ़ाता हूँ, तब भी आप मुझ पर प्रसन्न नही हुए और इसने तो कुछ भी नही चढ़ाया।' भोले शिवजी बोले – '... तू पुष्प-पत्र-श्रीफल चढाता है, लेकिन यह तो खुद ही चढ गया, तो ... चढ़ाने को इसके पास क्या बचा?'

''प्रभु के चरणों में अगर कुछ चढ़ाना ही है, तो अपने आपको चढ़ाओ, ... अहंकार को चढ़ाओ। प्रभु को अहंकार से बडी भेट और क्या हो सकती है। ... हमारे बीच एकमात्र अहंकार ही तो बाधा है। **हमारे और प्रभु के बीच अहंकार ही ... है।** अगर अहंकार की दीवार ढह जाये, तो हमारे लिए प्रभु के द्वार खुल जायेंगे। ... **दीवार है और समर्पण द्वार है। समर्पण के द्वार से ही ईश्वरीय दृष्टि मिलती है।'**

एक बार समर्पण मे जीकर देखे, कैसा आनंद बरसता है। अहंकार के ... बार प्रभु के, किसी सद्‌गुरु के चरणो मे पटक-पटक कर फोड़ डाले, फिर देखना ... कैसा चमत्कार प्रकट होता है। **हमारी सारी लड़ाइयाँ, सारे तनाव, संघर्ष इसी अहं... की वजह से तो है।** पति और पत्नी, बाप और बेटा, सास और बहू, ... हमारे और पडौसी के बीच मे जो भी टकराव चल रहा है, वह इसी अहंकार की ...

दो समुदायों के बीच में जो संघर्ष है, दो जातियों के बीच में जो खींचतान है – ... मूल कारण मनुष्य का अहंकार ही तो है। सभी अपने-अपने हिसाब से ... हैं, अपने-अपने धर्मानुसार पूजा, इबादत करते है, सभी के अपने-अपने परिवार है, ... है, अपना खाते है, फिर आपस में क्यो लडे? पर जब दोनो के अहंकार ... तब अहंकार लडता है, आदमी कभी नही लडता। **ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति !! ॐ शान्ति**

卐 संथारा/इच्छित मृत्यु 卐

जैन शास्त्रों में साधु और गृहस्थ दोनों के लिए अंतिम समय में एक साधना ... विधान है, जिसे आज की प्रचलित भाषा में संथारा कहते है। कुछ ... को आत्महत्या समझ बैठे है, यह उनका भ्रम है। जब कोई मनुष्य ... तंग आकर और प्रतिष्ठा पर लगी गहरी चोट से विचलित होकर देह त्याग ... वह आत्महत्या कहलाती है। आत्महत्या मे शोक, मोह, भय, ... रहते है, जबकि संथारा मे, जो कि प्रत्याख्यान पूर्वक लिया जाता है, ... के शीघ्र आने का पक्का अनुमान हो जाने पर सभी प्रकार के ... होकर, स्वस्थ मन से होश-हवास मे इच्छापूर्वक देहत्याग करते है।

विवाह करूँ या नहीं - एक चिन्तन

एक चिन्तक के मन मे एक द्वंद्व था कि वह विवाह करे या न करे। वह अनिर्णय की स्थिति मे था। उसका एक मन कहता था कि शादी करूँ और अपना छोटा-सा संसार बसा लूँ तथा दूसरा मन कहता कि विवाह के बाद जो झंझटे, जो परेशानियाँ, जो बेचैनियाँ निर्मित होती है, वे बड़ी भयावह हुआ करती है, बडी पीड़ादायक हुआ करती है।

वह जिज्ञासु परामर्श हेतु संत कबीर के पास पहुँच गया। कबीर से परामर्श चाहा कि मै 'विवाह करूँ या न करूँ?' चिन्तनशील आदमी किसी काम को करने से पहले उसके परिणामो पर विचार करता है। **एक ज्ञानी और अज्ञानी में यही तो फर्क होता है कि ज्ञानी किसी काम को करने से पहले उसके परिणामों को सोच लेता है, तभी खुश होता है और अज्ञानी करने के बाद सोचता है और पछताता है।** युवक ने कबीर से पूछा – 'मै क्या करूँ?' कबीर बोले – 'बहुत छोटी-सी समस्या है, तुम स्वयं भी इसका निर्णय कर सकते हो।' जिज्ञासु बोला – 'अगर मुझमे निर्णय लेने की क्षमता होती, तो शायद मै आपके पास न आता।'

कबीर ने उसे अपने पास बिठाया। दोपहर का समय था, सूरज तप रहा था। कबीर धूप मे बैठे थे और जिज्ञासु को अपनी बाजू मे बैठाया। कबीर जुलाहे थे, कपडे बुन रहे थे। कबीर ने अपनी पत्नी को आवाज दी और लालटेन जलाकर लाने को कहा। पत्नी तत्काल उठी और बिना किसी तर्क या प्रतिक्रिया किये, वह लालटेन जलाकर ले आयी। उस युवक ने यह नजारा देखा तो उसे लगा कि – 'मै गलत जगह पर आ गया। मैने तो सुना था कि कबीर बडे ज्ञानी और दार्शनिक पुरुष है, बडे ही अनुभवी और संत पुरुष है, लेकिन यहाँ तो मामला कुछ उल्टा ही नजर आ रहा है। यह आदमी तो बडा गलत लगता है, बडा गडबड मालूम पडता है, धूप मे बैठा है और लालटेन मँगा रहा है।'

''आदमी बड़ा नासमझ भी होता है। दूसरों के विषय में बड़ी जल्दी निर्णय कर लेता है कि सामने वाला कैसा है? अपनी श्रद्धा बड़ी कमजोर है।''

जिज्ञासु ने सोचा था कि यह मेरी समस्या का कोई उचित समाधान करेगा, लेकिन यहाँ तो नादानी की हद हो गई है। एक तो खुद धूप मे बैठा और मुझे भी बिठा लिया। कायदा तो यह था कि मुझे छाया मे ले जाकर बिठाता, नाश्ता-पानी के लिए पूछता। वो तो कुछ भी नही किया, अपितु उल्टी-सीधी हरकते करने लगा है।

''ध्यान रखें,यदि हमें कभी किसी संत के समक्ष जाने का सौभाग्य मिले, तो उनसे कोई आदर-सम्मान की आकांक्षा नहीं करना, बल्कि अत्यन्त विनम्र भाव से कुछ पाने की भावना लेकर जाना। संत के द्वार पर यदि बुद्धि का अहंकार लेकर जाएँगे, तो निराश ही लौटेंगे।''

जिज्ञासु ने सोचा इसकी पत्नी भी बडी बुद्धू है। उसने यह भी नही पूछा कि धूप मे बैठे हो, तो लालटेन की क्या जरूरत पड गई? ऊपर वाले ने भी क्या जोडी बिठाई है। दोनो ही एक से है। इस प्रकार वह मन ही मन कबीर को कोस रहा था।

युवक कवीर से कहता है – 'मेरी समस्या का समाधान करो। मुझे ...
मुझे जल्दी जाना है।' कवीर ने कहा – 'करूंगा, थोडी प्रतीक्षा करो।' ...
पत्नी को निर्देश दिया कि वह दो कटोरे दूध लेकर आए। पत्नी ने ...
चीनी डाली और दो कटोरे दूध से भरकर कवीर के सामने रख दिये। ...
कटोरा जिज्ञासु युवक को थमा दिया और दूसरा स्वयं हाथ में लेकर पीने लगा। ...
खारा था। शायद कवीर की पत्नी ने भूलवश दूध मे चीनी की जगह नमक ...
था। लेकिन जब कवीर दूध पी रहा था, तो पीते-पीते बोला – ...
है।' युवक ने सुना, तो भौचक्का सा रह गया। अब तो उसे पक्का निश्चय ...
यह निश्चित ही सिरफिरा आदमी है, इसे तो घटिया और बढ़िया में भी ...
फिर मेरी समस्या का क्या समाधान करेगा? अब तो यहां से शीघ्र ...

युवक बोला – 'अच्छा आज्ञा दे, अव मै चलता हूँ।' कवीर ने कहा – ...
पूछने आए थे।' वह बोला – 'बस! बस! अव मै चलता हूँ।' कवीर ने ...
अव यहाँ तक आए हो, तो समाधान लेकर ही जाओ।' युवक बोला – ...
करो। मेरे प्रश्न का उत्तर शीघ्र दो।' कवीर ने कहा - 'भाई ! मैने तुम्हारे प्रश्न ...
दे दिया है।' युवक ने सुना, तो ताज्जुव कर गया। बोला – 'उत्तर! आपने ...

"संत तो संकेतो मे उत्तर देते है और समझदार के लिए संकेत ही ...
समझदार संकेत की भाषा समझ जाता है और मूर्ख इस भाषा को नहीं ...
उसे डंडे की भाषा समझानी पड़ती है। **संत और पुलिस दोनों समाज में ...**
काम करते हैं। फर्क केवल इतना सा है कि संत संकेत से समझाता है और ...
डंडे से। दरअसल जो संत के संकेत नही समझते, उन्हें ही पुलिस के डंडे पड़ते है।'

कवीर वोले – 'तुमने पूछा था कि मै विवाह करूँ या नही, ...
किस तरह जीना पडेगा? इसका समाधान मैंने दे दिया है।' जिज्ञासु ने ...
आपने तो उत्तर दिया ही नही। आप पहेली न वुझाएँ, साफ-साफ ...

कवीर ने कहा – 'इसका उत्तम समाधान तो यही होगा कि कीचड़ (...)
में पाँव डाला ही न जाये, क्योंकि कीचड़ में पाँव डालना और फिर धोना, इसमें
जीवन का वहुमूल्य समय वर्वाद हो जाता है। अगर जीवन में ब्रह्मचर्य की साधना
जीवन भर कर सको, तव तो यह जीवन का श्रेष्ठतम मार्ग होगा और यदि यह ...
न हो, तो फिर गृहस्थ जीवन में प्रवेश करो और संयमपूर्वक जीवन जिओ। ...
गृहस्थ जीवन में सामंजस्य व तालमेल विठाकर रखो। इसके लिए ...

मैंने दो घटनाओ के माध्यम से तुम्हारी समस्या का समाधान किया है। ...
मैं और तुम धूप मे वैठे थे और मैंने अपनी पत्नी से लालटेन ...
ने यह नहीं पूछा कि दिन के वारह वजे धूप में लालटेन ...

पत्नी ने कोई तर्क नही किया, कोई प्रतिक्रिया नही की, मेरी इस हरकत को समर्पण भाव से स्वीकारा। **सुखी दाम्पत्य जीवन के लिए पति और पत्नी के बीच एक-दूसरे के प्रति समर्पण की भावना जरूरी है।'**

दूसरी घटना मे, 'मै और तुम दूध पी रहे थे। उस दूध मे मुझे भी खारापन अनुभव हुआ था। निश्चित ही उस दूध मे शक्कर की जगह नमक डल गया था, लेकिन मै यह सोचकर उसको मीठा समझकर पी गया कि जब मेरी पत्नी किसी हरकत को सहन कर सकती है, तो क्या मै उससे कम हूँ? मेरा भी तो फर्ज बनता है कि मै भी उसकी हरकत को सहन करूँ। इसलिए उस घटिया दूध को बढ़िया समझकर पी गया।'

मेरा तुमको यही परामर्श है कि – 'तुम गृहस्थी बसाना चाहते हो, तो तुम्हें सहन करना ही होगा। बात-बात में तलाक की बात सोचने वाला व्यक्ति गृहस्थ जीवन में कभी सफल नहीं हो सकता। बात-बात मे कुतर्क करने वाले पति-पत्नी एक-दूसरे के दिलो पर राज कभी नही कर सकते। पति और पत्नी एक-दूसरे को सहन करने की आदत डाले, तभी जीवन मे समरसता आ सकती है।'

दाम्पत्य व पारिवारिक जीवन में आपसी तालमेल बनाकर चलना आवश्यक है। कबीर ने आगे कहा – 'मेरा तुम्हारे लिए एक ही उपदेश है कि **जीवन में कुतर्क को कभी महत्व न देना, क्योंकि कुतर्क नर्क है और समर्पण स्वर्ग है।** यह एक सूत्र सदा याद रखना – **जहाँ कुतर्क है, वहाँ नर्क है और जहाँ समर्पण है, वहाँ स्वर्ग है।' समर्पण महोत्सव है। समर्पण से जीवन संवरता है, समर्पण से सूने जीवन में खिलखिलाहट आ जाती है, जबकि अहंकार अकड़न है।** अकड़ू का कोई मित्र नही होता और **यदि हम हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर जीने लग जाएँ, तो फिर कोई अपना दुश्मन नहीं रह पायेगा।**

अगर हम अपने घर को स्वर्ग बनाना चाहते है, तो पति-पत्नी को, बाप-बेटे को, सास-बहू को, जेठानी-देवरानी को, भाई-बहिन को, आपस मे एक समझौता करना पडेगा, **जब कोई एक आग बने, तो दूसरा पानी बन जाए। यह सुखी जीवन के लिए एक अमृत-सूत्र है।** शादी के वक्त वर और वधू से पंडित के द्वारा सात-सात वचन भरवाए जाते है, वह अब पुराने हो गए है, अप्रासंगिक हो गए है, घिस-पिट गए है। समय के बदलते रुख को देखकर इन वचनो मे परिवर्तन किया जाना चाहिए। **उन नये वचनों में पहला वचन यह हो कि – 'देवी! अगर मैं कभी क्रोध में आग बनूँ, तो तू पानी बन जाना और कभी तुम आग बनोगी, तो मैं पानी बन जाऊँगा। इस समझौते से अपने जीवन में स्वर्ग उतर आयेगा।'**

क्रोध रूपी आग को क्षमा, समता, सहिष्णुता, सहनशीलता रूपी जल से **ठंडा करें।** यदि क्रोध करना जरूरी हो, तो हल्का-सा क्रोध कर ले और जरूरत पूर्ण होते उसे नौकर की भाँति लौटा दे। **क्रोध को अपने सिर पर चढ़ने न दें।**

जीवन में क्रोध आवे तो नौकर की तरह आना चाहिए। [illegible] और जब जाने को कहे, तो चला जाए। लेकिन आजकल हमारे जीवन में [illegible] तरह आता है और हम पर मधु-मक्खियो की तरह छा जाता है। **याद रखें क्रोध को [illegible] अपने सिर पर बिठाकर रखना अच्छी बात नही है।** आवश्यक [illegible] चढ़ने दे। बाकी समय मे हम ही उस पर चढ़कर रहे। हमारी अपेक्षाएँ [illegible] भी घटित होता है, तभी क्रोध आता है। और फिर जैसे चूल्हे पर दूध उफनता [illegible] मन मे उफान आता है। उफान मन से उठता है। भीतर उफान उठेगा [illegible]

पर यदि किसी से अपेक्षा ही नही रखेगे, तो फिर हमारी उपेक्षा [illegible] है? और जब उपेक्षा ही नही होगी, तो फिर हमे क्रोध कौन दिला सकता है?

स्वर्ग-नरक मरने के बाद ही मिलते हो – ऐसा नही। जीते जी भी [illegible] भोगा जा सकता है। **मानसिक शान्ति और शारीरिक स्वस्थता हो, तो जीवन स्वर्ग से कम नहीं है और इससे विपरीत जीवन किसी नरक से कम न** [illegible] इसलिए भगवान महावीर को कहना पड़ा – **'अगर इस घर को आश्रम बना [illegible] सकें, तपोवन बनाकर जी सकें, तो यही घर, यही परिवार तुम्हारे लिए** [illegible] जीवन मे अगर दुःख आए, संकट आए, कैसी भी प्रतिकूल परिस्थितियाँ आएँ [illegible] दुःख को प्रभु का प्रसाद मानकर स्वीकार करके धैर्य के साथ सहन कर ले, [illegible] के आधे दुःख तो यो ही खत्म हो जायेगे। अपनी आँखो मे जो संसार [illegible] खत्म करके एक आदर्श जीवन राम-सीता की तरह जीकर दुनिया को [illegible] और सीता जंगल मे भी प्रसन्न थे, किन्तु हम कोठियो मे रहकर भी प्रसन्न न [illegible] हमारे जीवन की असलियत है। इसे समझना होगा।

इस देश में जो सबसे बड़ी दुर्घटना घट रही है, वह यह है कि प्रा[illegible] **दूसरों को बदलने की कुचेष्टा में लगा हुआ है।** सास बहू को, बहू सास [illegible] और बेटा बाप को, पड़ोसी पड़ोसी को बदलने को आतुर है, [illegible] हमे ही करना है। इसी पहल से समस्या का हल होगा। **यदि हम [illegible] गए, तो हो सकता है, सामने वाला पूरा ही झुक जाए।**

कमल का कीचड़ मे रहना और मनुष्य का संसार मे रहना बुरा नहीं है। [illegible] कीचड़ कमल पर चढ जाये और संसार मनुष्य के हृदय मे छा जाये, [illegible] हम कमल है, हमारा परिवार कमल की पंखुड़ियाँ है तथा संसार [illegible] कमल की तरह जी सके, तो गृहस्थ आश्रम भी किसी तपोवन से कम [illegible]

◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇

विवाह क्या है? ज्ञानियो की दृष्टि मे विवाह [illegible] मीठा स्वाद हर मन को भा जाए। बाद मे चबाते [illegible] जाइये, स्वाद ही न आए, वास्तव मे यही है विवाह, [illegible] विवाह? शुरू मे वाह-वाह, बीच मे [illegible]

◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇

भगवान से क्या माँगू?

आजकल मंदिरो मे भगवान से कोई औलाद माँग रहा है, कोई दुकान चल निकलने की तरकीब पूछ रहा है, तो कोई पत्नी अपने पति का रोना रो रही है, तो कोई कोर्ट-कचहरी का केस सुलझाने के मूड मे है। कोई पास होने का, तो कोई चुनाव जीतने का वरदान माँग रहा है।

कथानक – एक विशाल मंदिर था, उसमे प्रतिष्ठापित प्रतिमा अत्यन्त भव्य थी। एक महान चिन्तक और प्रतिमा के मध्य यूँ मौन वार्तालाप हुआ –

चिन्तक ने प्रतिमा से कहा – 'मंदिर मे अकेली रहती है क्या?'

प्रतिमा ने तुनक कर कहा – 'अकेली कहाँ रहती हूँ? दिन भर भीखमंगो की भीड जो लगी रहती है। ठाट-बाट से पूजा-आरती होती है।'

चिन्तक ने कहा – 'आपके द्वार पर परम-भक्त आते होगे। भीख माँगने वाले क्यो आने लगे?'

'नही-नही। सभी मेरे परम-भक्त नही। ऊपर से भक्त दिखते है। अन्तर मे कामनाओ से भरे रहते है।'

'आपके पास भी कामनाएँ लेकर आते है! हद हो गई।'

'हाँ-हाँ! इनकी कामनाएँ बडी विचित्र होती है। अधिकतर धन, पद, सत्ता, ख्याति, कोर्ट-कचहरी या सन्तान से संबंधित होती है। ये मानते है, मेरी पूजा या मनौती से मन की सब कामनाएँ सिद्ध होती है। मुझे पूजा या मनौती की चाह नही।'

'फिर सबकी कामनाएँ पूर्ण करती है क्या?'

'क्या बात करते है? मेरा स्वयं का सृजन मनुष्य करता है। उसकी कामनाएँ पूर्ण करूँ, ऐसी योग्यता कहाँ से लाऊँ? जिनकी कामनाएँ पूर्ण होने की है, वे पूर्ण होती है। जो कामनाएँ पूर्ण होने की नही, वे पूर्ण नही होती। इसमे मेरा कोई हाथ नही।'

'तब तो लोगो को समझाना चाहिए – भीख मत माँगा करो, मेरे मे कामनाएँ पूर्ण करने का सामर्थ्य नही। समझाने मे कुछ खतरा लगता है क्या?'

'खतरा इतना-सा है – पूजा कम हो सकती है, किन्तु खास बात नही। मुझे पूजा की प्यास नही। हाँ! भीख माँगने से लोगो को आत्म-संतोष जो मिलता है, उसे छीनना उचित नही। इसलिए मै चुप रहती हूँ।'

'खैर मैंने अपनी गुप्त बात प्रकट की, इसे फैलाने मे लाभ नही।' इतने मे तथाकथित भक्त आने लगे। चिन्तक चुपके से विदा हुआ।

मित्रों ! प्रभु से माँगना है, तो सत्संग माँगना, उनका आचरण माँगना, उन जैसा परम जागरण माँगना, उन जैसा समाधि-मरण माँगना। भाग्य से जो मिलने ही वाला है, उसे क्या माँगना। अगर अपना पैसा बैक के खाते मे जमा है, तो काउन्टर पर यदि अपना दुश्मन भी बैठा है, तो उसे देना ही पडेगा और यदि बैंक खाते मे (भाग्य मे) कुछ भी जमा नही है, तो काउन्टर पर यदि अपना ही लडका बेठा है, तो वह भी नही दे पायेगा। **आत्म-विश्वास जागृत करें।**

जैन शास्त्रो मे कहा गया है कि ईश्वर का दर्शन, पूजन, प्रार्थना व भक्ति **उसे प्रसन्न** के लिए नही, अपितु अपनी आत्मा को शुद्ध बनाने और कर्ममुक्ति के

आत्म चिन्तन – कब, क्या, कैसे?

जब तक मनुष्य बाह्य परिस्थितियो मे उलझा हुआ रहता है, तब तक आत्म चिन्तन नही कर सकता है। बाह्य परिस्थितियो की निमित्तता से आने वाली अनुकूलता-प्रतिकूलता का चक्र तो जीवनपर्यंत चलता ही रहेगा, तो फिर अपना अनिष्ट का चिन्तन कब करेगे? बिना धर्म चिन्तन के व्रत-नियमो को कैसे पायेगे? बिना धर्म चिन्तन किये, सम्यग्ज्ञान की आवश्यकता कैसे समझ सकेगे?

आत्म केन्द्रित तो होना ही पडेगा। **व्यक्ति क्यों जी रहा है?** – धन कमाने के लिये। क्या भाव है लोगो के? दुनिया धन कमाती है, तो मुझे भी धन कमाना। दुनिया खाती है, तो मुझे भी खाना। दुनिया भोगो मे मशगूल है, तो मुझे भी भोगो मे मग्न करना। जो दुनिया का होगा, सो मेरा भी हो जायेगा। यह दृष्टि सही नही है, मूढ़ दृष्टि है। हमे दुनिया का अन्ध प्रमत्त अनुसरण नही करना है। ज्ञानी कहते है – "भौतिक दृष्टि छोडो और आध्यात्मिक दृष्टि व धर्म प्राप्त करो।"

आत्मचिन्तन करे। धर्मचिन्तन करने का समय दिन अथवा रात मे ऐसा चुनना चाहिये जहाँ आपको एकान्त मिलता हो। प्रारम्भ मे पांच-दस मिनट ही आत्मा के इस प्रकार चिन्तन करे।

शान्ति से बैठकर सोचे कि – **(१) मैं कौन हूँ? (२) मेरा क्या है? (३) मै कहाँ से आया हूँ? (४) मरकर मै कहाँ जाऊँगा?** आत्मचिन्तन का प्रारम्भ इन प्रश्नो से शुरू करे। प्रतिदिन ये प्रश्न अपनी आत्मा मे पूछते रहेंगे, तो भीतर से जो उत्तर मिलेगे वे अत्यन्त मर्मस्पर्शी होगे। दूसरो से जो उत्तर मिलते है, वे सतयक मर्मस्पर्शी नही होते।

(१) मैं कौन हूँ? शान्ति से बैठकर सोचे कि वास्तव मे मै कौन हूँ? यह जो बाह्य शारीरिक रूप है, वह मै नही हूँ। लोग मुझे जिस नाम से पुकारते है – वह मै नही हूँ। **मैं तो मात्र आत्मा हूँ। मेरा भव्य स्वरूप शुद्ध है।** मेरा अरहंत स्वरूप है। कर्मजन्य प्रभावो को अज्ञानवश मैने यथार्थ नही जाने है। घर, दुकान, स्वजन, धन-सम्पत्ति और शरीर सब कुछ कर्मजन्य है। यह शरीर भी मै नही हूँ। मै तो चैतन्य **स्वरूप मात्र आत्मा हूँ।**

(२) मेरा क्या है? इन्द्रियो से अनुभूत कोई भी विषय-पदार्थ मेरा नही है। अज्ञान से मैने उन पदार्थो को मेरे माने है। जो शाश्वत मेरा है, वह कभी भी आत्मा से अलग नहीं हो सकता है। यह घर, दुकान, स्वजन, परिजन, वैभव, सम्पत्ति और शरीर आत्मा के साथ सदैव नहीं रहते है। इसलिये मेरे नहीं है। **मेरा है – ज्ञान, मेरा है – दर्शन, मेरा है – चारित्र, मेरा है– तप, मेरा है– वीर्य, मेरी है– वीतरागता।** यह जो मेरा है, कर्मों के उदय से दब गया, छिपा हुआ है – आत्मा मे ही । ये गुण कभी भी आत्मा से अलग नही होते है। जो मेरा सत्य है, उसे प्रकट करना है। उत्पन्न करने के लिए चाहिए, उन्हें प्रकट का प्रयत्न करना।

साधक प्रण करे कि मै ऐसे ज्ञानी पुरुषो को खोजूँगा और उनसे मार्गदर्शन लेता रहूँगा। मेरे आत्म गुणो को उत्पन्न करके रहूँगा। जो पदार्थ मेरे नही है। मै उन पदार्थो से ममत्व तोडूँगा। तोडने का प्रयास करूँगा।

(३) मैं कहाँ से आया हूँ? हमे हमारे जन्म से पूर्व की स्थिति मे ज्ञान दृष्टि से जाना पडेगा। चिन्तन करे – मै कोई दूसरी योनि मे था, वहाँ मेरी मृत्यु हुई होगी और यहाँ इस मनुष्य योनि मे मेरा जन्म हुआ है। वह भी आर्य देश मे। आर्य देश मे भी सम्पूर्ण अहिंसक उच्च परिवार मे। ऐसे ही अकस्मात् यहाँ जन्म नही मिल गया है। मैने मेरे पूर्वजन्म मे कुछ व्रत-नियमो का पालन किया होगा, पुण्य कर्म किए होगे, तीव्र भाव से पाप नही किये होगे, पाप हल्के किये होगे, धर्म की आराधना की होगी, तभी मुझे ऐसी दुर्लभ मनुष्य योनि मे जन्म मिला है।

हमे ऐसा चिन्तन करना है कि – मै कितने जनम-मरण करता-करता इस मनुष्य गति मे आया हूँ। कितना दुर्लभ यह जीवन मुझे मिला है। देवता भी मनुष्य योनि के लिए तरसते है। **इस जीवन का मुझे सदुपयोग करना है, दुरुपयोग नहीं करना है। हिंसा, झूठ, चोरी, अनाचार, क्रोध, मान, माया, लोभ जैसे पापों से मुझे मेरा यह मानव जीवन निष्फल नहीं बनाना है, कलंकित नहीं करना है।**

(४) मरकर मैं कहाँ जाऊँगा? हमे चिन्तन करना है कि – यदि मै इस जीवन को पापो मे ही बिता दूँगा, तो अवश्य ही पशु-पक्षी की योनि मे अथवा नरक निगोद योनि मे जाऊँगा। मुझे अब दुर्गतियो मे नही जाना है। यदि मै धन-सम्पत्ति की माया-ममता मे, कुटुम्ब-परिवार की माया-ममता मे फँसा हुआ रहूँगा, पापाचरण करता रहूँगा, तो मेरी दुर्गति ही होगी। दुर्गति के भयानक दु:ख क्या मुझसे सहन होगे? **अब मुझे अवनति की गहरी खाई में गिरना नहीं है, मुझे उन्नति की ओर जाना है।**

इस प्रकार कुछ आत्मचिन्तन करना चाहिए। लक्ष्य साध्य का निर्णय कर, जीवनयात्रा करते चले। समय-समय पर ज्ञानी एवं महापुरुषो का मार्गदर्शन लेते रहे, **धर्म की आराधना भी करते रहें। जीवन को ज्ञान के प्रकाश से आलोकित करना है, व्रत-नियमों की सुवास से सुवासित करना है, तभी यह मनुष्य जीवन सार्थक होगा।**

बोलो क्या चाहते हो? और क्या करना है?

देना चाहते हो? -------- दूसरो को सुख दो।	*मारना चाहते हो?--- अपने राग-द्वेष को मारो।*
लेना चाहते हो? ---- बडो का आशीर्वाद लो।	*जीतना चाहते हो?---अपनी इन्द्रियो को जीतो।*
देखना चाहते हो? ---- अपने दोषो को देखो।	*रखना चाहते हो?-- सादा जीवन उच्च विचार।*
बोलना चाहते हो? ----- सबसे मीठा बोलो।	*करना चाहते हो?-दीन दु खियो की सेवा करो।*

"साधक करोडो भव के संचित कर्मो को तप के द्वारा क्षीण कर देता है। सबसे श्रेष्ठ तप अर्थात् तपो का मूलाधार – **ब्रह्मचर्य** ही है।।"

कमाएँ नीति से, खर्च करें रीति से, दान करें प्रीति से

यदि आप अपनी इच्छाएं, आवश्यकताएं कम कर दें, तो [illegible]
एवं प्रामाणिकता से अपनी आजीविका मजे से चला सकते हैं। [illegible]
मिले, उसमें यदि संतोष करते हैं, तो अवश्य ही लाभान्तराय कर्म मन्द होगा और [illegible]
सम्पत्ति की प्राप्ति भी देर-अबेर जरूर होगी। अन्याय-अनीति करने [illegible]
(पशु-पक्षी) की गति में जन्म पाता है। मनुष्य के वर्तमान जीवन में यदि [illegible]
मन्द नहीं हुआ है, तो लाख प्रयत्न करने पर भी, अन्याय-अनीति [illegible]
प्राप्ति नहीं होगी। अन्याय-अनीति की जड़ लोभ है।

मन में लोभ न आने दें। निम्न बातें सदा याद रखें :-

(१) कोई भी खाने-पीने की वस्तु या दवाई में मिलावट न करें।

(२) वस्तु के लेने-देने में गलत नाप-तौल न रखें।

(३) जैसा सेम्पल दिखाएं, वैसा ही माल सप्लाय करें।

(४) ज्यादा पैसा लेकर कम माल न दे, पूरा माल दें।

(५) किसी की अमानत आपके पास हो, तो उसको हड़पना नहीं।

(६) यदि व्याज का धन्धा करते है, तो ज्यादा व्याज न लें।

(७) किसी से रुपये वसूल करते समय क्रूर न बनें।

(८) स्मगलिंग (तस्करी) जैसे - अवैध-धन्धे न करें।

(९) सट्टा-जुआ न खेले, टेक्स चोरी व [illegible] न करें।

यदि दृढ मनोबल से ये सारी बातें लोक-जीवन व्यवहार में लाते हैं, तो [illegible]
की नीव अवश्य मजबूत बनेगी और परिवार, समाज व देश में शांति [illegible]

कहते हैं - "जैसी नीयत वैसी बरकत।
प्रामाणिकता से अर्जित संपत्ति ही स्थायी रह सकती है।"

आवश्यकता/इच्छा

आवश्यकता तो भिखारी की भी पूरी हो जाती है, [illegible]
अधूरी रह जाती है। **इच्छाओं को मर्यादित रखकर ही सुखी** [illegible]
"छोटा परिवार, सुखी परिवार" - इस सरकारी सूत्र के अमल में [illegible]
होने में शंका है, **परन्तु अनन्त ज्ञानियों का सूत्र -** "आवश्यकताएँ कम, [illegible]"
के अमल में सफलता मिलने में एक प्रतिशत भी शंका नहीं है।" **[illegible] कहते हैं कि -**
"अरबों लोगों के पेट के गड्ढे मैं भर सकता हूँ, लेकिन [illegible]
भी भरना हो, तो वह मेरी ताकत के बाहर की बात है।"

नशे से सावधान

नशा एक ऐसी दुष्प्रवृत्ति है, ऐसा दुर्व्यसन है, ऐसा मीठा जहर है, जिससे स्वयं व्यक्ति को, उसके परिवार एवं समाज को अत्यधिक हानि उठाना पड़ रही है। एक सर्वे के अनुसार प्रतिवर्ष लगभग चौदह हजार करोड रुपये शराब, तम्बाकू एवं धूम्रपान के नशे की भेट चढते है और लाखो लोग इससे होने वाली बीमारियो से ग्रसित होकर मौत की लंबी नीद सो जाते है।

अधिकांश युवा एवं युवतियाँ **विज्ञापनों** से (जो ज्यादातर सिनेमा एक्टर तथा प्रमुख खिलाडियो के माध्यम से होते है) आकर्षित होकर तथा कुछ युवा केवल शौक अथवा अनुकरण की प्रवृत्ति एवं कुसंगत तथा व्यसनी मित्रो द्वारा प्रोत्साहित करने के कारण नशे के आदि बन जाते है। कुछ युवा एवं युवतियाँ नशा करके अपने आप को मॉडर्न और बोल्ड दिखाने के प्रयास मे बरबाद हुए जा रहे है। नशे की यह प्रवृत्ति व्यक्ति मे विद्यमान कुछ इच्छाएँ, कुसंगत, आत्मविश्वास की कमी, तनाव की स्थिति तथा चारित्रिक कारण भी उत्तरदायी है। कुछ मूर्ख लोग रोगो के उपचार के रूप मे तम्बाकू सेवन करते है।

सम्पूर्ण दुर्व्यवसनों की जड़ तम्बाकू है, बीडी व सिगरेट है। इसी से शराब, भांग, गांजा, स्मेक व कई नशीले ड्रग लेने का शौक बढ गया है। यह मानव को गर्त की ओर ढकेल रहा है। विश्व मे सर्वाधिक मौते तम्बाकू से होने वाली बीमारियो से होती है, जिसमे मुँह का जवडा, लीवर व फेफडे का कैसर प्रमुख है। **''तम्बाकू में निकोटिन व टार नामक जहर होता है।''** इसके सेवन से वीर्य उत्तेजित होकर पतला पडता है और नपुंसकता बढती है, ऑखो की ज्योति मंद होती है, मस्तिष्क व छाती कमजोर होती है, खॉसी-दमा व कफ बढता है, बाल जल्दी सफेद होते है, सॉस चलता है।

तम्बाकू, गुटका एवं बीड़ी-सिगरेट के हर कश के साथ शरीर में हजारों जहरीले रसायन जाते है, जिससे पागलपन का खतरा रहता है, ब्लड-प्रेशर बढता है, धमनियॉ सख्त होती है, दिल का दौरा भी पड सकता है। आयु भी घटती जाती है। नशेडी के मुख से भयंकर दुर्गन्ध आती है और बार-बार थूकने के कारण व्यक्ति, परिवार व समाज मे अप्रिय लगता है। बच्चे भी बिगडते है। भारत की हर गली-मोहल्लो मे खाया जाने वाला **गुटखा, मुँह के कैसर का खतरा अपने साथ लाता है।** अमेरिका की जॉन हापकिंस युनिवर्सिटी ने गुटखो की जॉच रिपोर्ट मे बताया है कि अधिकतर गुटखो मे कत्थे की जगह आरारोट, गेरु, मुलतानी मिट्टी, बुरादा, बूचडखाने का सूखा खून मिलाकर, छिपकली की पूंछ के साथ उबाला जाता है, ताकि खाने वाले को अलग-सा स्वाद आ सके।

मित्रो! चिन्तन करें। तम्बाकू का सेवन बंद करने से स्वास्थ्य व परिवार को होने वाले फायदों के बारे में सोचें। इस पर होने वाला खर्च किसी अच्छे कार्य में लगावें। तनाव को दूर करने के लिए तम्बाकू का सेवन के बजाय व्यायाम का सहारा लें। जब भी तलब उठे तो सौंफ, आंवला, दालचीनी, लोंग आदि का सेवन करें। अपने मन में नशे के प्रति नफरत जगावें। दृढ़ इच्छा शक्ति एवं आत्मबल के सहारे नशे से मुक्ति मिल सकती है।

कमाएँ नीति से, खर्च करें रीति से, दान करें प्रीति से

यदि आप अपनी इच्छाएँ, आवश्यकताएँ कम कर दे, तो अवश्य ही न्याय-नीति एवं प्रामाणिकता से अपनी आजीविका मजे से चला सकते है। न्याय-नीति से [illegible] मिले, उसमे यदि संतोष करते हैं, तो अवश्य ही लाभान्तराय कर्म मन्द होगा और धन-सम्पत्ति की प्राप्ति भी देर-अबेर जरूर होगी। अन्याय-अनीति करने वाला मरकर तिर्यंच (पशु-पक्षी) की गति मे जन्म पाता है। मनुष्य के वर्तमान जीवन मे यदि लाभान्तराय कर्म मन्द नही हुआ है, तो लाख प्रयत्न करने पर भी, अन्याय-अनीति करने पर भी धन प्राप्ति नहीं होगी। अन्याय-अनीति की जड़ लोभ है।

मन में लोभ न आने दें। निम्न बातें सदा याद रखें :-

(१) कोई भी खाने-पीने की वस्तु या दवाई मे मिलावट न करे।

(२) वस्तु के लेने-देने मे गलत नाप-तौल न रखे।

(३) जैसा सेम्पल दिखाएँ, वैसा ही माल सप्लाय करे।

(४) ज्यादा पैसा लेकर कम माल न दे, पूरा माल देवे।

(५) किसी की अमानत आपके पास हो, तो उसको हडपना नही।

(६) यदि ब्याज का धन्धा करते है, तो ज्यादा ब्याज न ले।

(७) किसी से रुपये वसूल करते समय क्रूर न बने।

(८) स्मगलिंग (तस्करी) जैसे - अवैध-धन्धे न करे।

(९) सट्टा-जुआ न खेले, टेक्स चोरी व रिश्वत खोरी न करे।

यदि दृढ़ मनोबल से ये सारी बाते लोक-जीवन व्यवहार मे लाते है, तो गृहस्थधर्म की नीव अवश्य मजबूत बनेगी और परिवार, समाज व देश मे शान्ति रहेगी।

कहते हैं - "जैसी नीयत वैसी बरकत।
प्रामाणिकता से अर्जित संपत्ति ही स्थायी रह सकती है।"

आवश्यकता/इच्छा

आवश्यकता तो भिखारी की भी पूरी हो जाती है, जबकि इच्छाएँ करोड़पति की भी अधूरी रह जाती है। **इच्छाओं को मर्यादित रखकर ही सुखी हुआ जा सकता है।** "छोटा परिवार, सुखी परिवार" – इस सरकारी सूत्र के अमल मे शत-प्रतिशत सुख का अनुभव होने मे शंका है, परन्तु **अनन्त ज्ञानियों का सूत्र – "आवश्यकताएँ कम, प्रसन्नता अधिक"** के अमल से सफलता मिलने मे एक प्रतिशत भी शंका नही है।" **धरती कहती है कि** – "अरबो लोगो के पेट के गड्ढे मै भर सकती हूँ, लेकिन इच्छाओं का गड्ढा [illegible] भी भरना हो, तो वह मेरी ताकत के बाहर की बात है।"

नशे से सावधान

नशा एक ऐसी दुष्प्रवृत्ति है, ऐसा दुर्व्यसन है, ऐसा मीठा जहर है, जिससे स्वयं व्यक्ति को, उसके परिवार एवं समाज को अत्यधिक हानि उठाना पड़ रही है। एक सर्वे के अनुसार प्रतिवर्ष लगभग चौदह हजार करोड़ रुपये शराव, तम्बाकू एवं धूम्रपान के नशे की भेट चढते है और लाखो लोग इससे होने वाली बीमारियो से ग्रसित होकर मौत की लंवी नीद सो जाते है।

अधिकांश युवा एवं युवतियाँ **विज्ञापनों** से (जो ज्यादातर सिनेमा एक्टर तथा प्रमुख खिलाडियो के माध्यम से होते है) आकर्षित होकर तथा कुछ युवा केवल शौक अथवा अनुकरण की प्रवृत्ति एवं कुसंगत तथा व्यसनी मित्रो द्वारा प्रोत्साहित करने के कारण नशे के आदि बन जाते है। कुछ युवा एवं युवतियाँ नशा करके अपने आप को मॉडर्न और बोल्ड दिखाने के प्रयास मे बरबाद हुए जा रहे हैं। नशे की यह प्रवृत्ति व्यक्ति मे विद्यमान कुछ इच्छाएँ, कुसंगत, आत्मविश्वास की कमी, तनाव की स्थिति तथा चारित्रिक कारण भी उत्तरदायी है। कुछ मूर्ख लोग रोगो के उपचार के रूप मे तम्बाकू सेवन करते हैं।

सम्पूर्ण दुर्व्यवसनों की जड़ तम्बाकू है, बीडी व सिगरेट है। इसी से शराव, भांग, गांजा, स्मेक व कई नशीले ड्रग लेने का शौक बढ गया है। यह मानव को गर्त की ओर ढकेल रहा है। विश्व मे सर्वाधिक मौते तम्बाकू से होने वाली बीमारियो से होती है, जिसमे मुँह का जबडा, लीवर व फेफडे का कैसर प्रमुख है। **"तम्बाकू में निकोटिन व टार नामक जहर होता है।"** इसके सेवन से वीर्य उत्तेजित होकर पतला पडता है और नपुंसकता बढती है, आँखो की ज्योति मंद होती है, मस्तिष्क व छाती कमजोर होती है, खाँसी-दमा व कफ बढता है, बाल जल्दी सफेद होते है, साँस चलता है।

तम्बाकू, गुटका एवं बीड़ी-सिगरेट के हर कश के साथ शरीर में हजारों जहरीले रसायन जाते हैं, जिससे पागलपन का खतरा रहता है, ब्लड-प्रेशर बढता है, धमनियाँ सख्त होती है, दिल का दौरा भी पड सकता है। आयु भी घटती जाती है। नशेडी के मुख से भयंकर दुर्गन्ध आती है और बार-बार थूकने के कारण व्यक्ति, परिवार व समाज मे अप्रिय लगता है। बच्चे भी बिगडते है। भारत की हर गली-मोहल्लो मे खाया जाने वाला **गुटखा, मुँह के कैसर का खतरा अपने साथ लाता है।** अमेरिका की जॉन हापकिंस युनिवर्सिटी ने गुटखो की जॉच रिपोर्ट मे बताया है कि अधिकतर गुटखो मे कत्थे की जगह आरारोट, गेरु, मुलतानी मिट्टी, बुरादा, बूचडखाने का सूखा खून मिलाकर, छिपकली की पूंछ के साथ उबाला जाता है, ताकि खाने वाले को अलग-सा स्वाद आ सके।

मित्रो! चिन्तन करें। तम्बाकू का सेवन बंद करने से स्वास्थ्य व परिवार को होने वाले फायदों के बारे में सोचें। इस पर होने वाला खर्च किसी अच्छे कार्य में लगावें। तनाव को दूर करने के लिए तम्बाकू का सेवन के बजाय व्यायाम का सहारा लें। जब भी तलब उठे तो सौंफ, आंवला, दालचीनी, लोंग आदि का सेवन करें। अपने मन में नशे के प्रति नफरत जगावें। दृढ़ इच्छा शक्ति एवं आत्मबल के सहारे नशे से मुक्ति मिल सकती है।

ऋषि-मुनियों की इस धरती पर कभी दूध-दही की नदियाँ-----!

मनुष्य करुणाशील है, उदार हृदय है। लेकिन आज दुर्भाग्य से उसकी करुणा धीरे-धीरे खोती जा रही है और वह तेजी से हिसा की दिशा मे प्रवृत्त होता जा रहा है। मांसाहार एक तामसिक आहार है। मांसाहार से मनुष्य क्रूर, करुणाहीन, हिंसक, कामी, क्रोधी और चिड़चिड़ा स्वभाव का हो जाता है। आज सारे देश मे कुकुरमुत्तो की तरह जगह-जगह बूचड़खाने खोले जा रहे है – यह कितने दुर्भाग्य की बात है। यह अहिंसक समाज की भावनाओ के साथ खिलवाड किया जा रहा है। राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, गाँधी, विनोबा की धरती पर जहाँ कभी दूध की नदियाँ बहती थी, आज खून की नदियाँ बहाई जा रही है। ये कत्लखाने ऋषि-मुनियो की इस धरती पर एक कलंक है। पशुओ का कत्ल भारत के अतीत पर करारा प्रहार है। पशुधन समाप्त होने से पर्यावरण दूषित हो रहा है। यह शर्मनाक बात है।

सरकार विदेशी मुद्रा के लिए अरब देशो को मॉस निर्यात कर रही है। यह भारत की संस्कृति नही है। भारत ने विश्व को हमेशा करुणा का संदेश दिया है और आज हम क्रूरता का निर्यात कर रहे है। हमे क्रूरता का नही, करुणा का निर्यात करना है।

अपना पेट भरने के लिए किसी बेकसूर प्राणी का पेट काटना सबसे बड़ा पाप है। धन के लालच मे किसी के प्राणो से खेलना जघन्य अपराध है, अक्षम्य कृत्य है। पशुओं को काटा जाना देश के हित मे नही है। जानवर को खाकर इंसान, इंसान नही रह सकता। यदि कोई व्यक्ति पशु का मॉस खाता है, तो वह सिर्फ मांस ही नही खाता है, पशु के संस्कार भी खाता है। मॉसाहार ने मनुष्यो को कुछ अंशो मे पशु बना दिया है। यही कारण है कि कुछ लोग मनुष्य होकर भी पशु जैसा आचरण करने लगे है।

मॉसाहार मानव जाति के हित मे नही है, मनुष्य का प्राकृतिक आहार शाकाहार है। शाकाहार से ही मनुष्य अपने धर्म और संस्कृति को आत्मसात कर सकता है। बूचड़खाने और मॉस-निर्यात की नीति ने भारत की प्रतिष्ठा, अस्मिता व मूल्यों को तहस-नहस कर [illegible]या है। हिंसा के कदम तेजी से बढ रहे है। बढती हुई हिसा को यदि समय रहते नही [illegible]का गया, तो वह दिन दूर नही, जब आदमी का अस्तित्व खतरे मे पड़ जायेगा।

भगवान महावीर का अमर संदेश – **'जिओ और जीने दो'** सारी दुनिया मे [illegible] [illegible]। अपने दुःख से दुःखी होकर हर कोई ऑसू बहा लेता है, लेकिन दूसरो की पीड़ा को देखकर जिसकी ऑखे छलछला आती हैं – वही सच्चा धर्मात्मा है। प्रकृति का यह अटल नियम है कि जो जैसा बोयेगा, वैसा ही काटेगा। जो वह देगा उसे भी वही मिलेगा। यदि कॉटे बोयेगे, तो आम नही मिलने वाला है। भारतीय संस्कृति मे जो महत्व गंगा का है, वही महत्व जीवन मे अहिंसा का है। अहिंसा की गंगा भारत की अस्मिता है। अहिंसा है, तो गंगा है और गंगा है, तो भारत चंगा है। जिस दिन अहिंसा का वर्चस्व देश मे समाप्त हो जायेगा, समझ लेना उस दिन गंगा भारत से लुप्त हो जायेगी और गंगा लुप्त [illegible] भारत नंगा और भिखमंगा हो जायेगा। **ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति !! ॐ शान्ति !!!**

सादगी की अनूठी मिसाल

श्री ओकारभाई बडी सादगी से रहते थे। न्याय व नीति से ही कमाते थे। झूठ व बेईमानी इनसे कोसो दूर थी। धार्मिकता रग-रग मे भरी हुई थी। बडे संतोषी प्राणी थे। मन मे मैत्री व करूणा भाव वहुत था। आर्थिक सम्पन्नता कोई खास नही थी, फिर भी जरूरतमंद की सहायता मे उनसे कभी चूक नही होती थी। धोती, कुर्ता और जाकेट इनकी पोशाख थी। जाकेट काफी पुरानी होकर फट चली थी। एक दिन इनकी पत्नी कलावती ने उनसे नया जाकेट बनवाने को कहा, तो उन्होने पैसो की कमी बताकर बात टाल दी।

कलावती ने घर खर्चे मे कटौत्री करके कुछ रुपये बचाए और एक दिन रुपये निकालकर उन्हे दिये और कहा – "अभी बाजार जाकर जाकेट के लिए अच्छा कपडा ले आओ।" ओकारभाई रुपये लेकर बोले – "ठीक है, आज जाकेट का कपडा आ जायेगा।" यह कहते हुए वे काम पर चल दिये।

शाम को उन्हे खाली हाथ देखकर कलावती ने पूछा – "जाकेट का कपडा क्यो नही लाये?" ओकारभाई क्षणभर चुप रहे, फिर बोले – "मै कुछ ही दूर गया था कि सामने से मेरा एक परिचित मिल गया। उसकी पत्नी बीमार थी और अस्पताल मे भर्ती थी। उस भाई को दवाई खरीदने मे पैसे कम पड रहे थे। वह इतना दीन और लाचार होकर गिडगिडा रहा था कि मुझसे रहा न गया, मैने रुपये उसे दे दिये। जाकेट तो फिर कभी बन जायेगी, मगर उसका इलाज टल नही सकता था।"

कलावती मुस्करा कर बोली –"वह नही तो और कोई मिल जाता। तुम्हारे हाथ मे रुपये देकर, जाकेट कभी नही आ सकता, यह मै पहले ही जानती थी।"

ओकारभाई शान्त मुद्रा मे, बस सुनते रहे।

घर एक पाठशाला है

घर वह स्थान है, जहाँ व्यक्ति को मानवीय मूल्यों का प्रशिक्षण दिया जाता है। वैसे तो परिवार के संचालन का दायित्व माता-पिता दोनो पर है, फिर भी माता का विशेष दायित्व रहता है। जिसको माँ सम्भाल लेती है, वह व्यक्ति जीवन मे कभी नही भटकता। परिवार मे यदि पारस्परिक प्रेम, विश्वास, सद्भावना, सहिष्णुता, भाईचारा, स्नेह नही, तो वह घर नही कहलाता। **घर परिवार से अगर व्यक्ति सुधर गया, तो समाज व देश भी सुधर जाता है। जो घर से प्रशिक्षण न ले पाया, वह अपूर्ण ही रह जाता है।**

इसके लिए दस-पन्द्रह मिनट का ऐसा समय निश्चित करे, जहाँ घर के सभी सदस्य परस्पर बैठकर **मंगल पाठ का चिन्तन कर सकें।** मंगल पाठ के पश्चात् घर के **सभी सदस्य अपने से बड़ों के चरणों में वन्दन करें।** चरण वन्दन करने से परस्पर हुए मन-मुटाव अपने आप दूर हो जाते है और वडो का आशीष भी मिल जाता है।

ये कितने दूध के धुले हैं?

लघु कथाएँ –(१) एक आदमी ने कहा – 'कितना खराब जमाना आया है कि मैं बस मे यात्रा कर रहा था। मैंने देखा कि मेरी अटैची गायब है। लोगो की कितनी नीच मनोवृत्ति है।' उसके साथी ने पूछा – 'क्या अटैची मे जोखम थी अर्थात् क्या रुपये या कीमती सामान था?' उसने कहा 'अटैची तो मुझे रेल मे पडी मिली थी। भीतर क्या था, मुझे ज्ञात नही।'

(२) एक गाँव मे चौपाल पर बैठे कुछ लोग आपस मे गपशप कर रहे थे। उनमे से एक पुरुष बोला – 'आजकल किसी भी दफ्तर मे बाबू-अधिकारी सभी बिना रिश्वत लिए कोई काम ही नही करता है। बडा खराब जमाना आ गया है।' दूसरे ने उसी पुरुष से पूछा – 'मैंने सुना है, तुम्हारे बेटे की नौकरी लग गई है।' वह पुरुष बोला – 'हाँ तुमने सही सुना है। अभी शुरू मे वेतन तो कम है, मगर ऊपर की आमदनी अच्छी हो जाती है, बड़े मजे का पद मिला है।'

(३) एक पुरुष अपनी पत्नी को बड़ी बेरहमी से पीट रहा था। पत्नी ने जब प्राण संकट मे देखे, तो सहायता के लिए पडौसी को पुकारा। पत्नी की करुण पुकार सुनकर आस-पड़ौस के लोग आ गए। लोगो ने पूछा – 'क्या बात है?' पति गुस्से मे बोला – 'यह औरत बेवफा है, झूठी है, चरित्रहीन है। मैं आज तो इसका काम-तमाम कर दूंगा। मैं इसे जिन्दा नही छोड़ूँगा।' एक पडौसी बोले – 'अरे भाई! इसकी चरित्रहीनता का तुम्हारे पास क्या प्रमाण है? इस बेचारी पर तुम इतना बडा आरोप किस आधार पर लगा रहे हो?' पति बोला – 'मेरे पास इसका पक्का आधार है। आज यह पूरी रात घर मे गायब रही। सुबह जब मैंने पूछा – कहाँ थी आप? तो एकदम सफेद झूठ बोल गई। कहती है कि – मैं अमुक सहेली के घर ठहर गई थी।' जबकि यह उस सहेली के यहाँ थी ही नही। कहीं और मुँह काला करा रही थी। पडौसियो ने कहा – 'तुम्हें कैसे मालूम कि यह सफेद झूठ बोल रही है।' पति बोला – 'मैं स्वयं इसका सबूत हूँ। यह जिस सहेली का नाम ले रही है, उसके घर तो मैं स्वयं उसके साथ सारी रात रहा हूँ।'

(४) एक कमरे मे मालिक बैठा हुआ है। सामने फर्श पर एक कांच का गिलास रखा हुआ है। सामने से नौकर आया और पैर की ठोकर से गिलास फूट गया। मालिक नौकर पर उबल पडा, गुस्से मे कहा – 'अबे अंधे! दिखता नही है क्या? आसमान मे देखकर चलता है क्या?' दूसरी बार मालिक की ही ठोकर से वही गिलास फूट जाता है, तब भी मालिक काम कर रहे नौकर को गुस्से मे कहता है – 'बेवकूफ! तुझे इतनी भी तमीज नहीं कि गिलास कहाँ रखना।'

"दूसरों पर दोषारोपण करने वाले, जरा अपने अंतरंग में झाँककर तो देखें कि वे कितने दूध के धुले हैं, कितने गहरे पानी में हैं।"

संन्यासी को चारित्र बोध यूँ हुआ!

लघु कथा – एक गॉव मे एक संन्यासी ठहरे हुए थे। प्रतिदिन गॉव के स्त्री-पुरुष दर्शन के लिए आते थे। संन्यासी तांत्रिक क्रिया के भी जानकार थे। गॉव मे एक महिला जो विशेष सुन्दर थी, वह भी संन्यासी के पास दर्शन लाभ हेतु आया करती थी। संन्यासी उस पर मुग्ध हो गए। संन्यासी उसे बातचीत मे काफी समय देते थे। महिला इस बात को भॉप गई थी। एक दिन संन्यासी ने महिला को एक विशेष समय पर आने का आग्रह किया, उस समय मे गॉव का कोई भी भक्त नही आता था। महिला ने आना स्वीकार कर लिया। दूसरे दिन महिला निर्धारित समय पर संन्यासी के आश्रम पर पहुँची।

महिला वैसे ही सुन्दर तो थी ही, फिर भी उस दिन उसने सोलह सिंगार किया। सुन्दर से सुन्दर वस्त्र व जेवर पहने तथा साथ मे पानी का एक कलश लेकर आई। संन्यासी के कमरे मे प्रवेश करते ही उसने जान-बूझकर ठोकर खाने का अभिनय किया तथा कलश का सम्पूर्ण पानी कच्चे ऑगन मे ढोल दिया। ऑगन गारे मिट्टी का होने से कीचड जैसा बन गया। वह महिला तुरन्त गीली जमीन पर बैठ गई। संन्यासी आश्चर्य चकित हो बोले – अरे! अरे! यह क्या किया, सब कपड़े खराब हो गए। महिला बोली– 'संन्यासीजी मेरे कपडे जो नाशवान है, इनके खराब होने मे आपको असीम वेदना हो रही है, किन्तु आपका संन्यास तो कपडो से लाखो-करोडो गुना बहुमूल्य है, उस ओर आपका ख्याल क्यो नही गया? संन्यासी को यूँ चारित्र बोध हुआ। महिला को माता रूप मानकर उसे बिदा किया। संन्यासी की ऑखो से पश्चात्ताप की गंगा बह निकली।' उन्होने पाप दोष का प्रायश्चित लिया तथा शुद्ध हुए। **ॐ शान्ति! ॐशान्ति!! ॐशान्ति!!!**

सन्तोष, सुख का कारण; असन्तोष, दुःख का कारण

दूध कम था। मॉ ने अपने दोनो बेटो को आधा-आधा गिलास दूध दिया।
एक की नजर गिलास के दूध पर थी, संतोष था।
गटागट खुशी-खुशी पिया और स्कूल चल दिया।
दूसरे की नजर गिलास के खाली भाग पर थी, असंतोष था।
चिल्लाया गिलास खाली क्यो?
गिलास उठाई और फेक दी।
बगैर दूध पिये ही स्कूल चल दिया।
जिसकी दृष्टि भाव पर, जो संतोषी, वह सुखी।
जिसकी दृष्टि अभाव पर, जो असंतोषी, वह दुःखी।
चाहे कितनी भी उपलब्धि हो,
जब तक कमी अनुभव होगी, संतोष नहीं होगा; दुःख ही मिलेगा, सुख नही।

हाय री शराब

एक अंधविश्वासी पुरुष जो दुःखी जीवन बिता रहा था, एक ढोंगी तांत्रिक के पास जा पहुँचा और उसके सम्मुख अपनी व्यथा प्रकट करी। तांत्रिक बोला – "बच्चा, तुम तो बहुत जल्द मरने वाले हो।" पुरुष तनिक घबरा गया और उन्ही से मृत्यु से बचने का उपाय पूछा। तांत्रिक बोला – "उपाय तो है, मगर तुम करो जब ना।" पुरुष ने आग्रह किया– "आप बताइये तो सही – मै जरूर पालन करूँगा।" तांत्रिक बोला – "तुम्हारी पत्नी की हत्या कर दो, इससे तेरा जीवन बच जायेगा।" मगर वह पुरुष तैयार नही हुआ। उसने दूसरा कोई उपाय बताने की विनती करी। तांत्रिक ने कहा – "अगर तुम पत्नी को जान से मार नही सकते, तो जाओ तुम्हारी माँ को मार डालो। इससे भी तुम्हारा मरना टल सकता है।" मगर पुरुष इस पर भी तैयार नही हुआ, वह पुन. गिड़गिड़ाया और कोई तीसरा उपाय बताने का अनुग्रह किया।

तांत्रिक तनिक नाराज होता हुआ बोला– अब यह तीसरा और आखरी उपाय बता रहा हूँ , यदि इसका भी पालन नही किया, तो तुझे मरने से कोई बचा नही सकता। तीसरा उपाय बताया – "कलाली जाकर शराब का एक पेग चढा लो।"

पुरुष ने वैसा ही किया। शराब पीकर घर पहुँचा। मुंह से बदबू आ रही थी। पत्नी समझ गई। उसने पति को बहुत भला-बुरा कहा। पति वैसे ही उग्र स्वभावी तो था ही, फिर शराब का पेग चढा रखा था। शराब को अपना रंग दिखाना ही था। पति ने उठाया डण्डा और बेरहमी से पत्नी को पीटना चालू कर दिया। पत्नी बुरी तरह घायल होकर जमीन पर गिर पडी। उसी वक्त उस व्यक्ति की माँ ने कमरे मे प्रवेश किया और यह दृश्य देखकर बहुत क्रोधित हुई और अपने पुत्र के गाल पर लगातार तमाचे जड़ने लगी।

बेटा जो शराब के नशे मे धुत था, उससे गम खाने की उम्मीद करना व्यर्थ थी। मे बेटे ने भी माँ पर हाथ उठा दिया और उसी डण्डे से माँ को भी पीट दिया। वह डण्डा सिर पर लगा और अन्दर की नस फट गई। माँ तत्काल मर गई। इधर पत्नी को अस्पताल ले जाने लगे, मगर उसने रास्ते मे ही दम तोड़ दिया। **हाय री शराब! व्यक्ति जो निकृष्ट कार्य नहीं करना चाहता था, शराब ने वे दोनों कार्य करवा दिये। अब व्यक्ति जेल की सलाखों के अन्दर बैठा हुआ, अपने किये पर पछताया कर रहा है। मगर अब पछताने से क्या लाभ है?** ॐ शान्ति! ॐशान्ति!! ॐशान्ति!!!

सात कुव्यसनों से सदा दूर रहिये –

(१) जुआ (२) मांस भक्षण (३) वेश्यागमन (४) मद्यपान

(५) शिकार (६) चोरी और (७) पर-स्त्री गमन।

वाणी का सौन्दर्य

मनुष्य के शरीर के सौन्दर्य की अपेक्षा वाणी की मिठास अधिक मूल्यवान होती है। चेहरा कितना ही सुन्दर है, किन्तु वचनों में मिठास नहीं हो, तो वह सुंदरता किसी काम की नहीं। घर आए किसी मेहमान को अच्छा खिलाएँ-पिलाएँ, फिर पूछे – 'क्यो खाना कैसा लगा? उत्तर तो अच्छा ही मिलेगा, किन्तु अपनी लालीबाई (जीभ) यदि यह बोल दे कि - 'ऐसा खाना तुमने कभी अपने बाप जमाने भी खाया था?' कहिये। उस पर कैसी गुजरेगी? शस्त्र-प्रहार से होने वाले जख्म की अपेक्षा शब्द-प्रहार का जख्म भयंकर होता है। **जीभ भले ही तीन इंच लंबी है, मगर वह छह फुट के आदमी को खत्म कर सकती है।**

जिह्वा बडी चटोरी है। वह खाने मे तो मीठा-मीठा माँगती है, लेकिन बोलती कडवा है। आज मनुष्य की वाणी और कठोर होती जा रही है। इसीलिए मनुष्य के जीवन मे पापो का अन्तहीन सिलसिला जारी है। ऐसा लगता है, मनुष्य मीठा बोलना भूल गया है। वाणी को वीणा का काम करना चाहिए, बाण का नही। क्योकि वाणी तीखे बाण की तरह हो जाए, तो जीवन मे महाभारत की रचना सुनिश्चित हो जाती है और यदि वाणी वीणा के समान हो, तो जीवन मे संगीत का अमृतमयी झरना बहने लगता है।

मधुर और मीठी वाणी व्यक्ति के जीवन में निखार लाती है। जबकि कटु वाणी क्लेश और दु ख का कारण बनती है। द्रोपदी ने दुर्योधन से इतना ही तो कहा था कि अंधे का पुत्र अंधा ही होता है और इतनी-सी कटु वाणी ही महाभारत के युद्ध का कारण बन गई। **जिह्वा का घाव तलवार के घाव से भी अधिक बुरा होता है। ऐसा सत्य वचन भी नहीं बोलना चाहिए, जो कलह-क्लेश पैदा कर दे। शब्दों का मूल्य मोतियों से भी ज्यादा होता है। याद रखें कमान से छूटा तीर और जबान से निकला वचन वापिस लौटकर नहीं आता।**

रसना (जीभ) के दो काम हैं – एक चखना और दूसरा बोलना। बोलना गलत नहीं है, बकना गलत है। वाणी वह चुम्बक है, जो मनुष्य को मनुष्यता के प्रति आकर्षित करती है। वाणी वह खट्टा पदार्थ भी है, जो मैत्री के दूध को फाड देती है। वाणी वह एक्सरे मशीन है, जो अंतरंग के फोटो निकालती है। वाणी मे इतनी शक्ति है कि बिगडते हुए काम को सुधार भी सकती है और बनते हुए काम को बिगाड भी सकती है। वाणी से मनुष्य की औकात का पता चलता है। वाणी मनुष्य के हृदय की परिचारिका होती है।

वाणी से ही व्यक्ति सभी के द्वारा सत्कार और प्यार पाता है और वाणी से ही तिरस्कार और जेल तक की हवा खानी पड जाती है। वाणी से ही सुयश और वाणी से ही अपयश मिलता है। वाणी से ही मित्र और वाणी से ही दुश्मन बनते है। वाणी से अमृत बरसना चाहिए, विष नही। बोलते समय अपने मुँह से अपनी प्रशंसा के शब्द नही निकले। अपनी बात को थोडे शब्दो मे कह दे। ऐसा बोले कि मानो वाणी मे शक्कर घोल दी हो

❑ कम बोलें ❑ धीरे बोलें ❑ सोचकर बोलें ❑ प्रिय बोलें ❑ मौन रहें

सुवासित पुष्प

महावीर बनो : जागा हुआ, महाउद्यमी, महाउपसर्ग मे धैर्य व वीतरागता की अनुभूति मे रमने वाला मानव 'महावीर' होता है। महावीर नही कहता कि - 'तुम मेरे भक्त ही बने रहो, मेरे मंदिर ही बनाओ, मेरी पूजा आरती ही करो।' महावीर कहता है - **'तुम मेरे जैसे बन सकते हो। कठिन से कठिन परिस्थिति में भी मन को शान्त करो और मेरे जैसे बनो।'** महावीर ने किसी की पूजा-आरती नही की। मन को शान्त किया और महावीर बने। तुम भी महावीर के पथ पर चलो।

महावीर नही कहता – 'मेरी वाणी के शोध कार्य मे ही लगो।' **महावीर कहता है – 'तुम मेरी वाणी के अनुरूप अपने जीवन को ढालो।** फिर तुम्हारी वाणी मेरी वाणी होगी। तुम्हारी वाणी भी शास्त्र होगी। तुम्हारे मुँह से निकलने वाला प्रत्येक शब्द, शास्त्र का शब्द होगा। फलतः तुम शास्त्रो के पृष्ठ उलटने की खटपट से बच जाओगे।' **महावीर बनो।**

"मक्खन मे फँसे हुए बाल को निकालना सहज है, किन्तु सूखे हुए गोबर के कडे मे फँसे बाल को निकालना बडा कठिन है। **ज्ञानी के शरीर में रहने वाला जीव, मक्खन के गोले में फँसे बाल जैसा है। वह मृत्यु समय सहजता से प्राण छोड़ देता है, लेकिन अज्ञानी मृत्यु समय रोता और चीखता है,** क्योकि उसके प्राण सांसारिक वासनाओं मे अटक जाते है।"

"परमात्मा एक परीक्षक है! यह दुनिया जिसमे हम रहते है, एक परीक्षा भवन है। अपना जीवन उत्तर-पुस्तिका है। समय केवल तीन घंटे है, प्रश्न-पत्र बंट चुके है। बालपन खत्म होते ही पहला घंटा बज चुका है। जवानी खत्म होते ही दूसरा घंटा बज चुका है। **अब शीघ्र ही तीसरा घंटा मृत्यु का बजने वाला है, हमें फेल होना है या पास?" अपने हाथ में है।**

"मित्रो! यदि आप किसी बीमार हितैषी अथवा रिश्तेदार से मिलने अर्थात उनकी सुख-साता पूछने जा रहे है, तो वहाँ चाय, नाश्ता व भोजन कुछ भी ग्रहण न करें, बल्कि उन्हे भी प्रेरणा देकर यह व्रत लेने के लिए राजी करें। यदि यह क्रम आगे से आगे चलता रहा, तो निश्चित मानो, परिवार-समाज मे एक क्रांति आ जायेगी।"

"मोक्ष न दिगम्बरावस्था ही मे है, न श्वेताम्बरावस्था ही मे है, न तर्क जाल मे है, न तत्त्ववाद ही मे है और न स्वपक्ष का समर्थन करने ही मे है। वस्तुतः **मोक्ष है – विषय कषायों (क्रोध, मान, माया, लोभ) से मुक्त होने में, पाँचों इन्द्रियों को साधने में, ममत्व तोड़ने में, समता धारण करने में और मन को शान्त करने में।"**

प्रभु-भजन

हे सखे!
मौत की पदचाप सुन, क्यो थर-थर कॉप रहा?
मौत को पीठ दिखा, क्यो किधर भाग रहा?
तू तो अजर-अमर है अविनाशी, और मौत तेरे चरणो की दासी।
तो देह का विसर्जन, जीव की इति नही।
मृत्यु तो निश्चित है, पर निश्चित तिथि नही।
तो मृत्यु की बदौलत ही तो तू धर्म-पुण्य करता है,
मृत्यु की बदौलत ही तो तू पापो से डरता है।
मृत्यु की बदौलत ही तो तू नरक पार करता है,
मृत्यु की बदौलत ही तो तू नये रूप धरता है।
तो मृत्यु शत्रु नही, मित्र है, सखा है कल्याणकारी।
तो आज न्यौता सखे! मान लो मौत का,
जिन्दगी से बहुत प्यार तुम कर चुके,
जिन्दगी ने तुम्हे जिन्दगी भर छला,
अनुभव यह स्वयं कई बार कर चुके।
तो रहो सजग मौत के स्वागत मे,
और आगमन की निगरानी रखो कडी,
जैसे राम के स्वागत मे शबरी थी पुष्प संजोये खडी।
और मना अखंड उत्साह से मृत्यु-महोत्सव,
जिसे देख मौत को भी मौत आ जाये,
और मुक्ति भी करे तेरा आलिंगन।
रे 'चपल मन' कर तू प्रभु का भजन।।

कोल्हू का बैल : जिस प्रकार बैल ऑखे बॅधी होने के कारण इधर-उधर देखे विना निरंतर कोल्हू चलाए जाता है, उसी प्रकार मनुष्य भी लोक-परलोक, नीति-अनीति, धर्म-अधर्म या पाप-पुण्य का विचार किए बिना ही गृहस्थी के कार्यो मे जुटा रहता है। अन्तर दोनो मे यही है कि बैल अपनी ऑखो पर अनिच्छा से पट्टी बॅधवाता है और मानव स्वेच्छा से अपने ज्ञान-चक्षु बंद किए रहता है।

ज्ञानी : "हजारो पुस्तके पढने वाला ही ज्ञानी नही होता, सैकडो पुस्तके ही ज्ञानी नही होता, विश्व को जानने वाला भी ज्ञानी नही होता।

अपनी आत्मा को जानने वाला ज्ञानी होता है।"

आत्म भजन

सब कुछ तज के द्वार पे तेरे, सब कुछ तज के द्वार पे तेरे।
मै आया मेरे रामजी ओ हो! मै आया मेरे रामजी।
अब तो दरश दिखा दो मेरे रामजी मुझको मुझसे मिला दो मेरे रामजी।
सब कुछ तज के द्वार पे तेरे, मै आया मेरे रामजी॥
मिट्टी मे मिल जायेगी काया का क्या मोल।
एक नित्य है – आत्मा! मन की आँखे खोल।
रूप के माया जाल मे उलझा ये सारा संसार।
लेकिन किसने जाना सच्चा रूप है, तन के पार।
सच्चा रूप है, तनके पार! सच्चा रूप है, तन के पार।
सच्चा रूप दिखा दो मेरे रामजी, मुझको मुझसे मिला दो मेरे रामजी।
सब कुछ तजके द्वार पे तेरे, मै आया मेरे रामजी॥
अंधियारे मे भटक रहे है, सब मूरख इन्सान।
अरज है मेरी दे दो सबको, उजियारे का दान।
मन मे ज्योत जगा दो मेरे रामजी, मुझको मुझसे मिला दो मेरे रामजी।
सब कुछ तजके द्वार पे तेरे, मै आया मेरे रामजी॥
ओ हो! मै आया मेरे रामजी, अब तो दरश दिखा दो मेरे रामजी।
मुझको मुझसे मिला दो मेरे रामजी।
सब कुछ तज के द्वार पे तेरे, मै आया मेरे रामजी॥

रामजी = आत्माराम = स्वयं

◇◇

◇ किसी से हित की आशा नही रखनी चाहिए। कोई किसी का हित नहीं कर सकता।
◇ किसी पर अहित का दोष नही मढना चाहिए। कोई किसी का अहित नही कर सकता।
◇ **हित या अहित होने का है, इसलिए होता है। दूसरा उसमें निमित्त बनता है।**
◇ **निमित्त को कर्ता मानना भूल है।।**

◇◇

◇ **सुविधा, पूजा, सम्मान, ख्याति और पद के आकर्षण अध्यात्म पथ के काँटे है।**
◇ जिसे आध्यात्मिक प्रगति इष्ट है, उसे इन काँटो को कुचलकर चलना चाहिए
◇ अन्यथा आध्यात्मिक प्रगति का स्वप्न, स्वप्न ही बना रहेगा॥

◇◇

आत्म-गीत

यदि भला किसी का कर न सको, तो बुरा किसी का ना करना। (दो बार)
घर मे जो न हो अमृत प्याला, तुम जहर कभी ना पिला देना। -- **यदि भला** --
यदि मधुर सत्य ना बोल सको, तो झूठ कठोर भी मत बोलो। (दो बार)
यदि मौन सदैव जो रख न सको, तो विष भी वचनो मे मत घोलो।
बोलो तो ---! बोलो तो, पहले सोच भी लो, फिर मुखडे का ताला खोलो। --**यदि भला** --
यदि घर न किसी का बॉध सको, तो झोपडियॉ ना गिरा देना। (दो बार)
यदि घाव पर मरहम लगा न सको, तो तुम नमक कभी ना छिडक देना।
यदि दीपक बनकर जल न सको, तो अंधियारा मत कर देना। ---- **यदि भला** ----
यदि फूलो-सा कोमल बन न सको, तो कॉटे बनकर मत रहना। (दो बार)
यदि मदद किसी की कर न सको, तो दिल न किसी का दुखा देना।
यदि देव ---! यदि देव, कभी तुम बन न सको, तो दानव बनकर मत रहना। ---**यदि भला** --
यदि साधु-संत तुम बन न सको, तो अच्छा-सा इंसान बनो। (दो बार)
यदि त्याग तपस्या कर न सको, तो सच्चे मानव तुम बन के रहो।
धर्म ----! धर्म मंत्र का जाप सदा तुम जीवन मे करते रहना। ----- **यदि भला** ---

"सब कुछ सीखा। अपने में रहना नहीं सीखा, तो सीखने जैसा कुछ भी नही सीखा।"

ममत्व को तोड़ना है

एक बार महात्मा ईसा अपने शिष्य मेथ्यू के साथ पदयात्रा करते हुए जा रहे थे। बीच मे मेथ्यू का गॉव आया। वहॉ समाचार मिला कि मेथ्यू के पिता का आज ही निधन हो गया है। मेथ्यू ने ईसा के सामने देखा। ईसा ने कहा –'मेथ्यू! इस गॉव मे यदि कोई दूसरा मनुष्य मरा होता, तो क्या तू शोक मग्न होता? नही होता न? तेरे मन मे, अभी ये पिता थे – ऐसा ममत्व पडा है, इसलिए तो शोक मग्न बना। उस ममत्व को तोडना है। मेथ्यू सुनता रहा। सच्चा शिष्य गुरु के सामने दलील नही करता है। ईसा वहॉ नही रुके। वे पास के गॉव चले गए। मेथ्यू ईसा के साथ ही चला। दूसरे गॉव जाकर ईसा ने मेथ्यू को कहा – 'तू गॉव जा और पिता का क्रिया-कर्म करके आ जा।' मेथ्यू चला गया। दूसरे शिष्य ने पूछा – 'आपने ऐसा क्यो किया?' ईसा ने कहा – 'उस वक्त मैने मेथ्यू के मोह को दूर किया और यहाँ उसको कर्तव्य – पालन की आज्ञा दी। **मनुष्य को मोह-रहित होकर कर्तव्यों का पालन करना चाहिये।**' मेथ्यू ने दोनो समय ईसा के सामने तर्क नही किया। वह ईसा को गुरु जो मानता था। [illegible] मे [illegible] विश्वास था। ■ जैन संत अपने पिता के क्रिया-कर्म मे भी नही जा[illegible]

आत्मबोध

कभी प्यासे को पानी पिलाया नहीं,
बाद अमृत पिलाने से क्या फायदा? । टेर ।

कभी गिरते हुए को उठाया नही,
बाद आँसू बहाने से क्या फायदा?.......................... .कभी प्यासे .

मै मंदिर गया, पूजा आरती की,
पूजा करते हुए ये ख्याल आ गया
कभी माँ-बाप की, सेवा की ही नही,
सिर्फ पूजा ही कर लूँ, तो क्या फायदा? . कभी प्यासे .

मै उपाश्रय गया, गुरुवाणी सुनी
गुरुवाणी को सुनकर ख्याल आ गया
मनुष्य कुल मे जन्मा, मनुष्य बन न सका
सिर्फ मनुष्य कहलाने से क्या फायदा?.................... ..कभी प्यासे . .

मै काशी, बनारस, मथुरा गया,
गंगा नहाते हुए ये ख्याल आ गया
तन को धोया मगर, मन को धोया नही
सिर्फ गंगा नहाने से क्या फायदा?. ... . ..कभी प्यासे .

मैने दान दिया, मैने जप-तप किया,
दान करते हुए ये ख्याल आ गया
कभी भूखे को भोजन कराया नही
दान लाखो का कर दूँ, तो क्या फायदा?.................... कभी प्यासे .

उसी को मिलते हैं भगवान

सम्यक् दर्शन, सम्यक् संयम, सम्यक् होवे ज्ञान,
उसी को मिलते है भगवान, उसी को मिलते है भगवान।
चाँद-सा निर्मल, फूल सा कोमल, उज्ज्वल सूर्य समान।। उसी को मिलते है---

डसे न जिसको क्रोध का काला, पिये नही जो मद का प्याला,
इस पर नही माया का जाला, जले न जिसके लोभ की ज्वाला,
शान्त धैर्य हो, साम्य चरण हो, निर्लोभी गुणवान।। उसी को मिलते है ---

ईश्वर मिले न गंगा नहाये, ईश्वर मिले न तीर्थ जाये,
ईश्वर मिले न राख लगाये, ईश्वर मिले न धूनि रमाये,
भक्तिवान हो, त्यागवान हो, सदाचार का ध्यान।। उसी को मिलते है ---

जिसका करुण निर्झर मन हो, जिसके अमृत मने वचन हों,
जिसके निश्चल शांत नयन हो, सत्य प्रेम ही जिसका धन हो,
केवल मुनि, ज्ञान ज्योति का पाये वही वरदान।। उसी को मिलते है ---

उपसंहार

प्रस्तुत पुस्तक मे जीवन ओर मृत्यु के सभी प्रमुख-प्रमुख तथ्यो का विश्लेषण किया है। मृत्यु क्या है? क्यो आती है? क्या प्रेरणा देती है? हमने इसमे समझा है। साधारण आदमी मौत से घवरा जाता है उसके प्रमुख कारण है – **अपने शरीर, घर, कुटुम्बी, धन-संपत्ति, जमीन-जायदाद, पद, सत्ता आदि के प्रति अत्यधिक मोह, मूर्छा और आसक्ति है।**

मृत्यु की कला सीखने का मतलब जीने की कला सीख लें। जीवितकाल ही कार्यकाल है, मृत्यु तो विश्रांतिकाल है। मृत्यु से तो मनुष्य को सुन्दर प्रेरणा लेने की है।

एक बार अपने को पढ़ें। जीवन को समझने के लिए, अपने भीतर बैठे परमात्मा (आत्मा) को समझने के लिए किसी वेद, पुराण, उपनिषद, ग्रन्थ पढ़ने की विशेष जरूरत नहीं, पर एक बार अपनी मृत्यु को पढ़ने की, मृत्यु-शास्त्र को पढ़ने की, स्वयं को पढ़ने की, आत्म-कथा पढ़ने की जरूरत है। हमने गाँधी, विवेकानन्द, नेहरू, टालस्टाय की आत्मकथा पढी होगी। अब एक बार एकांत मे बैठकर अपनी आत्मकथा को भी पढ डाले। वस। जीवन महक उठेगा। गाँधी और नेहरू की आत्मकथा पढते-पढते जो क्रांति घटित नही हुई होगी, वह क्रांति अपनी कथा पढने से घटित हो जायेगी।

आत्मकथा पढ़ने से तात्पर्य अपने मन को पढ़ने से है, मन में उठने वाले विचारों को पढ़ने से है, मन के सागर में आने वाली लहरों को देखने से है। अपने मन पर निगरानी रखिये कि कही वह प्रभु-पथ से भटक न जाये। कही वह क्षुद्र स्वार्थो की खातिर धर्म, न्याय और नीति को न छोड बैठे, पैसा और पद-प्रतिष्ठा के लिए कुछ भी करने को तैयार न हो जाये। हिंसा और पाप के मार्ग पर न उतर जाये। कर्तव्य और सदाचार से दूर न हटे। अपने मन को पढते रहना ही अपनी आत्मकथा को पढना है। **मन को पाप में शान्त करना, पाप से हटाना और धर्म में सक्रिय करना, एक अलौकिक क्रांति है। जो उसमें सफल होता है, वह क्रांतिकारी होता है। दुनिया की सब क्रांतियों पर पानी फिरता है, किन्तु इस क्रांति पर कभी पानी नहीं फिरता। वस्तुतः यह एक शाश्वत क्रांति है।**

बस। मन पर ध्यान रखे। कपडे विगड जाये, तो कोई चिता की वात नही, भोजन का स्वाद बिगड जाये, तो कोई चिन्ता की बात नही, व्यापार विगड जाये तव भी कोई फिक्र नही, लेकिन **अपने दिल को विगड़ने न देवें, क्योंकि इस दिल में हमारा दिलवर परमात्मा (आत्मा) रहता है।** इसलिए अपना दिल उस परमात्मा को दे दे, फिर हमे कभी दिल का दौरा नही पड सकता। फिर तो हम हँसते-हँसते मृत्यु का आलिंगन करेंगे। **एक ज्ञानी और एक अज्ञानी में यही तो अंतर है कि ज्ञानी मृत्यु के समय भी हँसता है और अज्ञानी जिंदा रहते हुए भी रोता है। ज्ञानियों की तरह जीएँ और यदि मृत्यु के आने की आहट भी सुनाई दे, तब भी भयभीत होने की जरूरत नही, अपितु ऐसे क्षणों में इन प्रेरक पंक्तियों को गुनगुनाएँ -**

दवे-दवे पॉव मौत आती है, आने दो,
आहट मिल जाये, तो मन मत घवराने दो।
निश्चित ही मृत्यु से जीव का अन्त नही,
प्राण मुखर होते हैं, देह वदल जाने दो॥

खेल-खेल मे जव, खिलौना टूट जाता है,
वालक रो देता है, पर ज्ञानी मुस्कुराता है।
आत्मा के जौहरी को इसका कुछ दर्द नही,
कौन जन्म लेता है कौन मृत्यु पाता है॥

मानव तुम, सॉसो को इतना मत प्यार करो,
मानव तुम, देह को न इतना दुलार करो।
सांसें छल जायेगी किस क्षण विश्वास नही,
आत्मा अनश्वर है, उसका श्रृंगार करो॥

आयु का आधा क्रम सोने मे वीत गया,
वचपन संग वीता कुछ यौवन संग रीत गया।
अंग-अंग शिथिल हुए, प्रभु तक ना दृष्टि गई,
भव-भव के भ्रमण हेतु, फिर से यह जीव गया॥

मंगलमय जीवन है, राग-द्वेष मत घोलो,
कौन हो? कहॉ से आये? उत्तर दो, कुछ वोलो।
हर युग के मानव की गाथा है याद तुम्हे,
काया मे शाश्वत हो कौन जिया? कुछ वोलो॥

मित्रो! जरा ख्याल करे, **अपना जीवन पल-पल मिट रहा है।** आयु का तेल, देह **के दीये में जलकर शनैः-शनैः घट रहा है।** अपनी जिन्दगी होते-होते मृत्यु की ओर कदम वढ़ा रही है। मृत्यु अपने पास आये, उससे पहले मृत्यु को मात [illegible] से बाहर निकल आना और आत्मा की अमरता को आत्मसात कर लेना - यही अपने [illegible] श्रेष्ठतम साध्य है। अव तक हम मोह से औरो के लिए जीते रहे, अब समय आ [illegible] है कि हम विवेक से अपने लिए सोचे। अपने जीवन के कल्याण और निर्वाण के लिए [illegible] ठोस साधना करे, ताकि मृत्यु को सुखद, सार्थक और खुशनुमा बनाया जा सके। [illegible] **देह में वैठे पंछी ने पंख फैला लिये हैं, प्राणों का पंछी उड़ान भरने की तैयारी कर रहा है। जल्द ही उड़ान भर लेगा और फिर हम हाथ मलते रह जायेंगे। प्राण-पखेरू उड़े, उससे पहले अपने चरित्र को ऊँचा उठा लें, ताकि अपना जीवन धन्य-धन्य हो जाये। हर दिन को आखिरी दिन और हर रात को आखिरी रात मानकर जियें। हर अगला दिन पुनर्जन्म है। धार्मिक होने के लिए अंतिम दिन की प्रतीक्षा न करें। आज अभी और इसी वक्त शुभ कर डालें। ॐ शान्ति! ॐ शान्ति!! ॐ शान्ति!!!**

दुर्लभ मानव भव को सफल बनाने हेतु अनूठी पहल

प.पू. साधु-साध्वी भगवंतो के अनेको ग्रंथो का सार मात्र एक पुस्तक मे ।

पुस्तक – **जी हाँ ! हम भी भगवान बन सकते हैं**

इस एक ही पुस्तिका के प्रथम खण्ड में मानव जीवन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण विषयों का विवेचन तो दिया है, साथ ही द्वितीय खण्ड में आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत शिक्षाप्रद लघु कथाओं का संकलन किया है तथा तीसरे खण्ड में जैन धर्म के नवतत्वों का दिग्दर्शन कराया गया है।

जिज्ञासु पाठकगण इसे खरीदकर पढ़ें, चिन्तन करें एवं विषय वस्तु को अपने जीवन में उतारें तथा अपने अन्य स्वधर्मी भाई-बहनो को भी पढ़ने दीजिये, फिर जिससे खरीदी उसे अथवा हमें वापिस लौटाकर पूरे दाम वापिस देने का भी प्रावधान रखा गया है।

◇◇

प्राप्ति स्थान

संघवी बुक स्टॉल
२३०, खजूरी बाजार, इन्दौर - २
☎ : ४३१६८०, ५३४०५१

अल्प मूल्य
४०/- मात्र

संकलन एवं सम्पादन

समरथमल संघवी 'अर्हन्त भक्त'